njLFk f'k{kk fun'kky;

DIRECTORATE OF DISTANCE EDUCATION

tEeu fo'ofo|ky;

University of Jammu

tEeu

Jammu

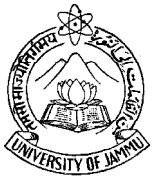

पाठ्य सामग्री

STUDY MATERIAL

एम॰ ए॰ हिन्दी

M.A. (HINDI)

लम्बी कविता

2019 onwards

DR. ANJU THAPPA
Course Co-ordinator

पाठ्यक्रम संख्या : **HIN-404** सत्र–चृतुर्थ

COURSE CODE : HIN-404 **SEMESTER-IV**

आलेख संख्या – 1 से 14

LESSON NO. 1- 14

DR. RAJNI BALA
Course Contributor
Associate Professor
Department of Hindi, University of Jammu, Jammu

इस पाठ्य सामग्री का रचना स्वत्व/प्रकाशनाधिकार दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू –180006 के पास सुरक्षित है।

http:/www.distanceeducationju.in
Printed and Published on behalf of the Directorate of Distance Education, University of Jammu, Jammu by the Director, DDE, University of Jammu, Jammu.

विषय सूची

आलेख सं.	विषय	पृष्ठ संख्या
1	लम्बी कविता की पृष्ठभूमि	1–9
2	लम्बी कविता : अर्थ, परिभाषा, तत्व	10–25
3	लम्बी कविता और काव्य की अन्य विधाएँ	26–35
4	लम्बी कविता का ऐतिहासिक विकास	36–48
5	'राम की शक्ति पूजा' का केन्द्रीय विषय और शिल्प	49–62
6	'अंधेरे में' का केन्द्रीय विषय और शिल्प	63–74
7	'हरिजन गाथा' का केन्द्रीय विषय और शिल्प	75–85
8	'टुण्डे आदमी का बयान' का केन्द्रीय विषय और शिल्प	86–94
9	'ब्रूनो की बेटियाँ' का केन्द्रीय विषय और शिल्प	95–105
10	लम्बी कविता के तत्वों के आधार पर 'राम की शक्तिपूजा' की समीक्षा	106–117
11	लम्बी कविता के तत्वों के आधार पर 'अंधेरे में' की समीक्षा	118–128
12	लम्बी कविता के तत्वों के आधार पर 'टुण्डे आदमी का बयान' की समीक्षा	129–141
13	लम्बी कविता के तत्वों के आधार पर 'हरिजन–गाथा' की समीक्षा	142–153
14	लम्बी कविता के तत्वों के आधार पर 'ब्रूनो की बेटियाँ' की समीक्षा	154–161

M.A. HINDI

Course Contributor **Lesson No 1-14**

- **Dr. Rajni Bala**
  Associate Professor
  Department of Hindi
  University of Jammu, Jammu

Proof Reading and Content Editing

- **Dr. Pooja Sharma**
  Lecturer in Hindi
  DDE, University of Jammu, Jammu

© Directorate of Distance Education, University of Jammu, Jammu 2019

- All rights reserved. No part of this work may be reproduced in any form, by mimeograph or any other means, without permission in writing from the DDE, University of Jammu.
- The script writer shall be responsible for the lesson / script submitted to the DDE and any plagiarism shall be his/her entire responsbility.

- Printed by : Pathania Printers / 2019 / 1000 Books

लम्बी कविता की पृष्ठभूमि

1.0 रूपरेखा

1.1 उद्देश्य

1.2 प्रस्तावना

1.3 लम्बी कविता की पृष्ठभूमि

1.4 सारांश

1.5 कठिन शब्द

1.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

1.7 पठनीय पुस्तकें

1.1 उद्देश्य

इस अध्याय के पाठ से विद्यार्थी इस तथ्य से अवगत होंगे कि लम्बी कविता की जरूरत क्यों पड़ी? साहित्यिक, सामाजिक, राष्ट्रीय–अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर वे कौन से परिवर्तन हुए जिन्होंने लम्बी कविता को उत्पन्न करने के अवसर प्रदान किए।

1.2 प्रस्तावना

साहित्य की अनेकानेक विधाओं के होने के बावजूद एक नए काव्य माध्यम के तौर पर लम्बी कविता की आवश्यकता हिन्दी साहित्य में आधुनिक युग के साथ महसूस की जाने लगी। संवेदना की जटिलता, सामाजिक सन्दर्भों में बदलाव, साहित्यिक धरातल पर संवेदना और शिल्प के बदलते मानदण्ड के साथ गद्य और पद्य के बने–बनाये नियमों की बन्दिश से छुटकारे की कोशिश एवं अनिवार्य अभिव्यक्ति माध्यम के रूप में लम्बी कविता की जरूरत तथा पहचान इस अध्याय से संभव हो सकेगी।

1.3 लम्बी कविता की पृष्ठभूमि

मानव सभ्यता का जब से विकास हुआ है चुनौतियों का अनथक अविरल सामना उसे करना पड़ा है। साहित्य के संदर्भ में विशेषकर, आधुनिक काल में राष्ट्रीय–अंतर्राष्ट्रीय, राजनीतिक–सामाजिक घटनाचक्रों, वैचारिक सिद्धान्तों के चलते कलाकार पहली बार ऐसी संवेदना और जटिल रचना कर्म से रू–ब–रू हुआ कि साहित्य के प्रत्येक धरातल पर जैसे भाव और कला, गद्य और पद्य के बने बनाये नियम टूट गये अथवा उनमें परिवर्तन अनिवार्य हो गया। इस युगीन परिवर्तन को व्यापक धरातल पर ढ़ालने की कोशिश में लम्बी कविता सामने आयी।

लम्बी कविता की आवश्यकता

सामान्यतः लम्बी कविता के बारे में जब बात करते हैं तो एक सहज जिज्ञासा होती है कि साहित्य की विविध विधाओं और काव्य रूपों के चलन के बावजूद एक नये काव्य माध्यम के तौर पर लम्बी कविता की ज़रूरत क्यों पड़ी ? संवेदना का ऐसा कौन सा छोर और अभिव्यक्ति का ऐसा कौन सा रूप था जो अब तक ज्ञात साहित्यिक प्रकारों में 'फिट' नहीं हो सका ?

लम्बी कविता 20वीं शताब्दी में आधुनिक युग की एक आवश्यकता के रूप में उभरी, जिसका एहसास शताब्दी के प्रारम्भ में ही हो गया था अतः ऐसे काव्य माध्यम की तलाश शुरू हुई जिसमें नए जीवन विधान की संगति हो, जो परम्परागत रूप विधान की रूढ़ियों से मुक्त भी हो, जिसमें नये सत्य के साक्षात्कार की क्षमता हो और जो आधुनिक परिस्थिति और संवेदना द्वारा प्रमाणित भी हो। आधुनिकता के दबाव से जैसे–जैसे मूल्यगत संक्रमण की प्रक्रिया तेज होती गई और सामाजिक ढाँचे में परिवर्तन होता गया, वैसे–वैसे कविता के चरित्र, रचना प्रकारों, रूप विधान और संरचना में परिवर्तन आने लगे।

आज कविता का काम केवल संवेदना जागृत करना नहीं बल्कि उसके निर्माण का भी है। बाहरी ज़रूरतें आन्तरिक ज़रूरतों पर इस कदर हावी हैं कि व्यक्ति लगातार अन्दर से खोखला होता जा रहा है। 'ग्लोब' पर खड़ा होकर वह पूरी दुनिया को देख तो रहा है, किन्तु महसूस कुछ भी नहीं कर पा रहा। देखने और महसूस करने के बीच की दूरी इतनी बढ़ गयी है कि यह देखते हुए भी कि इस तथाकथित व्यवस्था में कोई पिस रहा है या पीसा जा रहा है हम क्रियाशील नहीं होते क्योंकि स्वयं को लगता है कि हम सुरक्षित हैं। निरंतर घटनाओं या हादसों के बीच रहते हुए भी, आत्मिक स्तर पर इनके अर्थों का कोई

संसार हमारे भीतर नहीं बन पाता। लम्बी कविताएं मनुष्य के बीच ऐसे ही संसार का – जिसे संवेदना कहते हैं, निर्माण कर, इन्सानियत को ज़िंदा रखने के लिए प्रयत्नशील हैं।

आधुनिक युग में मुक्त बाज़ार, उपभोक्तावाद, विज्ञापन, उपग्रह, संचार माध्यम, वैश्विक अर्थव्यवस्था आदि ने एक ऐसे परिदृश्य का निर्माण किया है कि मनुष्य की बाहरी ज़रूरतों के सामने, उसकी आन्तरिक पहचान निरस्त होती जा रही है। धैर्य, सहिष्णुता और उदारता को रौंदकर उग्रता, आक्रामकता, हिंसा, लूटखसोट जैसे नये संकल्प स्थापित हो रहे हैं। संकल्प–विकल्प विवशता में, विवेक–बुद्धि किंकर्तव्यविमूढ़ता में, अनुसंधान आपाधापी या लूटखसोट में और सम्बन्ध केवल स्वार्थ में बदल कर रह गये हैं। लम्बी कविता मनुष्य के इसी असंतुलित या घायल अन्तःकरण को संतुलित या जिंदा रखने की साधना है।

आज का दौर 'शार्टकट' का मुरीद है। साहित्यिक उर्वरा की बात करें तो प्रबन्ध काव्य की परम्परा लगभग लुप्त हो चुकी है। मल्टीमीडिया के दौर में 'फेस टू फेस' के स्थान पर 'फेसबुक' पसरी पड़ी है। सुन्दर लेखनी में लिखी भावनाओं से सराबोर चिट्ठी की जगह भाषा का व्यभिचार करती एसएमएस पद्धति हावी हो गयी है। कलम की बजाय अंगूठा महत्वपूर्ण हो गया है फिर चाहे वह किसी को दिखाना हो या मोबाइल का बटन दबाना हो। अब सवाल यह है कि 24 घण्टे को 25 घण्टे में तब्दील करने की जुगाड़ में जुटा आदमी आखिर एक बड़े काव्य रूप लम्बी कविता से कैसे जुड़ा हुआ है? अक्सर यह फतवा दे दिया जाता है कि साहित्य या पुस्तक लोगों से दूर होते जा रहे हैं। फिर लम्बी कविता क्यों दिन ब दिन धड़ल्ले से लिखी जा रही हैं ? जब इस बिन्दु पर विचार करते हैं तो लम्बी कविता की पृष्ठभूमि और प्रेरणा को समझना ज़रूरी हो जाता है।

लम्बी कविता की पृष्ठभूमि

यह सही है कि प्रत्येक युग और काव्य धारा पूर्ववर्ती युग और धारा से भिन्न होते हैं लेकिन यह भी उतना ही सच है कि उनकी सर्जना अपने पूर्ववर्तियों के कारण ही संभव होती है। लम्बी कविता का जन्म अकस्मात् किसी सहज प्रातिभज्ञान के चलते एक क्षण विशेष में नहीं हुआ बल्कि इसके उद्भव के पीछे साहित्य की पूरी परम्परा, समकालीन युग बोध, एक सर्जनात्मक विवशता क्रियाशील रही है। विश्व साहित्य में लम्बी कविता का आरम्भ प्रथम विश्वयुद्ध की पृष्ठभूमि पर आधारित टी. एस. इलियट की 'वेस्टलैण्ड' से माना जाता है जिसका हिन्दी में 'ऊज्जड़ग्राम' शीर्षक से अनुवाद हुआ। लम्बी कविता में

नाटकीयता की जो अवधारणा है वह भी इलियट की वस्तुमूलक प्रतिरूपता की अवधारणा से मिलती–जुलती है। नाटकीयता का यह तत्व सबसे पहले विदेशी कविता में और फिर वहाँ से यहाँ आया। इसके अतिरिक्त तनाव के साथ विश्रान्ति की संकल्पना भी इलियट की ही देन है।

संसार की सभी विकसित भाषाओं में लम्बी कविता की परम्परा मिलती है। अंग्रेज़ी अनुवादों के माध्यम से रूसी, फ्रांसीसी, जर्मनी भाषाओं में 'लांग पोयम' को देखा जा सकता है। पृष्ठभूमि की बात करें तो विदेशी साहित्य में 'एपिक' और भारतीय साहित्य में प्रबन्ध के रूप में लम्बी कविता के बीज ढूँढ़े जा सकते हैं, लेकिन इतना तो स्पष्ट है कि लम्बी कविता एक ऐसा काव्य माध्यम है जो प्रबन्ध काव्य ही नहीं, बल्कि सभी काव्य रूपों से सर्वथा भिन्न और स्वतन्त्र है।

लम्बी कविता की सर्जनात्मक अनिवार्यता के रूप में पहचान छायावादी कवियों जयशंकर प्रसाद, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला और सुमित्रानंदन पन्त ने ही कर ली थी। अब तक के चिर–परिचित काव्य रूप आधुनिक युग की जटिलता को यथार्थ अभिव्यक्ति देने में असमर्थ रहे क्योंकि पुराने काव्य रूप छन्दों और अलंकारों की बंदिशों के कारण यथार्थ का गुंफित रूप प्रस्तुत नहीं कर पाते। अनुभूति और जटिल यथार्थ के संगुफित विधान को मुक्त छन्द में ही व्यक्त किया जा सकता है। यही कारण है कि छायावादी कवियों, विशेष रूप से निराला ने मुक्त छन्द की पुरज़ोर पैरवी करते हुए *'कुकुरमुत्ता'* जैसी व्यंग्यात्मक लम्बी कविता लिखी हालांकि उनकी प्रारम्भिक लम्बी कविताओं जैसे *'राम की शक्ति पूजा'* में अन्त्यानुप्रास का मोह बराबर बना हुआ है। लम्बी कविता के लिए काव्यशास्त्रीय विधि नियम गैरज़रूरी और बांझ हो जाते हैं क्योंकि संवेदना का सर्वथा नवीन रूप, आधुनिक जीवन की विसंगति और युगीन जटिल यथार्थ के लिए भावों का निर्बाध प्रवाह बन्धनरहित शैली में ही संभव है।

इस प्रकार नये जीवन विधान की संगति के अनुरूप और अपने दौर के नये सत्य के साक्षात्कार के लिए एक नये काव्य माध्यम की खोज हुई। एक नये प्रकार के जीवन वास्तव और अभिव्यंजना पद्धति के कारण कवि कर्म की विवशता ने लम्बी कविता के लिए प्रेरणा शक्ति का काम किया। वास्तव में लम्बी कविता में विषय, संवेदना, भाव, विचार और कथ्य के अनुरूप स्वयं को नये रूपों में ढ़ालने की क्षमता है। यही कारण है कि 20वीं शताब्दी में समकालीन मानवीय सन्दर्भों को रूपायित करने की क्षमता से लम्बी कविता एक बड़े काव्य माध्यम के रूप में फैली–फूली है। एक खास तरह की परिस्थिति जो सक्रांति बेला के दौर से गुजर रही हो – में लम्बी कविता की प्रेरणा निहित होती है।

इसीलिए युगीन दबाव से कोई भी लम्बी कविता मुक्त नहीं हो सकती। खास किस्म का युगीन यथार्थ जिससे कवि सीधे–सीधे टकराने के लिए विवश होता है तब लम्बी कविता ही कारगर सिद्ध हो सकती है।

इस प्रकार लम्बी कविता युग की अनिवार्यता के साथ कवि कर्म की विवशता से भी जुड़ी हुई है। अतः यह ज़रूरी है कि इस काव्य माध्यम के ज़रिए साहित्यिक रूढ़िवादिता से मोर्चा लिया जाये। समकालीन यथार्थ बोध और आधुनिक संश्लिष्ट जीवन की जटिल अभिव्यक्ति के अनुरूप पुराने काव्य–रूप अपने कलेवर में परिवर्तन नहीं कर पाते। भावगत और रूपगत पुनरावृत्ति से शास्त्रीय काव्य रूपों की उर्वरता कम या खत्म होती जाती है। रूपवादी मोह के कारण युगीन चेतना की आलोचनात्मक अभिव्यक्ति सामान्य कविता में संभव नहीं हो पाती। इस तथ्य की पहचान 19वीं शताब्दी में ही कर ली गयी थी। परिणामस्वरूप आधुनिक दौर के ऐतिहासिक और समसामयिक दबावों ने साहित्य को नयी दिशा प्रदान की।

छायावाद से एकदम पहले देखें तो रीतिकालीन शृंगारिकता ने आम आदमी और रचनाकार को अपने परिवेश से बेगाना कर, सुरा और सुन्दरी से जोड़कर पलायनवादी बना दिया लेकिन 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध और बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में रीतिकालीन कुण्ठाग्रस्त प्रेम जुनून की हद तक देश प्रेम में परिवर्तित हो गया। भक्तिकाल का मोक्ष और वैकुण्ठ दिलाने वाला अलौकिक साहित्य जनमानस के आँसू पोंछने के लिए यथार्थ धरातल से जुड़ा। संस्कृत नाट्य परम्परा का पुनर्संस्कार वैचारिक नाटकीयता के रूप में हुआ। मध्यवर्ग की बहुमुखी और नयी समस्याओं की अभिव्यक्ति के माध्यम रूप में हिन्दी उपन्यास ने महाकाव्यात्मक ढाँचे को तोड़ने की पहल की। लघु मानव की केन्द्रीय भूमिका से साहित्य में अभिजात्य संस्कार का निर्वाह ज़रूरी नहीं रहा। औद्योगिकीकरण, नगरीकरण, संयुक्त परिवारों के टूटने से व्यक्तिवाद की प्रतिष्ठा हुई और तद्जनित अन्तर्द्वन्द्वों से कथ्य, शिल्प, चरित्र अर्थात् वस्तु और रूप के धरातल पर उदात्तता का आग्रह अनावश्यक हो गया।

दूसरी ओर, मध्यवर्गीय वैयक्तिक प्रखरता के साथ प्रबन्ध के रूप में बदलाव, प्रयोगधर्मिता और नवीनता गहन हुई। आधुनिक मानव के खण्डित व्यक्तित्व से आदर्श चरित्र, पूर्ण मानव और उसके पुरूषोत्तम रूप की अवधारणा चटक कर रह गई। पूर्ण स्वतन्त्रता का स्वप्न विभाजन की चट्टान से टकराया और आज़ादी की ओर रखा जाने वाला पहला कदम ही खून से लथपथ हो गया। साम्प्रदायिक विस्फोट ने आज़ादी की धज्जियाँ उड़ा दीं। वर्तमान युग के टूटे, बिखरे, अधूरे सत्य को शृंखलाबद्ध करने वाले

कथानक का आधार नहीं रहा। लघु, उपेक्षित, सामान्य जन ने धीरोदात्तता और पूर्णता के प्रति संदेह जताया। प्रयोगात्मक लघु प्रबन्धकाव्य के रूप में मैथिलीशरण गुप्त की *'यशोधरा'* और *'द्वापर'* जैसी रचनाएं आयीं। स्थूल घटना निरूपण के स्थान पर मानव चरित्र की सूक्ष्म मानसिकता का चित्रण दिनकर की *'रश्मिरथी'* के कर्ण में और मैथलीशरण गुप्त की *'साकेत'* की उर्मिला में हुआ। संवाद रूप में दिनकर की *'उर्वशी'* और कुंवर नारायण की *'आत्मजयी'* जैसी रचनाओं ने प्रबन्ध के परम्परागत कलेवर को तोड़ते हुए लम्बी कविता के लिए बीज बोने का काम किया। दरअसल, महाकाव्य के रूढ़िगत ढ़ांचे की चटकन ने लम्बी कविता की आधारगत स्थापना में बहुत बड़ा योगदान दिया। इस प्रकार लम्बी कविता आधुनिक जीवनानुभव की जटिल प्रकृति और संश्लिष्टता के सर्वथा अनुकूल है।

कथा का आश्रय लेकर मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, दार्शनिक सत्य प्रकट हुए। सूक्ष्म वस्तु चेतना केन्द्र में आती गयी। एक ही विषय जैसे *'बुढ़ापा', 'बसन्त'* का वर्णन कर कविता पर्यायबंध के रूप में उभरी। ऐतिहासिक–पौराणिक पात्रों को आधार बनाकर पद्य कथा अथवा कथात्मक कविता सामने आयी। आख्यानक गीति में वस्तुप्रधान आख्यानक शैली का स्थान आत्माभिव्यक्ति ने ले लिया। जयशंकर प्रसाद की *'शेरसिंह का शस्त्र समर्पण'* और *'प्रलय की छाया'* में आख्यानक गीति का चरम उत्कर्ष मिलता है। यहाँ कथ्य के आख्यानगत आधार के बिना कवि ने अपने चिन्तन को ही रचनात्मक स्तर पर कथात्मक रूप दिया है। इस प्रकार नवीन वैचारिक बोध की सटीक अभिव्यक्ति और सम्प्रेषणीयता की माँग से लम्बी कविता उजागर हुई।

साहित्य के परम्परागत रूप से बाहर आने की प्रक्रिया में गद्य और उसकी विभिन्न विधाओं का विकास हुआ। दूसरी ओर, कविता में काव्यशास्त्र के नियम टूटे। काव्य भाषा के रूप में पहचान बनाने वाली ब्रज भाषा का स्थान खड़ी बोली ने ले लिया। रीतिकाल की तर्ज़ पर लक्षण ग्रन्थों की रचना और नायिका भेद वर्णन ग़ैर ज़रूरी हो गया। कवि की संवेदना और उसके काव्य संस्कार के अनुसार कविता समस्त चराचर के साथ जुड़ती गयी। कहानी, संस्मरण, यात्रा–साहित्य जैसे नवीन गद्य रूपों ने लम्बी कविता के लिए खाद का काम किया। इसी शृंखला में वैचारिक निबन्ध को लम्बी कविता की पृष्ठभूमि का एक पड़ाव माना जा सकता है।

देशीय और वैश्विक घटना चक्रों के चलते प्रबन्ध काव्य के ढ़ाँचे में बदलाव की

प्रक्रिया आधुनिक युग की शुरूआत के साथ ही हो गयी थी। विश्वयुद्धों की नृशंसता, स्वाधीनता संग्राम की जुझारू मानसिकता, विभाजनजनित मोहभंग ने दूर तक सामाजिक, ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक मूल्यों को खण्डित और प्रभावित किया। दूसरे छोर पर साहित्यिक जगत में पुनर्जागरण, खड़ी बोली के विकास से वैचारिक गद्य विधाओं के प्रादुर्भाव ने परम्परागत काव्य–रूपों के समक्ष चुनौती प्रस्तुत की। भारतेन्दु युग में पुनर्जागरण ने अतीत को टटोलकर साधारण मानव के प्रति आत्म गौरव का भाव भरने के साथ नवीन मूल्यों को जन्म देते हुए मध्ययुगीन मानसिकता को अप्रासंगिक सिद्ध कर दिया। मध्यकालीन संस्कारों से मुक्ति और सामाजिक आन्दोलन हेतु वातावरण तैयार करने में पुनर्जागरण ने मूल्यगत, रूपगत और भावगत विद्रोह को बढ़ावा दिया। ईश्वरीय सत्ता व्यक्तिगत आस्था के साथ जुड़ गयी और भावुकता का स्थान बौद्धिकता ने ले लिया। आस्था और विश्वास की कारणगत समीक्षा हेतु बुद्धि, चिन्तन और तर्क की कसौटी निर्धारित हुई। इस प्रकार कोरी भावुकता की बजाय विचार कविता के केन्द्र में आया गया।

आधुनिक युग की रचनाओं में विचार एक ज़रूरत के तौर पर उपस्थित हुआ है। इस क्रम में खासतौर पर लम्बी कविता को विचार कविता का एक विस्तार कह सकते हैं हालांकि विचार कविता सत्तर के दशक में शुरू हुई और लम्बी कविता उससे लगभग आधी सदी पहले प्रकाश में आ चुकी थी लेकिन उसका तेजी से विकास विचार के दखल के बाद ही संभव हुआ।

इस प्रकार अपने परिवेश के जातीय अहसास, यथार्थ के प्रति विवेकपूर्ण दृष्टि, भोंथरी भावुकता से परहेज और समकालीन जटिलता की संश्लिष्ट अभिव्यक्ति हेतु व्यापक फार्म की ज़रूरत पड़ी और कवि के आत्मसंघर्ष के रूप में लम्बी कविता परिणत हुई। युगानुरूप नवीन सत्य के साक्षात्कार की क्षमता लिये लम्बी कविता कवि कर्म की नयी धारणा को पुष्ट करने वाली है।

1.4 सारांश – नए जीवन यथार्थ और समकालीन जीवन की संशिलष्ट अभिव्यक्ति के लिए एक व्यापक काव्य विधान के रूप में लम्बी कविता युग की अभिव्यक्ति करने वाली है, जिसके माध्यम से कवि भी आत्मसंघर्ष को रूपायित करने में सक्षम होता है।

1.5 कठिन शब्द – परम्परागत रूप से विधान, आधुनिकता के दबाव, सर्जनात्मक अनिवार्यता, महाकाव्यत्व ढांचे की टूटन, मोहभंग

1.6 अभ्यासार्थ प्रश्न–

प्र01 आधुनिक युग में लम्बी कविता की अनिवार्यता पर प्रकाश डालिए।

.....

.....

.....

प्र02 उन कारणों को स्पष्ट कीजिए जिनसे लम्बी कविता की उद्‌भावना हुई।

.....

.....

.....

प्र03 साहित्यिक धरातल पर ऐसे कौन से परिवर्तन हुए, जिन्होंने लम्बी कविता के लिए बीज वपन का काम किया?

.....

.....

.....

प्र04 राष्ट्रीय–अन्तर्राष्ट्रीय धरातल पर उन परिवर्तनों की पहचान कीजिए जिनसे लम्बी कविता के अवसर उत्पन्न हुए।

.....

.....

.....

1.7 पठनीय पुस्तकें –

1) लम्बी कविता का रचना विधान – डॉ. नरेन्द्र मोहन

2) कहीं भी खत्म कविता नहीं होती – डॉ. नरेन्द्र मोहन

3) विचार और लहू के बीच – डॉ. नरेन्द्र मोहन

4) बीसवीं शताब्दी का उत्कृष्ट साहित्य : लम्बी कविताएं – डॉ. नरेन्द्र मोहन

6) समकालीन कविता की भूमिका – विश्म्भरनाथ उपाध्याय, मंजुल उपाध्याय

7) लम्बी कविताओं के बहाने – डॉ. रजनी बाला

8) लम्बी कविता : व्यापक परिदृश्य – डॉ. रजनी बाला

लम्बी कविता : अर्थ, परिभाषा, तत्व

2.0 रूपरेखा

2.1 उद्देश्य

2.2 प्रस्तावना

2.3 लम्बी कविता : अर्थ, परिभाषा, तत्व

2.4 सारांश

2.5 कठिन शब्द

2.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

2.7 पठनीय पुस्तकें

2.1 उद्देश्य

इस अध्याय का अध्ययन करने के अनन्तर विद्यार्थी लम्बी कविता को एक काव्य विधा के रूप में समझने में सक्षम होंगे। लम्बी कविता के अभिप्राय, उसके स्पष्टीकरण और विभिन्न विद्वानों की परिभाषाओं को जान सकेंगे। उन विशेषताओं की पहचान कर सकेंगे जिनके आधार पर कोई कविता लम्बी कविता के रूप में जानी जाती है।

2.2 प्रस्तावना

किसी कविता का केवल फैलाव लम्बी कविता का लक्षण नहीं होता। केवल वर्णन कविता को लम्बा तो बना सकता है, किन्तु वह लम्बी कविता को प्रस्तुत नहीं कर सकता। वर्णन के साथ ब्यौरों का संतुलन, केन्द्रीय स्थिति के साथ विभिन्न मनोदशाओं का संयोजन, भाव और विचार का सामंजस्य आदि ऐसे अनेक तत्व लम्बी कविता के लिए जरूरी हैं, जिनका स्पष्टीकरण इस अध्याय में हुआ है।

2.3 लम्बी कविता : अर्थ, परिभाषा, तत्व

सामान्य रूप से चर्चा होती रही है कि कोई रचना 'लम्बी' है तो कविता कैसे हुई? अगर 'कविता' है तो उसे लम्बी होने की ज़रूरत क्यों पड़ी ? या फिर कविता, कविता होती है 'लम्बी' अथवा 'छोटी' नहीं, तब इसे लम्बी कविता और छोटी कविता के खेमों में बाँटने का क्या औचित्य है ? लम्बी कविता एक विस्तृत फ़लक पर आधुनिक व्यक्ति के तनावों, यातनाओं और संकल्पों को व्यक्त करती है। समकालीन जटिल संवेदनाओं को कवि जब परंपरागत ढाँचे में समेट नहीं पाये तो उन्हें लम्बी कविता के कलेवर को अपनाना उचित पड़ा। लम्बी कविताओं का महत्व आज इसी अर्थ में है कि वे जिस प्रकार एक कालखण्ड के सम्पूर्ण विघटन और बदलते हुए परिदृश्य को समेटती हुई समय की वास्तविकता का साक्षात्कार करा रही है, वह अन्यत्र दुर्लभ है।

लम्बी कविता का अर्थ

संवेदना की निर्बाध अभिव्यक्ति, चेतना का मुक्त प्रवाह, यथार्थ का स्पष्ट बोध और उनके बीच के मूल्यों का निर्धारण लम्बी कविता का मुख्य वैशिष्ट्य है जिनको कवि विभिन्न दृश्यों, प्रखण्डों, स्मरण खण्डों तथा चिन्तन की धारावाहिकता से जोड़ता है। इससे आज के जीवन का मांगा हुआ यथार्थ, विवशता, तनाव, त्रासदी आदि सब कुछ लम्बी कविता में व्यक्त हो जाता है। इस प्रकार आधुनिक जीवन की छटपटाहट और विसंगति को लम्बी कविता में विशेष स्थान प्राप्त होता है।

औद्योगिकीकरण और नगरीकरण के परिणामस्वरूप आज की ज़िंदगी दुहरा सी गई है। भारत की स्वाधीनता के पश्चात् नयी पीढ़ी के सारे स्वप्न टूट कर बिखर गये और बेकारी, भूख, कुंठा, घुटन, संत्रास आदि अभिशाप स्वरूप मिले। जीवन के समस्त छोरों पर निराशा प्राप्त करने वाली युवा पीढ़ी का स्वर शिकायती और विद्रोही हो जाना स्वाभाविक ही था। लम्बी कविता इसी शिकायत का दस्तावेज़ है इसीलिए लम्बी कविता में आंतरिक भावों का संघर्ष और बाह्य परिस्थितियों का तनाव समान रूप से चित्रित होता है।

लम्बी कविता में आत्मीय स्मृतियां ऐतिहासिक स्मृतियों में फैलती और गुथती जाती हैं। इनमें स्मृति को इतिहास से और इतिहास को स्मृति से अलगाया नहीं जा सकता। स्मृति और इतिहास का यह तनावपूर्ण सम्बन्ध लम्बी कविता की खास विशेषता है। इस प्रकार अतीत, वर्तमान और भविष्य लम्बी कविता में प्रत्यावर्तित होते रहते हैं जिसके कारण इसका विज़न बड़ा होता जाता है। अतः लम्बी कविता के कवि के लिए

अनुभव की बड़ी रेंज, आत्मिक और बाहरी द्वन्द्व एवं तनाव को सर्जनात्मक धरातल पर तानने की क्षमता और प्रतिभा का होना निहायत ज़रूरी है।

किसी कविता का भौतिक रूप में लम्बा होना ही उसे लम्बी कविता कह देने का पर्याप्त कारण नहीं है। किसी कविता में अगर लम्बी कविता की बुनियादी विशेषताएँ नहीं हैं तो कविता चाहे आकार में कितनी भी लम्बी क्यों न हो लम्बी कविता कहलाने की हक़दार नहीं है। कई बार वर्णन या वक्तव्य के आधार पर कविता को खूब फैला दिया जाता है मगर उसमें न अनुभव की सम्पन्न्ता होती है, न विचार की। दोनों की अनुपस्थिति रहने पर या दोनों के साथ जुड़े तनावों के अभाव में ऐसी कविता को लम्बी कविता नहीं कहा जा सकता। कई बार एक ही मनोदशा में – यह मनोदशा भावगत भी हो सकती है और विचारगत भी, लिखी गयी कविता को भी लम्बी कविता नहीं कहा जा सकता। बड़े आकार में फैली कविता अपनी सार्थकता सिद्ध करे यह ज़रूरी नहीं है। आन्तरिक अनुशासन और गहरे भाव बोध के साथ आकार का एक सार्थक सर्जनात्मक कर्म में ढ़लना लम्बी कविता के लिए ज़रूरी है।

लम्बी कविता को पन्नों के किसी एक आकार में बाँधा नहीं जा सकता। कोई लम्बी कविता अपनी सार्थकता 10–15 पृष्ठों में पूरी कर सकती है, कोई कविता 50 या 150 पन्नों में भी। पृष्ठों की आकारगत सीमा का कोई मतलब नहीं है। 150 पन्नों में लिखी गयी लम्बी कविता की वस्तु का निरूपण और ट्रीटमैण्ट अच्छा ही होगा, यह ज़रूरी नहीं है। कवि की मानसिकता और दृष्टिकोण पर निर्भर करता है कि वह उसे क्या रूप देता है। लम्बी कविता एक आन्तरिक बाध्यता है जिसके द्वारा कवि घने–गहरे आत्मगत संघर्ष को बाहरी परिदृश्य के साथ समन्वित करता है।

लम्बी कविता के लिए तनाव का दीर्घकालिक होना ज़रूरी है। केवल आकार किसी कविता को लम्बी कविता नहीं बनाता। कविता की भीतरी संरचना की माँग के बिना बढ़ा आकार कविता को लम्बी कविता तो क्या एक अच्छी कविता तक नहीं बनने देता। यह देखना ज़रूरी है कि किसी कविता की लम्बाई उसकी जैविक आवश्यकता का प्रतिफलन है कि नहीं क्योंकि कविता का आकार उसमें व्यंजित ज़िन्दगी के टुकड़ों की लम्बाई के बराबर होना चाहिए। लम्बी कविता की शक्ति पृष्ठों या पंक्तियों की संख्या से अधिक अन्वेषित अनुभव पर निर्भर करती है।

लम्बी कविता व्यक्ति और व्यक्ति, व्यक्ति और समाज, आत्मिक जीवन संदर्भों और बाहरी परिवेश, लोकल और ग्लोबल जातीय मनस्, विध्वांसत्मक और सर्जनात्मक

शक्तियों की आपसी टकराहट से सर्जित और प्रेरित होती है। इस प्रकार लम्बी कविता का बड़ा फलक कवि के आत्म संघर्ष के साथ जुड़ा हुआ होता है। यहाँ यह भी मार्क करने की बात है कि अपने जैविक आकार में छोटी रहकर कोई कविता, लम्बी कविता नहीं कही जा सकती। हरिवंशराय बच्चन के अनुसार ''लम्बी कविता वह है जो लम्बी हो''। जबकि हम जानते हैं कि लम्बी कविता के लिए केवल लम्बाई या आकार उसकी एकमात्र विशेषता नहीं है। लम्बी कविता में आकार और तनाव, विचार और बिम्ब, ब्यौरे और विभिन्न मनोदशाएँ, केन्द्रीय स्थिति और विभिन्न सन्दर्भ एक–दूसरे को संभालते और तानते हुए चलते हैं। यहाँ आकार नहीं बल्कि विरोधी आयामों की परस्पर अन्तर्सम्बद्धता और संयोजन की पद्धति महत्वपूर्ण है।

लम्बी कविता की परिभाषा

सामान्यतः लम्बी कविता कवि की अनुभूति को सरलता से सघनता की ओर ले जाते हुए अनेकानेक भावों का एक–दूसरे में गुथा हुआ प्रारूप प्रस्तुत करती है। कवि का अनुभव जिसे मुक्तिबोध के शब्दों में समझें तो 'ज्ञानात्मक संवेदना' और 'संवेदनात्मक ज्ञान' से जटिलता और पूर्णता को प्राप्त करता हुआ पाठक को झकझोरता है, विचारों का जाल उसमें भरता है, अनेकानेक अर्थ संदर्भों को खोजने की आकांक्षा पैदा करता है। पढ़ते समय अपर्याप्त–सी जान पड़ती ऐसी लम्बी कविता – कविता में कुछ और, कुछ अधिक पाने की व्याकुलता और बेचैनी प्रबुद्ध पाठक में पैदा करती है। शिवप्रसाद सिंह अपने लेख ''लम्बी कविता के 'कर्वेचर' में आधुनिकता की मुश्किल से मुश्किल अभिव्यक्ति संभव है'' में यह ज़रूरी मानते हैं कि ''लम्बी कविता हमेशा ही कोई न कोई बड़ी बात कहने के लिए लिखी जानी चाहिए। बड़ी बात से मेरा मतलब है कि समाज में नाना खंड चित्रों की सतह पर उठती हुई अनगिनत लहरों में विद्यमान वह कौन सा सूत्र है जिसके कारण ऐसी हलचलें दिखाई पड़ती हैं। यह बड़ी बात या जिसे प्रचीन लोग महाकाव्य कहा करते थे, जब तक कवि के मन को इतना तनावपूर्ण नहीं बना देता कि वह उसे व्यक्त करने के लिए विवश ही हो जाये, तब तक लम्बी कविता नहीं बनती।'' स्पष्ट है कि अनुभव की गहराई के साथ व्यापक फलक की सघनता लम्बी कविता के रचना विधान के लिए क्रियाशील होती है।

डॉ. रमेश कुंतल मेघ के अनुसार ''लम्बी कविता एक सम्पूर्ण परिवेश और जटिल संदर्भ का आयतीकरण है। इसलिए इनमें अनुभूति खंडों और संदर्भ खंडों का गड्डमड्ड काव्य रूप वस्तु में कवि और व्यक्ति के, कवि और समाज के द्वन्द्वों का साक्षात्कार कराता

है।'' स्पष्ट है कि जीवन और जगत के व्यापक अनुभव को विस्तृत फलक पर प्रस्तुत करने का काम लम्बी कविता का है। डॉ. नरेन्द्र मोहन लम्बी कविता की छोटी और पूर्ण परिभाषा देते हुए कहते हैं ''विभिन्न मनोदशाओं और संदर्भों से जुड़े दीर्घकालिक तनाव से स्पन्दित कविता जिसमें नाटकीयता रहती है उसे लम्बी कविता कहते हैं।'' यह परिभाषा छोटी होते हुए भी लम्बी कविता के महत्वपूर्ण घटकों जैसे केन्द्रीय मनोदशा के साथ विभिन्न मनोदशाओं, दीर्घकालिक तनाव, नाटकीयता को समाहित किये हुए है। डॉ. सत्यप्रकाश मिश्र के अनुसार ''वस्तु और सत्य जब किसी रचना में पर्याय लगने लगते हैं, दोनों में संयुक्त घोल की सी स्थिति हो जाती है तो इस प्रकार लम्बी कविता का निर्माण होता है और काव्य की लम्बाई बहुत कुछ इसी घुलनशीलता और पूर्णता के अनुपात में होती है।'' इस परिभाषा में लम्बी कविता में वस्तु, रूप और संरचना के साथ यथार्थ पर बल है।

रंगनाथ तिवारी के अनुसार व्यक्ति के अपने संवेदन क्षेत्र में जब विश्व का समावेश हो जाता है या शेष विश्व के साथ कवि की संवेदना टिक जाती है तो दोनों के बीच एक सूक्ष्म तन्तु जुड़ जाता है। ऐसी स्थिति में जो चिंतन किया जाता है और तनाव की जिस स्थिति का वर्णन कविता में होता है उस स्थिति को लम्बी कविता कहते हैं। जब तक यह तनाव नहीं होगा, कथा के रूप में कुछ भी लिख दीजिए लम्बी कविता नहीं होगी। कवि के अनुभव लोक की इसी व्यापकता के आधार पर किसी काव्य को क्लासिक लम्बी कविता कहा जा सकता है।

कविता लम्बी होने के कारण

मुक्तिबोध अपनी लम्बी कविताओं की पृष्ठभूमि में क्रियाशील सर्जनात्मक पीड़ा को प्रकाशित करते हुए 'एक साहित्यिक की डायरी' में लिखते हैं कि ''कविता भावावेशपूर्ण होती तो एक बार उसकी आवेशात्मक अभिव्यक्ति हो जाने पर मेरी छुट्टी हो जाती लेकिन वैसा हो सकना असम्भव है, क्योंकि भावावेश किसी बात को लेकर होता है, वह बात किसी दूसरी बात से जुड़ी होती है, दूसरी बात किसी तीसरी बात से। यही कड़ियां अन्ततः जुड़ती हुई लम्बी कविता की रचना को अनिवार्य बना देती हैं।'' स्पष्ट है कि मुक्तिबोध के अनुसार यथार्थ के तत्व परस्पर गुंफित होते हैं जिसका एक सिरा दूसरे सिरे से जुड़ा रहता है। इस प्रक्रिया में कविता, लम्बी होती जाती है।

लम्बी कविता के लम्बे होने के कुछ महत्वपूर्ण बिन्दु हैं, जो उसे दीर्घता प्रदान करते हैं। इसे लम्बी बनाने वाली केन्द्रीय स्थिति होती है जिसके चारों और विभिन्न

सन्दर्भ, प्रसंग और अनुस्पन्दन उभरते हैं। अनुभूति और विचार के टकरावपूर्ण विन्यास एवं यथार्थ की जटिल संवेदना को अभिव्यक्त करने के प्रयत्न में कविता लम्बी होती जाती है। विसंगत सामाजिक परिदृश्य के साथ व्यक्ति मन की अव्यवस्थित मानसिकता की अभिव्यक्ति के लिए कभी–कभी स्थिति की तहें कुरेदने की प्रक्रिया में कविता का आकार बढ़ता जाता है। रामदरश मिश्र 'लम्बी कविता ज़िन्दगी की अनेक लयों की संश्लिष्ट लय' शीर्षक लेख में स्पष्ट करते हैं, ''एक तो लम्बी कविता अपने मूर्त परिवेश को भी चित्रित करती हैं दूसरे उनमें आज की ज़िन्दगी के अनेक संश्लिष्ट और वर्त्तुल स्तरों को एक साथ व्यापक स्तर पर उभारने की शक्ति और गुंजाइश होती है'' जिसके कारण कविता लम्बी होती जाती है।

यहीं पर विचारणीय है कि मुद्रित परम्परा में बार–बार दोहराते हुए धीरे–धीरे पढ़ने की प्रक्रिया में काव्य फलक की समग्रता, व्यापकता और पूर्णता को लेकर पाठकीय अपेक्षाएँ बढ़ जाती हैं, जिससे कविता का कलेवर भी बढ़ता है। लम्बी कविता के रचनाकार को पाठकों की प्रतिक्रिया और उनके मन–मस्तिष्क में उठने–कौंधने वाले प्रश्नों–विचारों की कल्पना करते हुए स्वयं पाठक बनना पड़ता है और इस क्रम में कविता लम्बी होती जाती है। कवि स्वयं को सम्पूर्ण प्रतिभा और व्यापकता के साथ प्रकट करना चाहता है। दूसरी ओर, कविता में संरचनात्मक गुणों का आवयविक सम्बन्ध सघनता और संश्लिष्टता से संकेतित करता है जिसके कारण उसे लगता है कि अभी पाठक को महज़ इतने से ही बात समझ में नहीं आयेगी। वह सघन भावुकता से बचने के लिए एक निर्मम बौद्धिकता के सहारे कही गयी बात का कुछ अधिक स्पष्टीकरण करता चलता है, कथन की नई भंगिमाएँ अपनाता है, एक बात को दूसरी बात से, दूसरी को तीसरी से काटकर एक नये उत्कर्ष को रचता है। इतने पर भी कवि सोच कर या अपनी इच्छा से कविता को लम्बा नहीं करता, बल्कि यह काव्य माध्यम ही विस्तृत आयाम वाला है। कवि का मुख्य उद्देश्य भी यही रहता है कि अपनी नाराज़गी, क्षोभ, आक्रोश, विद्रोह, भय और त्रास की अभिव्यक्ति कर सके जिसके कारण कविता फैलती जाती है।

लम्बी कविता के आकार को देखकर एक सवाल सहज ही उठता है कि क्या लम्बी कविता एक ही बैठक में लिखी जा सकती है ? इस संदर्भ में इतना ही कहा जा सकता है कि यह कवि की काव्य दृष्टि पर निर्भर करता है कि वह एक मूड, एक सीटिंग में कविता को पूरा करता है या कई सीटिंग्स के क्रम में उसे पूर्णता प्रदान करता है। दरअसल, यह रचना–प्रक्रिया से जुड़ा सवाल है। कई कवि भीतर ही भीतर अपने अनुभव के विविध आयामों को इतना रचा–पचा चुके होते हैं कि उनके लिए बाहरी अभिव्यक्ति

एक सीटिंग में भी पूर्णता प्राप्त कर सकती है। कई कवियों की रचना प्रक्रिया इससे अलग होती है। वे लिखते–लिखते रचना को अन्तिम रूप देते हैं। उसके कई ड्राफ्ट बनाते हैं और इस तरह कविता को पूरा करते हैं। रचना–प्रक्रिया की इन दोनों ही पद्धतियों को व्यापक तौर पर मान्यता प्राप्त है।

लम्बी कविता के तत्व

किसी कविता की लम्बी कविता के रूप में पहचान करने के लिए इस काव्य माध्यम के तत्वों या आधार बिन्दुओं को समझना ज़रूरी हो जाता है। अपने युग का दहकता दस्तावेज़ होने के कारण लम्बी कविता में विषय और पद्धति को लेकर इतनी सम्भावनाएँ हैं कि लगभग एक सदी के बाद भी इसे सिद्धान्तों के बाड़े में नहीं बाँधा जा सकता। किसी पूर्व निर्धारित उद्देश्य या तयशुदा समापन रूढ़ि से मुक्त इस काव्य माध्यम में नये रूपों के साथ नये प्रतिमानों की खोज की संभावना की जा सकती है इसीलिए प्रतिमान पहले से निर्धारित नहीं होने चाहिए। प्रतिमानों की खोज के पीछे लम्बी काव्य परम्परा होती है। कविता हो या लम्बी कविता, उसके प्रतिमान एक लम्बी काव्य परम्परा में से छनकर ही आते हैं। हर लम्बी कविता अपने प्रतिमान अपने साथ लेकर आती है। लम्बी कविता की जाँच–पहचान के सामान्यतः कुछ निर्धारक तत्व या प्रतिमान हो सकते हैं लेकिन उन्हें एक ही तरह से सभी लम्बी कविताओं पर लागू नहीं किया जा सकता। लम्बी कविता अभी विकास के चरण में है और जैसे–जैसे लम्बी कविताएँ आती जायेंगी उनसे जुड़ी नयी अवधारणाओं और संकल्पनाओं की पहचान भी ज़रूरी होती जायेगी। इसके बावजूद सर्वसामान्य रूप में स्वीकृत कुछ ऐसे तत्व हैं जिनका अवलोकन किसी लम्बी कविता के अध्ययन हेतु आवश्यक हो जाता है।

1. अनुभव और विचार का संतुलन

लम्बी कविता की पहली विशेषता अनुभव और विचार की समृद्धि से सम्बन्धित है। यह समृद्धि तभी संभव है यदि कवि के पास एक बड़ी दृष्टि जिसे 'विज़न' कहते हैं और बड़ा फलक हो। दृष्टि और फलक का यह सम्बन्ध भी ऊपरी नहीं है। इसमें व्यापकता और गहराई के आयाम जुड़े हुए हैं। लम्बी कविता के सन्दर्भ में जिसे दीर्घकालिक तनाव कहा जाता है, वह दृष्टि और फलक के इन्हीं रिश्तों से उभरता है। मनोहर बंधोपाध्याय ने एक अंग्रेजी लेख 'रिटर्न ऑफ पोयम' में अनुभव, विचार और तनाव के संतुलन को स्पष्ट करते हुए कहा, अर्थात् ''लम्बी कविताओं की संरचनात्मक विशिष्टता उनमें विचारों का संतुलन और तनाव है जिसे कवि अपनी योग्यता, प्रतिभा और खोज के अनुपात से

तय करता है। वह सामाजिक, वैयक्तिक अस्थिरता और मानसिक व्यवहार की पहचान करके बदले हुए परिदृश्य में अस्मिता और अस्तित्व के संकट का निरूपण करता है।'' समकालीन लम्बी कविता सामाजिक, राजनीतिक दबावों, टकरावों, मूल्यों, सम्बन्धों, विसंगतियों से गुज़रती है, इसलिए उसका रवैया और मुख्य सरोकार वैचारिक हो गया है। कथ्य से संरचना तक प्रभावी दखल रखने वाला तत्व प्रायः विचार होता है, जो तथ्यों, प्रसंगों–विवरणों को अंतःसूत्रों में पकड़ता एवं नियोजित करता है। ''किसी छोटी उच्छवासपूर्ण कविता के लिए अनुभूति शायद पर्याप्त होती है, किन्तु किसी भी बड़ी कविता के रचना संसार को फैलाने के लिए उसमें दर्शन, राजनीति अथवा सामाजिक चिंतन को समाविष्ट करने के लिए और उसके हित बिम्ब, प्रतीकादि का चयन करने के लिए, निश्चय ही वैचारिक तारतम्य की आवश्यकता पड़ती है।''

जीवन परिदृश्य में व्याप्त राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, वैज्ञानिक, औद्योगिक प्रभावों के परिणामस्वरूप उभरी विसंगतियों, मूल्यविहीनताओं, विडम्बनाओं एवं अमानवीय स्थितियों से रू–ब–रू होने का काम विचार करता है। दूसरे, इन संदर्भों, प्रसंगों को कविता के समूचे ढ़ाँचे में विचार ऐसे पिरो देता है कि जीवन की सारी विसंगतियाँ साफ दिखाई देने लगती हैं। आधुनिक बोध ने वैचारिकता का जो दबाव साहित्य के समक्ष उपस्थित किया उस से अनुभूति और संवेदना भी उदासीन नहीं रह सकती थी और यहाँ यह कहना भी अनुचित नहीं होगा कि अनुभूति के समधरातल पर अभिव्यक्त होकर ही विचार सम्प्रेषण की कसौटी पर सफलता प्राप्त कर सकता है।

लम्बी कविता में विचार हैं लेकिन वह 'विचार कविता' नहीं है। इसी प्रकार इसे 'भाव कविता' कहना निरे अनुभववाद की ओर ले जाने की ज़िद होगी क्योंकि यहाँ वैयक्तिक जीवनानुभव सामाजिक जीवनानुभव में रूपांतरित होते हैं। लम्बी कविता में कई तरह की भाव–दशाओं और विचार–दशाओं का एक व्यापक परिदृश्य में चित्रण होता है। चित्रण से भी ज्यादा विचारों और अनुभवों की टकराहट और आघात–संघात ज़रूरी है। ध्यान देने की बात है कि भाव और विचार अलग–अलग नहीं एक साथ जहाँ किसी बड़े अनुभव को सम्प्रेषित करते हैं वहीं लम्बी कविता अपना आकार गढ़ती है। जब हम बड़े फलक की बात करते हैं तो ज़ाहिर है यह फलक अन्दरूनी भी हो सकता है और बाहरी भी। अन्दरूनी होगा तो उसमें मनोवैज्ञानिक गहराई होगी। एक साथ उसकी अनेक परतें होंगी जो हमारे भावों, मनोवृत्तियों मूलभूत इच्छाओं के लोक का निर्माण करती हैं। इस लोक से कहीं लड़ते–झगड़ते तो कहीं मेलजोल बढ़ाते अनुभव कविता में व्यक्त होते हैं। फलक का जो दूसरा रूप है वह बाहरी है। बाहरी यानी इतिहास से जुड़ा हुआ। किसी

कवि के अनुभव की शिराएँ जब इतिहास से जुड़ जाती हैं या जब उसके निजी अनुभव ऐतिहासिक अनुभवों को भी स्पन्दित करने लगते हैं तो दृष्टि और दृश्य का या संवेदना और फलक का तनाव घटित होता है जो विचार, अनुभव भाव जैसी कई प्रक्रियाओं से जुड़ा होता है।

2. दीर्घकालिक सर्जनात्मक तनाव

अभी हमने अनुभव और विचार की जिस समृद्धि और संतुलन की बात कि है उसे साधने के प्रयत्न में दीर्घकालिक सर्जनात्मक तनाव उत्पन्न होता है। आमतौर पर यह धारणा है कि समकालीन साहित्य की कोई भी विधा तनाव से मुक्त नहीं है। फिर इसे केवल लम्बी कविता से ही जोड़कर क्यों देखा जाये ? इस गुत्थी को सुलझाते हुए डॉ. नरेन्द्र मोहन लिखते हैं, ''सर्जनात्मक दीर्घकालिक तनाव की प्राथमिक स्फूर्ति या उसका मात्र एक क्षण लम्बी कविता नहीं लिख सकता, भले ही इससे एक सुंदर बिम्ब या एक अच्छी छोटी कविता की सृष्टि हो जाये।'' दीर्घकालिक तनाव से अभिप्राय तनाव की अवधि और तनाव के विभिन्न धरातलों से है। कोरा तनाव शब्द एकांगी है क्योंकि निरा तनाव नकारात्मक और विध्वंसात्मक हो सकता है। इस प्रकार लम्बी कविता में सर्जनात्मक तनाव की दीर्घकालिकता उसे सामान्य साहित्यिक सर्जनात्मक तनाव से अलगाती है। सर्जनात्मक तनाव की यह दीर्घकालिकता ही लम्बी कविता को प्रदीर्घता प्रदान करने में सहायक होती है। भाव और विचार के आधार पर इस तनाव के स्वरूप में परिवर्तन आ सकता है और प्रस्तुतीकरण की शैली में भी भिन्नता आ सकती है। सर्जनात्मक तनाव की दीर्घकालिकता का सधना ही किसी भी लम्बी कविता की सफलता को सुनिश्चित करता है। लम्बी कविता की प्रक्रिया से गुजरते हुए कविता के धरातल पर कवि जिस तनाव को व्यक्त करने में असक्षम होता है, उसे ही दीर्घकालिक तनाव की संज्ञा दी गयी है। यह तनाव भावपरक न होकर विचार और अनुभव का संश्लिष्ट रूप होता है। परिस्थितिगत दबाव का असर कवि की चेतना पर भी होना चाहिए। केवल चारों तरफ के परिवेश से घिरा होना ही पर्याप्त नहीं बल्कि मानसिक धरातल पर उस तनाव को महसूस करना ज़रूरी है और उसका अनुभव और विचार के टकराव द्वारा बड़ी शिद्दत से सृजन का रूप पाकर अभिव्यक्त होना भी अनिवार्य है।

लम्बी कविता में तनाव क्यों महत्वपूर्ण और ज़रूरी हो उठता है यह विचारणीय है। अपने समय के दबाव से घिरा, समसामयिक सन्दर्भ को इतिहास में तानने की क्षमता रखने वाला कवि अन्तहीन तनाव से गुजरता है। निजी अनुभव को सामाजिक अनुभव की

कसौटी पर आँकने और बाह्य जीवन यथार्थ को आन्तरिक जीवनानुभव के धरातल पर प्रस्तुत करने का प्रयत्न वह करता है। इस कलात्मक संतुलन को साधते हुए वह अनुभव और विचार की संयुक्त रचना करते हुए परस्पर विरोधी प्रसंगों और वैचारिक अनुभवों को एकसूत्र करता है। इस प्रक्रिया में तनाव के साथ–साथ कविता का कलेवर भी बढ़ता है। इस तनाव का परिस्थितिगत और बौद्धिक होना पर्याप्त नहीं है, वैयक्तिक चेतना के स्तर पर अनुभूति सम्पन्न होना भी ज़रूरी है अन्यथा भाव या तर्क, हृदय या बुद्धि के किसी एक स्तर पर इसके सीमित रह जाने की आशंका बनी रहती है। अमेरिकी विचारक ऐलन टेट ने तनाव को व्याख्यायित करते हुए बाहरी तनाव (एक्सटेंशन) और भीतरी तनाव (इंटेंशन) की बात की है। एक बिन्दु से दूसरे बिन्दु तक कविता की तार्किक गति अर्थात् भाषा और शिल्प, वाच्यार्थ और अर्थ विधान बाहरी तनाव के साथ जुड़ा है। कविता में निहित भाव, विचार और उनका उक्तिमूलक विकास, लक्ष्यार्थ, बिम्ब और बाहरी अर्थ विध ाान का संतुलन काव्य–भाषा में जितना पूर्ण होगा कविता उतने ही मायनों में पूर्ण होगी। टेट के अनुसार काव्य के अन्तर्गत बाहरी और आंतरिक तनावों का सम्पूर्ण संघात ही तनाव है। किसी समाज के टूटने की प्रक्रिया में ऐतिहासिक तनाव उत्पन्न होता है। ऐसे दौर के ऐतिहासिक तनाव को व्यक्त करने वाली कविता एक अच्छी लम्बी कविता कही जा सकती है।

एक अन्य महत्वपूर्ण बात लम्बी कविता सम्बन्धी तनाव की यह है कि इसमें तनाव के साथ विश्रान्ति पर भी बल दिया जाता है। यहाँ ध्यान देने की बात है कि लम्बी कविता में विश्रान्ति की संकल्पना परम्परागत काव्यानन्द अथवा मुक्ति वाले स्वरूप से मेल नहीं खाती। लम्बी कविता तनाव से मुक्ति का नहीं, तनाव की अभिव्यक्ति का माध्यम है। सृजन के बाद कवि पुनः एक नये तनाव और तद्जनित अभिव्यक्ति की जटिल प्रक्रिया से जूझता है। तनाव से शुरू होकर अन्तहीन तनाव में ही कविता ठहरती है।

तनाव के साथ विश्रान्ति की संकल्पना टी. एस. इलियट की देन है। उन्होंने काव्य के संज्ञानात्मक (कॉगनेटिव) और भावात्मक (एफेक्टिव) दो पक्ष माने और कहा कि श्रेष्ठ कवि भी भाव और विचार का सामंजस्य हमेशा नहीं साध सकता। जब भाव और विचार में दरार पड़ जाये तो कविता का ह्रास हो जाता है। इसी को उन्होने संवेदनशीलता का असाहचर्य (डिस्सोसियेशन ऑफ सेंसिबिलिटी) कहा है। महान् कवि और महान् काव्य में वैयक्तिक प्रज्ञा और परम्परा, समकालीनता और चिरन्तरता, भावुकता और बौद्धिकता, भाव और विचार, कथ्य और रूप का गहरा सम्बन्ध और सामंजस्य रहता है। वैचारिक और संवेदनाजनित संतुलन को कवि विविध ब्यौरों और सन्दर्भों से साधता हुआ विश्रान्ति का

अनुभव करता है और इस प्रक्रिया में कविता बढ़ती जाती है।

दीर्घकालिक सर्जनात्मक तनाव कवि, पाठक और आलोचक के त्रिकोण से जुड़ा है। कवि के तनाव का दीर्घकालिक होना लम्बे वैचारिक अनुभव, वर्तमान को इतिहास में तानने की क्षमता, एक से दूसरी और दूसरी से तीसरी बात के साथ जुड़ा है। पाठक की दृष्टि से यह तनाव विसंगत हो गयी स्थितियों से जूझने की प्रेरणा और स्थायी प्रभाव से सम्बन्धित है जबकि आलोचक से माँग करता है कि वह देखे कि भाव को वस्तु विधान और घटना शृंखला में परिवर्तित किया गया है अथवा नहीं ? काव्यगत प्रौढ़ता की जाँच वह कवि–दर्शन, युगीन सन्दर्भ और कम से कम उसी प्रकार की रचनाओं को ध्यान में रखकर करे। इस प्रकार लम्बी कविता पाठक और आलोचक को वैचारिक उथल–पुथल के बीच छोड़ देती है। वह अन्तिम निष्कर्ष में नहीं जीती। इसी बिन्दु पर आकर संस्कारी पाठक कविता में उठाये गये सवालों की खोज में निकल पड़ता है। पाठक के भीतर यह छटपटाहट ही कवि और उसके तनाव की सफलता का द्योतक है और यही कवि के लिए सबसे बड़ी चुनौती भी है कि लम्बी कविता को उसकी जटिल संरचना के बावजूद तनाव के विभिन्न स्तरों के साथ सहृदय और प्रबुद्ध पाठकों तक पहुँचाने में समर्थ हो। इस क्रम में कवि को नये से नये रास्ते और प्रयोगों की तलाश करनी पड़ती है जिसकी एक प्रमुख तकनीक नाटकीयता है।

3. नाटकीयता

कई बार लम्बी कविता में नाटकीयता को नाटक या रंगोपकरणों से जोड़ दिया जाता है लेकिन लम्बी कविता में नाटकीयता का नाटक की रंग–भाषा के साथ कोई सीधा सम्बन्ध नहीं है। नाटकीयता को जिन रंगोपकरणों के साथ जोड़े जाने की बात उठायी जाती है, वे उपकरण नाटक की प्रस्तुति के हिस्से हैं यानी प्रकाश योजना, नृत्य, वेशभूषा, संगीत से जुड़कर रंगभाषा बनती है। नाटकीयता लम्बी कविता की एक विशेषता है, लेकिन पात्र के कथन मात्र को संवादों में रख देना नाटकीयता नहीं है। बड़ी बात है अन्तर्बाह्य संघर्ष और स्थितियों के पीछे की विसंगतियों और विडम्बनाओं को चित्रित करना। संवाद और पात्र योजना गौण हैं। सवाल यह है कि किसी कविता में ये दोनों नहीं होंगे तो क्या वह लम्बी कविता नहीं होगी ? लम्बी कविता में संवाद योजना बाहरी विकल्प के तौर पर अपनायी जाती है जिसका उद्देश्य सम्बन्धित चरित्र के मानसिक ऊहापोह और आंतरिक संघर्ष को प्रस्तुत करना होता है।

अभिधापरक अर्थ में लें तो नाटकीयता से तात्पर्य उस मंचीय अनुभूति से है

जिसके माध्यम से पाठक के नेत्रों के समक्ष दृश्य उपस्थित हो जाता है और वह पाठक से दर्शक की श्रेणी में आ जाता है। ऐसी स्थिति में अनुभूति की संप्रेषणीयता और अधिक सघन और प्रभावशाली बन जाती है, किन्तु लम्बी कविता में नाटकीयता का स्वरूप और अर्थ उसकी दृश्यात्मकता तक ही सीमित नहीं रहता वरन् इसके माध्यम से अराजक स्थितियों के पीछे क्रियाशील विसंगतियों की तलाश की जाती है। ''बिना नाटकीय रचना विधान के युगीन यथार्थ की छद्मता, द्वैधता और अन्तर्विरोधपूर्ण स्थिति के विविध पक्षों, रंगों को उघाड़ फेंकना सम्भव नहीं। युगीन यथार्थ के बहरूपीपन के मुखौटों को छीलने उतारने के लिए नाटकीय संरचना ही कारगर सिद्ध हो सकती है।'' कविता के भीतर नाटकीयता का गुण कभी चरित्रों, कभी उक्तियों, कभी रंगों तो कभी कविता की भावधारा के भीतर आने वाले मोड़ों के माध्यम से उत्पन्न होता है। इससे लम्बी कविता की लम्बी एकरस प्रकृति से पाठक को उबारा जा सकता है। पाठक भी प्रत्यक्ष रूप से कविता में स्वयं की भागीदारी अनुभव करता है। नाटकीयता से तनाव का प्रतिशत भी कम हो जाता है। नाटकीयता के माध्यम से कवि कविता में विद्यमान दो भावों, विचारों या दो मानसिकताओं के विरोधाभास को सम्मुख ला सकता है या सामने दिखा सकता है।

4. अन्विति

अन्विति का अर्थ है परस्पर सम्बद्धता, मेल या एकभाव। विचारों और भावों के तालमेल के बिना किसी भी प्रकार का सृजन नहीं हो सकता। हम जानते हैं कि लम्बी कविता में अनेक विषम और विरोधी खंड होते हैं। इस अनेकरूपता से उत्पन्न होने वाले बिखराव और अराजकता से कविता को बचाने के लिए उसके भीतर परस्पर संबद्धता को स्थापित करने वाली शक्ति का होना आवश्यक है। इस शक्ति को 'गहरा शैल्पिक अनुशासन' कहते हुए डॉ. बलदेव वंशी कहते हैं, ''यह अनेकरूपता आन्तरिक अन्विति तभी प्राप्त कर पाती है, जब कवि किसी सर्जनात्मक सूत्र को पकड़ कर गहरे शैल्पिक अनुशासन में उन्हें संगठित करता है, तब असंबद्ध, प्रसंगों–संदर्भों में भी एक संबद्धता दिखाई देती है अनेकरूपता में एकरूपता आ जाती है।''

लम्बी कविता में अन्विति बाह्य धरातल पर विशृंखल होते हुए भीतर से क्रमबद्ध एवं संगठित होती है। वह सीधी–सीधी और तार्किक हो भी सकती है और नहीं भी हो सकती किन्तु इस तार्किकता का आग्रह लम्बी कविता के भीतर किस स्तर तक हो इस विषय में कुछ नहीं कहा जा सकता। डॉ. नरेन्द्र मोहन ने 'लम्बी कविता का रचना विधान' में अन्विति के दो प्रकार – बिम्बात्मक और वैचारिक माने हैं। बिम्बात्मक अन्विति में सभी विवरण, संदर्भ और प्रसंग केन्द्रीय बिम्ब द्वारा संतुलित रहते हैं तो वैचारिक

अन्विति में किन्हीं विचार सूत्रों से जुड़े बिम्बों का अनवरत क्रम चलता है। बिम्बात्मक अन्विति आख्यान और बिम्ब से आरम्भ होकर विचार की ओर जा सकती है। वैचारिक अन्विति विचार से आरम्भ होकर बिम्ब की ओर जा सकती है। बिम्ब और विचार का यह तनाव ही लम्बी कविता की संरचना का मूल आधार है।

5. अन्तहीन अन्त

जीवन यथार्थ की गतिशीलता के कारण लम्बी कविता समापनरहित होती है। बड़ी दया और हँसी आती है अपनी अतिशय विद्वता का प्रदर्शन करने वाली ऐसी तथाकथित विदुषी आत्माओं पर जो लम्बी कविता में कोई पूर्व निर्धारित, निश्चित अन्त न पाकर उसे 'नेता का भाषण' या 'शैतान की लम्बी आंत' घोषित करते नहीं अघाते। लम्बी कविता किसी नेता का बेतरतीब भाषण नहीं है जिसे जितना चाहे खींचा जा सके! यह अपने दौर के जटिल और विसंगत यथार्थ के ज्ञान से जूझते कवि मन की पीड़ा की संवेदनात्मक अभिव्यक्ति है जिसमें वह स्वयं को अनुस्पंदित करने वाले ब्यौरों और दृश्यों को बिम्बों, प्रतीकों और ज़रूरी हो तो कभी फैण्टेसी के विधान में पिरोता है। आज हम जिस संक्रांति बेला से गुजर रहे हैं वहाँ समस्याओं का तो घना जंगल है लेकिन समाधान का एक अंकुर भी दिखाई नहीं देता। उपभोक्तावादी संस्कृति और बाज़ारीकरण के चलते भोंथरी हो गयी संवेदना कई बार अपने परिवेश की वास्तविकता से ही बेखबर हो जाती है। ऐसे में लम्बी कविता अगर समस्या की ओर संकेत मात्र ही कर दे तो यही क्या कम उपलब्धि है? दरअसल, समस्या एक होने पर भी समाधान एक नहीं होता क्योंकि समाधान जिस प्रक्रिया की अपेक्षा रखता है उसके क्रियाशील और सफल होने का प्रतिशत व्यक्ति की शक्ति और सामर्थ्य पर निर्भर करता है और शक्ति–सामर्थ्य सबकी भिन्न होती है। यूँ समझिए कि समस्या एक प्रश्न पत्र है। सभी प्रश्न पत्रों में सवाल एक से जबकि उत्तर–पुस्तिका भिन्न हैं। इसी प्रकार लम्बी कविता किसी अंतिम निष्कर्ष, समापन या समाहार पद्धति में विश्वास नहीं करती।

पाठक स्वयं किसी निष्कर्ष तक पहुँचे इसके लिए कविता को एक प्रवाहमान मोड़ पर लाकर छोड़ दिया जाता है। हिन्दी के विशिष्ट कवि गजानन माधव मुक्तिबोध ने 'आवेग त्वरित कालयात्री' कहकर कविता के कहीं भी खत्म न होने की बात की। कविता का अंत समापनरहित रहे तो ज्यादा प्रभावी और सार्थक होता है क्योंकि समाहाररहित अंत पाठक के लिए चिन्तन के अनेक सूत्र छोड़ जाता है। एक निश्चित समाधान खोजने में तल्लीन पाठक कविता के प्रभाव से लम्बे समय तक छूट नहीं पाता और कविता पढ़ी जाने के बावजूद मन में गुनी जाती रहती है। इस प्रकार लम्बी कविता पाठक को पाये

हुए अर्थ से उन्मथित करती हुई, कुछ अपर्याप्त को खोजने का उत्साह भी पैदा करती है।

2.4 सारांश – लम्बी कविता अपने कलेवर के कारण लम्बी होती है। दीर्घकालिक सर्जनात्मक तनाव के कारण कवि लम्बी कविता के विधान को चुनता है, जिसके लिए उसमें प्रतिभा एवं अभिव्यक्ति की सामर्थ्य का होना जरूरी है। पाठकीय दृष्टि से लम्बी कविता की विशेषताओं अर्थात तत्वों की पहचान इस अध्याय की विशेषता है।

2.5 कठिन शब्द – ज्ञानात्मक संवेदना, संवेदनात्मक ज्ञान, नाटकीयता, यथार्थ के परस्पर गुंफित तत्व, अनुभववाद, विचारवाद, विश्रान्ति, काव्य का संज्ञानात्मक और भावात्मक पक्ष, त्रिकोणी तनाव, अन्विति

2.6 अभ्यासार्थ प्रश्न–

प्र01 लम्बी कविता सम्बन्धी विभिन्न विद्वानों की परिभाषा दीजिए।

.....

.....

.....

प्र02 लम्बी कविता का अभिप्राय स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

प्र03 लम्बी कविता क्यों लम्बी होती है, उन कारणों को बताइए।

.....

.....

.....

प्र04 लम्बी कविता की तात्विक विवेचना कीजिए।

.....

.....

.....

प्र05 लम्बी कविता में अनुभव और विचार के संतुलन को कवि कैसे साधता है, बताइए।

.....

.....

.....

प्र06 दीर्घकालिक सर्जनात्मक तनाव के अंतगर्त तनाव की दीर्घकालिकता और तनाव की सर्जनात्मकता पर विचार कीजिए।

.....

.....

.....

प्र07 लम्बी कविता में नाटकीयता की अवधारणा स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

प्र08 लम्बी कविता की नाटकीयता और नाटक की नाटकीयता का अंतर बताइए।

.....

.....

.....

प्र09 बिम्बात्मक अन्विति और वैचारिक अन्विति स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

प्र10 समापनरहित अन्त अर्थात अन्तहीन अन्त पर टिप्पणी लिखिए।

.....

.....

.....

2.7 पठनीय पुस्तकें –

1) लम्बी कविता का रचना विधान – डॉ. नरेन्द्र मोहन

2) कहीं भी खत्म कविता नहीं होती – डॉ. नरेन्द्र मोहन

3) विचार और लहू के बीच – डॉ. नरेन्द्र मोहन

4) बीसवीं शताब्दी का उत्कृष्ट साहित्य : लम्बी कविताएं – डॉ. नरेन्द्र मोहन

6) समकालीन कविता की भूमिका – विश्म्भरनाथ उपाध्याय, मंजुल उपाध्याय

7) लम्बी कविताओं के बहाने – डॉ. रजनी बाला

8) लम्बी कविता : व्यापक परिदृश्य – डॉ. रजनी बाला

9) कविता का अंतःकरण और लम्बी कविता – अखण्डप्रताप सिंह

10) लम्बी कविता के वैचारिक सरोकार – बलदेव वंशी

11) समकालीन कविता की पहचान – युद्धवीर धवन

लम्बी कविता और काव्य की अन्य विधाएँ

3.0 रूपरेखा

3.1 उद्देश्य

3.2 प्रस्तावना

3.3 लम्बी कविता और काव्य की अन्य विधाएँ

3.4 सारांश

3.5 कठिन शब्द

3.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

3.7 पठनीय पुस्तकें

3.1 उद्देश्य

लम्बी कविता प्रचलित काव्य माध्यमों से अलग और स्वतन्त्र विद्या है। उसे महाकाव्यात्मक कविता नहीं कहा जा सकता। उसे प्रगीत के तत्वों के आधार पर जाँचा नहीं जा सकता। इसलिए लम्बी कविता का अन्तर कविता के अन्य रूपों के साथ स्पष्ट किया गया हैं ताकि विद्यार्थी ठीक ढंग से लम्बी कविता को समझ सके।

3.2 प्रस्तावना

चिर–परिचित अथवा परम्परागत कला प्रतिमान लम्बी कविता के लिए किसी काम के नहीं हैं। यह एक ऐसा काव्य विधान है जो अपनी तात्विक विशेषताओं के कारण नवीन एवं मौलिक है। इस अध्याय में महाकाव्य, खण्डकाव्य, एकार्थ काव्य, प्रगीत, छोटी कविता तथा काव्य शृंखला से लम्बी कविता के अन्तर को स्पष्ट किया गया है।

3.3 लम्बी कविता और काव्य की अन्य विधाएँ

20वीं सदी में अभिव्यक्तिगत जटिलता का हल लम्बी कविता के रूप में सामने आया किन्तु इस रूप के निर्माण में काव्य के अन्य रूपों के प्रभाव को विद्वानों ने लक्षित किया है। कविता के दीर्घ आकार को खण्डकाव्य या महाकाव्य के हवाले कर देने वालों की भी कमी नहीं है। कविता को सामान्य अर्थ में छोटी कविता का पर्याय मानने वालों में इस बात पर भी नाराज़गी है कि विचार को कविता के भीतर समाहित कर लेने की क्या पड़ी है जबकि गद्य ने विचारों की गठरी ढ़ोने की ज़िम्मेदारी उठा रखी है। ऐसे में हम भूल जाते हैं कि कविता का रूप तात्विक आधार पर नहीं, ज्ञानात्मक संवेदना और कवि–मस्तिष्क के घात–प्रतिघातों से नियन्त्रित होता है। यों भी लम्बी कविता का मूल कारण वैचारिक संघटना है। इसी वैचारिक सुगबुगाहट के कारण कवि के व्यक्तित्व, सामाजिक–सांस्कृतिक परिवेश और राजनीतिक सरोकार की आलोचनात्मक व्याख्या एवं अभिव्यक्ति ज़रूरी हो जाती है। दूसरी ओर स्थूल भावुकता और शुष्क कल्पना को कोई तरजीह नहीं दी जाती। काव्य के अन्य रूपों के ग्रहणीय तत्वों को आत्मसात करते हुए भी लम्बी कविता ने अपनी संरचना को किस प्रकार अलगाया इसे समझने के लिए काव्य के अन्य रूपों से लम्बी कविता के साम्य तथा वैषम्य को समझना ज़रूरी है।

1. महाकाव्य और लम्बी कविता

लम्बी कविता को पूर्व काव्य रूपों जैसे प्रबन्ध और प्रगीत के आधार पर नापने–जाँचने की कोशिशें हुई। डॉ. हरदयाल जयशंकर प्रसाद की 'कामायनी', मैथिलीशरण गुप्त के महाकाव्य 'साकेत' और सुमित्रानंदन पन्त के 'लोकायतन' के बदले हुए प्रबन्धकीय कलेवर के आधार पर सिद्ध करते हैं कि एक नये प्रकार की प्रबन्ध कविता उभर रही है, ''इस नये प्रकार की प्रबन्ध कविता को 'लम्बी कविता' नाम दिया जा सकता है। यहाँ तक कहा जा सकता है कि आधुनिक हिन्दी कविता में परम्परागत महाकाव्य और खण्डकाव्य की परिणति 'लम्बी कविता' में हो रही है।'' इस पुस्तक के एक अन्य संकलित लेखक डॉ. नरेन्द्र वशिष्ठ का मानना है, ''जिस प्रकार महाकाव्य में अनेक युगों की संचित जातीय अनुभूतियों, संवेदनाओं, सत्यों, दृष्टिकोणों तथा संघर्षों का विराट रेखांकन होता है, उसी प्रकार लम्बी कविता समसामयिक युग सत्य को उसकी संपूर्णता, संश्लिष्टता और नाटकीयता में पकड़ने की बड़ी कोशिश होती है। इसीलिए लम्बी कविता को महाकाव्यात्मक कहा जाता है।'' लम्बी कविता को महाकाव्य के धरातल पर आंकने वाली इन आलोचकीय टिप्पणियों के बाद इस तथ्य की पड़ताल करना आवश्यक है कि महाकाव्य और लम्बी कविता के बीच कौन से बिन्दु हैं जिनके आधार पर इनमें साम्य स्थापित किया जा सकता

है तथा अंतर की विभाजन रेखा खींची जा सकती है।

महाकाव्य और लम्बी कविता को जो तत्व जोड़ता है, वह है काव्यत्व, अन्यथा ये दोनों काव्य रूप अपनी रचना–प्रक्रिया में नितांत भिन्न हैं। एक ओर महाकाव्य की आदर्शवादी मान्यता और रसवादी मनोवृत्ति तो दूसरी ओर लम्बी कविता का बिखरा हुआ और विघटित यथार्थ । महाकाव्य में भाव और लम्बी कविता में विचार की प्रधानता होती है। यह भावुक संवेदना महाकाव्य में कथात्मकता के माध्यम से उभरती है और आदर्श की ओर बढ़ती है। महाकाव्य जहाँ आदर्श की सृष्टि के माध्यम से युग का संदेश देता है, वहीं लम्बी कविता एक तनाव की सृष्टि करती है, एक ऐसा तनाव जो पाठक को शांत न कर उसे उकसाता और व्याकुल करता है।

महाकाव्य में कल्पना तथा अलौकिक घटनाओं का समावेश कथ्य को गति प्रदान करता है किन्तु लम्बी कविता की शैली गद्यात्मक व्याख्या, स्वप्न और फैंटेसी से निर्मित होती है। महाकाव्य का अंत युग को संदेश देने वाला होता है और यही उसका महत् उद्देश्य भी होता है किन्तु लम्बी कविता का अंत अंतहीन होता है। इसके अतिरिक्त लम्बी कविता का विघटित मनुष्य महाकाव्य के मर्यादा पुरुषोत्तम और सम्पूर्ण व्यक्तित्व के परम्परागत ढांचे में नहीं अंटता। महाकाव्य की रसवादी मनोवृत्ति के स्थान पर लम्बी कविता में अनुभूति की सघनता और व्यापकता पर बल दिया जाता है। महाकाव्य में जहाँ शाश्वत मूल्यों की स्थापना रहती है वहाँ लम्बी कविता में काल बोध प्रमुख होता है। प्रबन्ध काव्यों के परम्परागत तत्वों जैसे कथानक, चरित्र चित्रण, प्रकृति चित्रण, भाव निरूपण, सौंदर्य निरूपण आदि से लम्बी कविता का कोई सरोकार नहीं रह गया है फिर भी लम्बी कविताओं में कुछ ऐसी विशेषताएं अवश्य होती हैं जो उसकी प्रबन्धात्मकता को बनाये रखती हैं अथवा इसे इस तरह भी कहा जा सकता है कि वे तत्व कविता को प्रदीर्घता प्रदान करने में सहायक होते हैं। अविच्छिन्न प्रवाह, वैयक्तिक जीवन दर्शन और जीवन मूल्य, सामाजिक चेतना, मनोविज्ञान तथा सौंदर्य बोध आदि कुछ ऐसे तत्व हैं जो लम्बी कविताओं में प्रबन्धात्मकता के गुण उत्पन्न कर देते हैं हालांकि लम्बी कविता में कथानक आवश्यक नहीं है। हाँ, इतना ज़रूर है कि कुछ विद्वान कथानक का सूक्ष्म, महीन, झीना सा ही सूत्र क्यों न हो ज़रूरी मानते हैं।

महाकाव्य में चरित्र का सर्वाधिक महत्व होता है। काव्य का नायक कोई ऐतिहासिक पुरुष होता है जिसके चरित्र पर प्रबन्धकार का विशेष ध्यान रहता है। इसके साथ अनेक सहायक चरित्र होते हैं। परन्तु लम्बी कविताओं में कवि स्वयं केन्द्रीय चरित्र

रु

की भूमिका निभाता हुआ अपनी बात कई तरह से कहता है। महाकाव्य में प्रकृति उद्दीपन रूप में अथवा नायक–नायिका के वर्णन हेतु आती है जबकि लम्बी कविता में बिम्ब रूप में और आमतौर पर बिम्ब से प्रतीक में बदल जाती है। महाकाव्य में समस्त शब्दालंकार तथा अर्थालंकार के सभी भेदोपभेद पाये जाते हैं किन्तु लम्बी कविता में रूपगत चमत्कार की अपेक्षा सशक्त अभिव्यंजना पर विशेष आग्रह होता है।

दरअसल, अक्सर पूर्ववर्ती काव्य–रूपों और उनके प्रतिमानों पर हमारी आस्था अधिक बनी रहती है। हम भूल जाते हैं कि समकालीन दबावों और तनावों से जूझती कविता की अपनी खास ज़रूरत और अंदाज भी हो सकता है। इस संदर्भ में देखें तो महाकाव्यों में भी युग के अनुरूप परिवर्तन हुआ है। आधुनिक महाकाव्यों में तनाव तो हो सकता है किन्तु निश्चित कथा जुड़ी रहने से इनका तनाव सुनिश्चित, पूर्व निर्धारित अथवा पाठकीय कल्पना के अनुकूल होता है जबकि लम्बी कविता में घटना के दबाव से तनाव विविध आयामी, अनिश्चित और पाठकीय बुद्धि एवं चेतना को झकझोरने वाला होता है। महाकाव्य का तनाव नायक अथवा कथानक से जुड़ा हुआ, लम्बी कविता में दीर्घकालिक होने के कारण आद्यन्त कविता पर छाया रहता है और सर्जनात्मक होने से यथार्थ के गतिशील रूपों–प्रसंगों से जुड़ा होता है। लम्बी कविता में अविच्छिन्न प्रवाह वास्तव में उसकी वैचारिक और बिम्बात्मक अन्विति के कारण दिखाई देता है जबकि महाकाव्य में सचेष्ट होता है।

2. खंडकाव्य और लम्बी कविता

लम्बी कविता से खंडकाव्य की तुलना यदि की जाये तो कमोवेश वे सभी मुद्दे उभर कर आयेंगे जो महाकाव्य और लम्बी कविता के तुलनात्मक अध्ययन के दौरान उभरे हैं। सर्ग विभाजन की परंपरा खंडकाव्य में विद्यमान है जिसका लम्बी कविता में पूर्णतः निषेध है। यहाँ ध्यान देने की बात है कि हिन्दी में भी कुछ सर्गविहीन खंडकाव्य लिखे गये। खंडकाव्य की भाँति लम्बी कविता छंदविधान में भी विश्वास नहीं रखती। खंडकाव्य में नायक, उद्देश्य और वर्णन शैली जैसी आधारभूत अभिव्यक्तिगत मान्यताएं भी लम्बी कविता से सर्वथा भिन्न हैं। खंडकाव्य में चारित्रिक विकास का पूर्ण अवसर होता है जबकि लम्बी कविता चरित्रों की अपेक्षा स्थितियों को उभारती है। खंडकाव्य का तनाव सुनिश्चित होता है क्योंकि इसके साथ कथा तत्व अनिवार्य रूप से जुड़ा होता है जबकि लम्बी कविता में तनाव बहुआयामी होने के कारण अनिश्चित होता है। खंडकाव्य का तनाव कथा या नायक से जुड़ा एकआयामी है लेकिन लम्बी कविता में यह दीर्घकालिक

और यथार्थ के गतिशील रूपों, प्रसंगों, घटनाओं से जुड़ा होने के कारण व्यापक और विविध आयामी होता है। खंडकाव्य में सामंतकालीन विश्वास और धारणाएं क्रियाशील होती हैं जबकि लम्बी कविता आधुनिक जीवन की जटिलताओं से जुड़ी होती है। खंडकाव्य में चाहे परंपरागत धरातल की रस योजना न हो किन्तु रस स्थिति की प्रधानता रहती है। उदात्त भाव का चरम उत्कर्ष खंडकाव्यकार का लक्ष्य होता है, किन्तु लम्बी कविता रस के आधारभूत आनंद तत्व का निषेध कर जटिलताओं की ओर बढ़ती है। इस प्रकार महाकाव्य का लघु रूप होने पर भी खंडकाव्य लम्बी कविता से किसी प्रकार का कोई साम्य नहीं रखता । दोनों के आधारभूत तत्व और अभिव्यक्तिगत मान्यताएं सर्वथा भिन्न हैं जो लम्बी कविता के वैशिष्ट्य का आधार है।

3. एकार्थ काव्य और लम्बी कविता

प्रबन्ध काव्य के दो मुख्य भेदों महाकाव्य और खंडकाव्य के अतिरिक्त विद्वानों ने एक तीसरा रूप भी ढूँढ़ निकाला है वह है – एकार्थ काव्य। इस में महाकाव्य का विस्तार तो होता है पर महाकाव्य के लक्षण नहीं होते। यह महाकाव्य और खंडकाव्य के बीच की स्थिति है। महाकाव्य में कथानक कई मोड़ लेकर आगे बढ़ता है पर इसमें कथानक सीधा चलता है जिससे कथानक में जटिलता पैदा नहीं होती। प्रबन्ध काव्य के इस रूप में एक ही सीधी कथा होने के कारण इसे 'एकार्थ काव्य' कहा जाता है। दिनकर के 'कुरूक्षेत्र', नरेश मेहता की 'संशय की रात' को एकार्थ काव्य माना जा सकता है। एकार्थ काव्य में जीवन के किसी एक पक्ष का और लम्बी कविता में विचार का विस्तार होता है। एकार्थ काव्य का आधार ऐतिहासिक–पौराणिक होता है जबकि लम्बी कविता में समसामयिक संदर्भों का दखल होता है। एकार्थ काव्य में परम्परागत शास्त्रीय नियमों का पालन जबकि लम्बी कविता में मुक्त छन्द का निर्वाह किया जाता है क्योंकि युगीन जटिलता को छन्दों की बंदिश में नहीं बांधा जा सकता। एकार्थ काव्य प्रबन्ध का एक प्रकार विशेष है जबकि लम्बी कविता स्वतः पूर्ण स्वतंत्र काव्य विधा है।

4. प्रगीत और लम्बी कविता

प्रबंध काव्य के एकदम विरोधी छोर पर प्रगीत से प्रतिमानों को उधार लेकर लम्बी कविता को जाँचने की कोशिशें की गयीं। सवाल यह है कि क्या प्रगीत की भावुकता और भावों के तीव्र प्रवाह को लम्बी कविता की वैचारिक संवेदना से जोड़ा जा सकता है ? प्रगीत में अनुभूति का एक क्षण होता है लम्बी कविता में काल सीमा बड़ी होती है। जो फर्क एक छोटे से झरने और सागर में है वही छोटी कविता और लम्बी कविता में है।

प्रगीत में कोई एक भाव अपनी लयात्मकता के साथ क्रियाशील होता है जबकि लम्बी कविता में अनेक भाव परस्पर विरोधी होते हैं। प्रगीत में अनुभूति रागात्मक जबकि लम्बी कविता में ज्ञानात्मक, वैचारिक और यथार्थपरक होती है। प्रगीत में सौन्दर्य, राग, हर्ष, शोक के वैयक्तिक पहलू प्रधान होते हैं। लम्बी कविता बहुआयामी द्वन्द्व, बाह्य उत्पीड़न और राजनीतिक संघर्ष की समूहगत वैचारिक प्रस्तुति है। लम्बी कविता अपने स्वरूप और प्रकृति में भी प्रगीत से भिन्नता रखती है। डॉ. रामदरश मिश्र के शब्दों में कहें तो ''लम्बी कविता का कथ्य समकालीन परिवेश, इतिहास, समाज और व्यक्ति के मानसिक द्वन्द्व का विराट फलक पर विराट चित्रण है। उसका जन्म इस अनिवार्य भूमि पर होता है, लेकिन जहाँ मानव मन किसी सौन्दर्य, राग, सत्य के किसी कोण को गहरा छू जाता है, वहाँ गीत की भूमिका होती है। यह कथ्य अपेक्षाकृत आत्मप्रधान होता है। यह विश्लेषणात्मक, बुद्धि बोझिल, लम्बा और जटिल नहीं होता है।'' प्रगीत भावप्रधान शैली है, लम्बी कविता ज्ञानात्मक अनुभूति पर आधारित है। प्रगीत सौंदर्यात्मक और रागात्मक तत्वों को सम्मिलित करता है, लम्बी कविता इसके ठीक विपरीत द्वन्द्व और विसंगति से जूझती वीभत्स रूप धारण कर लेती है। प्रगीत का निश्चित अंत होता है जबकि लम्बी कविता अंतहीन होती है। प्रगीत बिम्ब प्रधान विधा है और लम्बी कविता में नाटकीयता प्रमुख होती है। भाव की लयात्मक अभिव्यक्ति प्रगीत का गुण है जबकि भावात्मक हृदय की विचारगत, तार्किक अभिव्यक्ति लम्बी कविता की खासियत है। प्रगीत में अनुभूति खंडित नहीं होती जबकि लम्बी कविता इसका अपवाद है। प्रगीत में संगीतात्मकता रहती है और लम्बी कविता में आंतरिक लय, जो कई बार छिपी भी रह सकती है। प्रगीत की प्रकृति एक रेखीय होती है जबकि लम्बी कविता में अन्विति के कई घुमावदार और वक्र मोड़ होते हैं। प्रगीत में आकारगत लघुता के कारण पूर्वापर क्रम की संवेगात्मक एकता विद्यमान रहती है जबकि लम्बी कविता मे बंधे बंधाए निश्चित क्रम का अभाव होता है हालांकि उसमें निहित आंतरिक विचार या बिम्ब उसे कहीं न कहीं जोड़े रहता है।

नामवर सिंह 'कविता के नये प्रतिमान' पुस्तक के लेख 'काव्य संरचनाः प्रगीतात्मक और नाटकीय' में प्रगीत के सन्दर्भ में अनुचिन्तन को अनुभूति के पर्याय रूप में स्वीकारते हैं और उसके एकरेखीय स्वरूप को नकारते हुए उसे वर्त्तुलाकार बताते हैं। वे भूल गये कि अनुचिन्तन और वर्त्तुलाकार संरचना लम्बी कविता का महत्वपूर्ण पहलू है, छोटी कविता या प्रगीत का नहीं। इस लेख से इतना तो स्पष्ट है कि अनुचिन्तन और वर्त्तुलता को वे प्रगीत के प्रतिमान मान रहे हैं और जब ये दोनों लम्बी कविता के भी तत्व मान लिये गये, तब प्रगीत के आधार पर उसे जाँचने की पहल हुई। नतीजन, लम्बी कविता के

सन्दर्भ में गलत आलोचना पद्धति का बीजारोपण हुआ। प्रगीत तीव्र आत्मनुभूतियों एवं उद्दाम भावावेग की निश्छल अभिव्यक्ति है जबकि लम्बी कविता वर्तमान संश्लिष्ट जीवनानुभव और भीतर की दोहरी मार से उत्पन्न हुई है। प्रगीत में जिस विशेष सुखात्मक–दुःखात्मक अनुभूति का अंकन होता है वह अखण्ड और अभिन्न होती है जबकि लम्बी कविता में इस अखण्डता को अनिवार्य नहीं माना जा सकता। वस्तुतः लम्बी कविता की वैचारिकता, प्रगीत की भावुक संवेदना से नितांत भिन्न है। भावुकता के कारण प्रगीत में यथार्थ की अभिव्यक्ति न के बराबर होती है जबकि यह यथार्थ ही लम्बी कविता का आधार है। काव्य के इन दोनों रूपों में केवल कथा तत्व से मुक्ति के स्तर पर ही समानता देखी जा सकता है।

5. छोटी कविता और लम्बी कविता

लम्बी कविता के साहित्य क्षेत्र में पदार्पण से पूर्व कविता को कविता के रूप में ही मान्यता प्राप्त थी किन्तु लम्बी कविता के सष्जन के साथ उसे छोटी कविता के संदर्भ में जांचने की अनिवार्यता हुई। वर्ड्स्वर्थ ने जब कविता के विषय में यह कहा कि वह भावावेग की त्वरित अभिव्यक्ति है तब शायद उनके चिंतन के केन्द्र में छोटी कविता ही रही होगी। यह भावावेग की त्वरित अभिव्यक्ति ही छोटी कविता और लम्बी कविता के बीच रेखा खींच देती है। सामाजिक अनुभव से प्राप्त वैयक्तिक बोध और उस बोध की अनुभूति छोटी कविता का प्रेरक तत्व है। अनुभूति के तीव्र आवेग और विशिष्ट क्षणों की मानसिकता का प्रतीक छोटी कविता है। छोटी कविता वस्तुतः वह भावनात्मक सृष्टि है जो कवि के मनोवेगों के भीतर उत्पन्न हुई और तुरंत पन्नों पर अभिव्यक्त हो गयी, जिसमें भावुक संवेगों की प्रधानता होती है। छोटी कविता में वैचारिकता को भी पूर्णतः खारिज नहीं किया जा सकता। छोटी कविता में भी द्वन्द्व और टकराहट का स्वर सुना जा सकता है किन्तु यह द्वन्द्व लम्बी कविता की तरह व्यापक स्तर पर नहीं होता।

यहीं पर ध्यान देने की बात है छोटी कविता में एक या दो बिम्ब–प्रतीक केन्द्र में होते हैं जबकि लम्बी कविता में बिम्बों और प्रतीकों का एक प्रवाह सा चलता है। छोटी कविता प्रायः एक मूड में और एक बैठक में लिखी जाती है जबकि लम्बी कविता अनेक विषम खण्डों की यात्रा है। छोटी कविता विशेष अनुभव को उसकी विशिष्टता में भावावेग के सहारे अभिव्यक्त करती है। लम्बी कविता में जीवन के गुथे, कसे, संश्लिष्ट पक्ष की अन्विति से अनुशासित नाटकीय अभिव्यंजना होती है। इस प्रकार छोटी कविता और लम्बी कविता की प्रकृति और अभिव्यक्ति बिल्कुल अलग है। डॉ. नामवर सिंह छोटी कविता को मूलतः प्रगीत मानते हैं जबकि सामान्य रूप से छोटी कविता में भावों का तीव्र

आवेग एवं प्रगीत में संगीत तत्व होता है। दूसरे, वे अनुभूति की तीव्रता और सघनता को एक मान बैठे हैं जबकि अनुभूतिगत तीव्रता छोटी कविता में, सघनता लम्बी कविता में बेहतर विकल्प के तौर पर समाहित रहती है। यहाँ यह भी स्पष्ट कर दें कि कुछ छोटी कविताओं को एक साथ रख देने से लम्बी कविता नहीं बनती।

6. काव्य शृंखला और लम्बी कविता

काव्य शृंखला में आंतरिक अनुभव की वह गहरी बुनावट नहीं होती जो लम्बी कविता में होती है। काव्य शृंखला में कवि अनेक काव्य पंक्तियों, छन्दों को एक प्रसंग, संदर्भ, घटना या मानसिकता के तौर पर जोड़ता है। लम्बी कविता में केन्द्रीय स्थिति के साथ विभिन्न भाव एवं मनोदशाओं की गहरी बुनावट होती है। यहाँ सवाल उठता है कि क्या काव्य शृंखला को लम्बी कविता कहा जा सकता है ? जहाँ तक काव्य शृंखला को लम्बी कविता मानने की बात है यह इस पर निर्भर करेगा कि वह काव्य शृंखला कैसी है ? कई बार सारी शृंखला में इतना भीतरी ताप होता है कि तनाव एक से दूसरी, दूसरी से तीसरी और चौथी कड़ी में फैलता जाता है या कोई विधायक बिम्ब, प्रतीक या विचार उन्हें जोड़ देता है। इन दोनों आधारों भीतरी ताप और विधायक बिम्ब, प्रतीक या विचार पर काव्य शृंखला को लम्बी कविता का एक शिल्पगत प्रयोग मान सकते हैं। वैसे सामान्य तौर पर काव्य शृंखला को लम्बी कविता नहीं कह सकते।

इस प्रकार लम्बी कविता काव्य की अन्य विधाओं से सर्वथा भिन्न है। इसीलिए उसका स्वतन्त्र अस्तित्व है।

3.4 सारांश – लम्बी कविता को पहचानने में जो गलतियाँ की जाती है अथवा अन्य काव्य विधाओं के खेमे में इसे डालने की कोशिश की जाती है उनका निवारण इस पाठ से संभव है क्योंकि यहाँ लम्बी कविता को एक स्वतन्त्र, नवीन और पूर्ण विधा के रूप में स्थापित किया गया है।

3.5 कठिन शब्द – स्थूल भावुकता, शुएक कल्पना, यथार्थ के गतिशील रूप, एकरेखीय, वर्त्तुलाकार।

3.6 अभ्यासार्थ प्रश्न –

प्र01 लम्बी कविता एक स्वतंत्र काव्य विद्या है, स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

प्र02 महाकाव्य और लम्बी कविता का अन्तर बताइए।

.....

.....

.....

प्र03 खंडकाव्य और लम्बी कविता का अंतर बताइए।

.....

.....

.....

प्र04 प्रगीत और लम्बी कविता का अन्तर बताइए।

.....

.....

.....

प्र05 छोटी कविता और लम्बी कविता का अन्तर बताइए।

.....

.....

.....

प्र06 क्या किसी काव्य–शृंखला को लम्बी कविता कहा जा सकता है, युक्तियुक्त उत्तर दीजिए।

.....

.....

3.7 पठनीय पुस्तकें –

1) लम्बी कविता का रचना विधान – डॉ. नरेन्द्र मोहन

2) कहीं भी खत्म कविता नहीं होती – डॉ. नरेन्द्र मोहन

3) विचार और लहू के बीच – डॉ. नरेन्द्र मोहन

4) बीसवीं शताब्दी का उत्कृष्ट साहित्य : लम्बी कविताएं – डॉ. नरेन्द्र मोहन

6) समकालीन कविता की भूमिका – विश्म्भरनाथ उपाध्याय, मंजुल उपाध्याय

7) लम्बी कविताओं के बहाने – डॉ. रजनी बाला

8) लम्बी कविता : व्यापक परिदृश्य – डॉ. रजनी बाला

9) लम्बी कविता के वैचारिक सरोकार – बलदेव वंशी

लम्बी कविता का ऐतिहासिक विकास

4.0 रूपरेखा

4.1 उद्देश्य

4.2 प्रस्तावना

4.3 लम्बी कविता का ऐतिहासिक विकास

4.4 सारांश

4.5 कठिन शब्द

4.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

4.7 पठनीय पुस्तकें

4.1 उद्देश्य

लम्बी कविता के लगभग एक सौ वर्षों के इतिहास से विद्यार्थी परिचित हो सकेंगे। लम्बी कविता के उद्भव और ऐतिहासिक विकास के विभिन्न पड़ावों का अध्ययन इस पाठ में किया गया है।

4.2 प्रस्तावना

लम्बी कविता के विकास क्रम को अनेक प्रकार से देखा जा सकता हैं आज़ादी से पहले और उसके बाद की लम्बी कविता, विभिन्न दौरों अर्थात वाद विशेष की लम्बी कविता, प्रवृत्ति विशेष भी अभिव्यक्ति करने वाली लम्बी कविता– ऐसे अनेक दृष्टि भेदों का विवेचन करते हुए लम्बी कविता और उसके कवियों की पहचान यहाँ की गई है।

4.3 लम्बी कविता का ऐतिहासिक विकास

लम्बी कविता के विकास को तीन प्रकार से रेखांकित किया जा सकता है। एक

तरीका नरेन्द्र मोहन ने बताया कि आज़ादी को केन्द्र में रखकर इसे दो दौरों में बांट दिया जाये। एक आज़ादी से पहले की लम्बी कविताएं जिनमें मुख्य रूप से छायावादी दौर में लिखी लम्बी कविताएं आती हैं। दूसरा आजादी के बाद का काल जिसमें नयी कविता के दौरान लिखी गई लम्बी कविताओं से लेकर आज़ तक की लम्बी कविताओं को समेटा जा सकता है। डॉ. हरदयाल ने 'रागात्मक और वैचारिक आयाम' लेख में लम्बी कविता के समस्त विकास–क्रम को कथ्य के आधार पर आख्यानाश्रयी और आख्यानहीन लम्बी कविताओं के रूप में स्पष्ट किया है। ऐसा देखने में आया है कि प्रत्येक 15–20 साल के अन्तराल पर लम्बी कविता में कथ्यगत और शिल्पगत परिवर्तन होता रहा है। इस बदलाव कों ध्यान में रखते हुए इसके पाँच दौर इंगित किये जा सकते हैं। प्रारंभिक काल अर्थात् छायावादी दौर की लम्बी कविताएं, छायावादोत्तर काल अर्थात् प्रगतिवाद–प्रयोगवाद काल की लम्बी कविताएं, नयी कविता के समय लिखी गयी लम्बी कविताएं, अकविता एवं विचार कविता दौर की लम्बी कविताएं और 20वीं शताब्दी के अन्तिम दो दशकों से लेकर आज तक की लम्बी कविताएं। लम्बी कविता विविध कालों और 'वाद' विशेष में बेशक लिखी गयी किन्तु उसकी संरचना और विषय–वस्तु पर उस काल की प्रवृत्ति विशेष को जबरन थोपा नहीं जा सकता।

छायावाद को लम्बी कविता की दृष्टि से (सुमित्रानन्दन पन्त की 'परिवर्तन' को छोड़ दे ंतो) आख्यानक काल कहा जा सकता है। मात्र परिवर्तन तक सीमित रहना परिवर्तन की सीमा है फिर भी इसके छोटे–छोटे बिन्दु परिवर्तन की केन्द्रीय स्थिति से जुड़कर इसे लम्बी कविता बनाते हैं किन्तु कवि इन छोटे–छोटे खण्डों में हताशा, निराशा के भाव से उबर नहीं पाया है। ऐसा लगता है कि भारतीय दर्शन की क्षणभंगुरता और तद्जनित तनाव उसके संस्कार में रच–बस गया है। छायावादी ढर्रे के परिवर्तन को दशाने और किसी आख्यान या कथा तत्व के सहारे बिना एक ही केन्द्रीय भाव से जुड़कर 'परिवर्तन' लम्बी कविता के इतिहास से लेकर आज तक एक अलग स्थान बनाये हुए है।

सुखद पहलू यह है कि आख्यान के निमित्त अन्तर्मुखी अनुभूतियों की कल्पनाश्रित कलात्मक अभिव्यक्ति करने की प्रक्रिया में इस दौर की लम्बी कविताओं ने कथ्य और कल्पना के सभी धरातलों पर विद्रोह किया। जयशंकर प्रसाद की आँसू विरहजन्य वेदना की भावुकता के कारण लम्बी कविता बनते–बनते रह गयी जबकि **प्रलय की छाया** में उन्होंने आख्यान की लयपरक तनाव में अभिव्यक्ति कर नयी कविता के दौरान रची गयी लम्बी कविताओं के लिए लय की आधार भूमि रखी। यहाँ कथ्य के आख्यानपरक आधार के बावजूद कवि ने अपने चिन्तन को ही रचनात्मक स्तर पर कथात्मक रूप दिया है।

इस काल में निराला ऐसी सर्जनात्मक प्रतिभा के रूप में उभरे जिन्होंने एकाधिक कविताओं की रचना की। **यमुना के प्रति, महाराज शिवाजी का पत्र, पंचवटी–प्रसंग, तुलसीदास** जैसी लम्बी कविताएं छायावादी संस्कार से मुक्त नहीं हैं जबकि **राम की भाक्ति पूजा** तनाव के बहुआयामी फैलाव और भाषा की नयी भंगिमा अपनाकर कई अनछुए पहलुओं तक पहुँची है। मिथक के लिए वस्तुबोध की जिस तैयारी और भाषा की नयी भंगिमा की ज़रूरत होती है उसका चरम विकास 'राम की शक्ति–पूजा' में देखा जा सकता है। बड़ी बात यह है कि निराला ने प्रबन्धात्मकता के चौखटे को नकारते हुए या अपर्याप्त मानते हुए राम कथा के बहुत ही सूक्ष्म और झीने आवरण को लम्बी कविता के धरातल पर प्रस्तुत किया है। मिथक को निजी और समसामयिक प्रासंगिकता के मद्देनजर यहाँ रखा गया है, ''स्थिर राघवेन्द्र को हिला रहा फिर–फिर संशय'' से कवि राम को आम आदमी की तरह तनावग्रस्त दिखाता है। दूसरी तरफ *''है अमानिशा; गगन घन अन्धकार; खो रहा दिशा का ज्ञानःस्तब्ध है पवन–चार''* कहकर आधुनिक मूल्यघाती परिस्थितियों और बाह्य परिवेश के साथ आन्तरिक धरातल पर मचे हाहाकार को रेखांकित करता है। राम यहाँ दिशाहीन आधुनिक मानव और स्वयं निराला के रूप में, रावण गुलामी के अभिशाप और सीता आज़ादी की आकांक्षा के रूप में व्याख्यायित है। रावण की जय का भय और महाशक्ति का रावण के पक्ष में होना दरअसल आज की विविध आयामी अराजकता को ही रूपायित करता है। 'राम की शक्ति पूजा' इन्त्यानुप्रास के कारण परम्परागत काव्य संस्कार से प्रभावित बेशक लगे किन्तु भाषा का विशिष्ट तेवर और राम कथा से जुड़े प्रसंगों का प्रतीकात्मक प्रयोग इसे समस्त छायावादी संस्कार से अलगाकर अलग चमक देता है। इस लम्बी कविता की ओजपूर्ण भाषा राम के संघर्षशील तनाव की अनिवार्यता बनकर उभरी है और इस तरह छायावादी दौर की सीमाओं को लांघ जाती है। इस प्रकार छायावादी दौर की लम्बी कविताओं ने प्रबन्धात्मक ढांचे को नकारा। दूसरे कविता को कोरी भावुकता की कैद से मुक्त भी कराया। तीसरे, तनाव को सैद्धान्तिक स्तर पर न झेलकर सर्जक से जोड़कर अधिक विश्वसनीय और संघर्षपरक बनाया।

प्रगतिशील कविता में सामान्य जन और प्रयोगशील कविता में लघु मानव की प्रतिष्ठा में निराला की लम्बी कविता **कुकुरमुत्ता** का विशेष योगदान है। संवेदना और शिल्प के प्रत्येक धरातल पर काव्य अभिजात्य से मुक्ति की घोषणा इस लम्बी कविता ने की। तनाव से संचालित होने वाले इस काव्य माध्यम को निराला ने हास्य–व्यंग्य का जामा पहनाया और नये प्रकार के काव्य शिल्प की आधारशिला रखी। वैयक्तिक वेदना के रुदन से परे निम्न–उच्च वर्ग के बीच ऐतिहासिक द्वन्द्व की अभिव्यक्ति किसी भी

प्रकार के सैद्धान्तिक बाड़े से अलग हटकर हुई। 'गुलाब–कुकुरमुत्ते' और 'बहार–गोली' के बीच का अन्तर एवं टकराव युग की ऐतिहासिक अनिवार्यता के रूप में प्रस्तुत हुआ। व्यंग्य का निशाना गुलाब, फारस से गुलाब मंगने वाला नव्वाब और उसकी बेटी बहार भी बनते हैं। मौना बंगालिन की बेटी गोली आम आदमी को प्रतिष्ठित करती है। उसकी प्रतिष्ठा से परेशान होते हैं नवाब, गुलाब और बहार। निराला ने पहली बार आम आदमी में वह शख्सियत ढूँढ़ निकाली जिससे वह उच्च वर्ग को भी तनावग्रस्त कर सकता है। एकालाप शैली में दो अन्तरालों वाली यह लम्बी कविता काल, इतिहास, समाज, संस्कृति, साहित्य–दार्शनिक सन्दर्भ सब कुछ को अपने में समेटती चलती है। इस लम्बी कविता के वैशिष्ट्य का मुख्य कारण भाषा का आश्चर्यजनक प्रयोग है। अभिजात्यवादी भाषा संस्कार, लाक्षणिक पद योजना, संस्कृतनिष्ठ तत्सम पदावली से कोसों दूर ठेठ सपाट, देशज, अनुप्रयुक्त शब्दों को इसमें महत्व मिल है। शब्द अपने सपाट और कभी–कभी अकाव्यात्मक रूप में कितने अर्थपूर्ण और प्रभावशाली होते हैं, इसका उदाहरण 'कुकुरमुत्ता' प्रस्तुत करती है। छंद और लय को गद्यात्मक मुहावरे में ढ़ालकर निराला ने मुक्त छंद के लिए अनेक संभावनाएं खोलीं। बड़ी बात और ऐतिहासिक द्वन्द्व को सरल लेकिन गहरी भाषा में रखना रचना–कर्म की दृष्टि से बेहद कठिन है।

नयी कविता की लम्बी कविताओं का चरित्र मिथकीय और आख्यानपरक है। इस काल की आख्यान आधारित लम्बी कविताएं इस मायने में भिन्न हैं कि मिथक और इतिहास के साथ बिम्ब एवं फैण्टेसी की केन्द्रीय सत्ता इन्हें अन्वित करती है। इस प्रकार इस दौर की लम्बी कविताओं के दो उपवर्ग हो जाते हैं। धर्मवीर भारती की **प्रमथ्यु गाथा,** अज्ञेय की **असाध्यवीणा,** हरवंशराय बच्चन की **दो चट्टानें अथवा सिसिफस बरक्स हनुमान** में बिम्ब और विचार केन्द्र में है जबकि मुक्तिबोध की लम्बी कविताओं में बिम्ब, प्रतीक और फैण्टेसी की आख्यानरहित केन्द्रीय सत्ता है। 'प्रमथ्यु–गाथा' में आख्यान पश्चिमी है। कृतज्ञताहीन जनसाधारण से पीड़ित होने के बावजूद उदात्त मानव सापेक्ष भावना रखने वाला प्रमथ्यु ज्ञान, प्रकाश, स्वाधीनता रूपी अग्नि लाता है, किन्तु जनसाधारण के साथ स्वतन्त्र भारत और उसके साथ सम्पूर्ण विश्व इस ज्ञान रूपी अग्नि के ज़रिए विश्व युद्ध जैसे विध्वंसात्मक कार्य कर रहा है। यूनानी लोक मानस में रचे–बसे मिथकीय काव्यात्मक संयोजन का महत्व इस बात में है कि धर्मवीर भारती ने सभी पात्रों द्युतिपर, गीद्ध, प्रमथ्यु, जनसाधारण के वार्तालाप द्वारा पूरी कविता को साधा है, लेकिन इस की सीमा यह हे कि पात्र एक ही व्यान देते हैं कि जनता कुछ नहीं है। हालांकि कविता के अन्त में प्रमथ्यु का अदम्य विश्वास बना रहता है कि कभी तो जनता में सोया

प्रमथ्यु जागेगा। इस लम्बी कविता में घाटी, महल, भेड़, पर्वत आदि के बिम्ब धरती पर फैले अंधकार को रूपायित करते हैं। इस काव्य–नाटक रूपी लम्बी कविता में पात्र नियोजना और संवाद योजना के बावजूद नाटकीयता नहीं है। लम्बी कविता में नाटकीयता का उद्देश्य संवादों और पात्रों के ज़रिए स्थिति की परत–दर–परत उधाड़कर जिस विसंगति को व्यंजित कर तनाव का उत्कर्ष दिखाना होता है वह यहाँ सम्भव नहीं हो सका। पात्र प्रमथ्यु का साथ न निभा पाने और उस जैसा न बन पाने की सफाई देते हुए केन्द्रीय तनाव (प्रमथ्यु का तनाव जो अधिकार रूप में अग्नि छीनने और अगुआ बनने पर आजन्म उसका परिणाम भोगने के कारण है) से दूर हटते जान पड़ते हैं। स्पष्ट है कि अपनी संरचना में नाटकीय तत्व और लम्बे आकार को लेकर भी नाटकीयता के माध्यम से 'प्रमथ्यु गाथा' तनाव को 'ड्रिल' न कर पाने से सामन्य वातालाप बनकर रह गयी। तब क्या इसका महत्व सिर्फ काव्य–नाटक के बाह्य आकार को लम्बी कविता में रूपायित करने तक सीमित नहीं रह जाता ?

'असाध्यवीणा' में मिथक की अहमियत बिम्ब और प्रतीक से अधिक नहीं है। अज्ञेय ने मिथक का आंशिक सहारा लेकर बिम्बों को संजोते हुए यह विषय रखा था कि सृजन के लिए आत्मदान ज़रूरा है। इस विषय को लेकर लम्बी कविता में अभी काफी संभावनाएं हैं। सहृदय के संस्कार के अनुसार साधारणीकरण और संप्रेषण के विविध स्तर हो सकते हैं इस दृष्टि से भी 'असाध्यवीणा' पर बात की जा सकती है। 'वज्रकीर्ति' गुरू, 'केशकम्बली' साधक–कलाकार, 'राजा' शब्दानुशासक–काव्यनुशासक, 'रानी' सभ्यता–आवरण से सजी आधुनिक मानव की शुष्क बुद्धि, 'वीणा' कला या कलाम माध्यम, 'कम्बल' अहं, 'गुहागेह' कलाकार के आत्मबोध, 'किरीटी तरू' मानव परम्परा की विशालता, बाह्य सामाजिक जीवनानुभव का प्रतीक है। इस कविता में बिम्ब खासतौर पर वीणा बनजे से पहले के चाक्षुष बिम्ब और वीणा बज उठने के बाद के ध्वनि बिम्ब कला, कलाकार और सहृदय के त्रिआयामी सम्बन्ध को जोड़ते और खोलते हैं और साथ ही सांस्कृतिक जड़ों तक पहुँचते हैं।

'दो चट्टानें अथवा सिसिफस बरक्स हनुमान' का महत्व इस बात में है कि एक ही लम्बी कविता में भारतीय–पश्चिमी चरित्रों से जुड़ी मान्यताओं को बच्चन ने संभाला है। सिसिफस और हनुमान दोनों हीद अमरता के इच्छुक हैं।सिसिफस मृत्यु को बन्दी बनाकर और हनुमान, राम से वरदान माँग कर, *''शत्रु विनाशक राम/तुम्हारी कथा लोक में रहे जब तलक/तब तक/जीऊ इसी तरह मैं''* अमर हो जाना चाहते हैं। भारतीय होने के नाते बच्चन ने सिसिफस के मुकाबले हनुमान की श्रेष्ठता प्रतिपादित की है। सिसिफस

जीवन रूपी शिला अर्थात् चट्टान को बोझ और सजा के रूप में ढ़ोता है जबकि हनुमान ने पूरा पर्वत जो जीवन का प्रतिबिम्ब है, हाथ पर उठा रखा है। इस कविता में भी प्रमथ्यु अथवा प्रोमीथियस है किन्तु धर्मवीर भारती का प्रमथ्यु जनता का सहयोग नहीं मिलने से आमतौर पर निराश रहता है जबकि बच्चन का प्रोमिथियस बार–बार ढ़ोयी जाने वाली चट्टान को घिसते देख आशावान् है। 'दो चट्टानें' में देवता पूँजीवादी व्यवस्था, सिसिफस पूंजीवादी व्यवस्था में यान्त्रिक जीवन जीने वाला, प्रोमीथियस मानव को देवतुल्य बनाने के प्रयत्न में संघर्षशील मानव के रूप में सामने आते हैं।

छोटी कविता के लिए स्वयं को असमर्थ समझने वाले मुक्तिबोध की **ब्रह्मराक्षस** और **चकमक की चिंगारियाँ** जैसी लम्बी कविताओं का चरम विकास **अंधेरे में** मिलता है। पूर्ववती पैटर्न से अलग इसमें केन्द्रीय चरित्र अवचेतन है और केन्द्रीय तनाव अस्मिता की अभिव्यक्ति का है। जितना जटिल इसका तनाव है उतनी ही जटिल इसकी शैली और शिल्प भी है। प्रतीक बिम्ब और फैण्टेसी से जुड़कर आख्यानहीन दीर्घकालिक तनाव लम्बी कविता में कैसे अभिव्यक्ति किया जाये इस दृष्टि से 'अंधेरे में' चुनौती बनी रहेगी।

अकविता और विचार कविता के दौर में बड़ी मात्रा में लम्बी कविताएं लिखी गयीं। भारत–पाक और भारत–चीन युद्ध, आपातकाल जैसी अनचाही घटनाओं ने अनिश्चितता को जन्म दिया। ज़िन्दा रहने के लिए किसी विकल्प या कारण का इन्तज़ार इस दौर की लम्बी कविताओं का मूल स्वर है। समसामयिकता का दबाव इतना अधिक है कि बिम्ब, फैण्टेसी, आख्यान, मिथक से अलग हटकर स्वयं भाषा ही इस काल की लम्बी कविताओं के लिए समस्या बन गयी। भाषा के बदले तेवर के साथ लम्बी कविता उभरी। लम्बी कविता में सामाजिक चेतना उस घिनौने सच की तस्वीर सामने लाती है जिसके लिए कभी–कभी–कभी शिष्ट भाषा असंगत हो जाती है। लम्बी कविता के बाहरी ढाँचे में अकविता जैसी भाषा राजकमल चौधरी की **मुक्तिप्रसंग**, सौमित्र मोहन की **लुकमान अली** में है फिर भी अकविता का प्रभाव इन पर नहीं मानना चाहिए क्योंकि राजनीतिक विसंगति से जन्मे जिस तनावमय उत्कर्ष को कवियों ने संजोया है उसके कारण अकविता लहजे की भाषा भी श्लील–अश्लील के मापदण्ड के ऊपर उठ गयी। हालांकि पाठक की तात्कालिक प्रतिक्रिया शिल्पगत और भाषागत प्रयोग के उलझाव पर होती है। लम्बी कविताओं की परिधि में इसकी उपलब्धि प्रयोग की दृष्टि से अलग मानदण्ड प्रस्तुत करने की मानी जा सकती है जबकि 'मुक्ति प्रसंग' की भाषा उलझाती है। इस लम्बी कविता में उग्रतारा के जन्म के मिथक को प्रकृति और नारी के विविध रूपों के प्रतीक स्प में ग्रहण किया गया है। उग्रतारा भोग, मातृशक्ति, महामुद्रा, आदिम एवं शाश्वत नारी, प्रेयसी, माँ,

अन्नपूर्णा, संरक्षिका एक साथ है। यहीं पर शव और शिव, अघोरी और शाक्त साधना के प्रकरण में तन्त्र साधना के अन्तर्गत नारी के ऐसे विविध रूप आ गये हैं जिससे यह लम्बी कविता भाषा के शिष्ट मिज़ाज की परवाह न करते हुए एब्सर्ड दर्शन की प्रतिनिधि लम्बी कविता बन जाती है। देह से देश, अस्पताल से सम्पूर्ण विश्व तक फैले असाध्य रोगों और व्यभिचार का जैसा खुला वर्णन इस लम्बी कविता में हुआ है उससे एकबारगी ऊबकाई बेशक आये किन्तु हे वह आज के दौर का दहकता दस्तावेज़ ही।

'लुकमान अली' में भी 'अंधेरे में' की तरह फैण्टेसी है लेकिन मुक्तिबोध की भाषा तनव के अनुरूप बौद्धिक की भाषा है जबकि लुकमान अली फैण्टेसी के आधार पाकर दायें–बायें, ऊपर–नीचे जहाँ से भी देखो स्वयं को व्यवस्था के बीच असहाय पाता है। इसलिए दोनों महत्वपूर्ण कविताओं के केन्द्र में फैण्टेसी होते हुए भी भाषायी प्रयोग अलग–अलग किन्तु स्वाभाविक जान पड़ते हैं।

एक तरफ समस्त संयम और संस्कृति की मर्यादा तोड़ती एब्सर्ड दर्शन की लम्बी कविताएं हैं दूसरी तरफ उपेक्षित, पीड़ित मानव की त्रासदी का सीधा–साधा बयान देती न्याय, समानता, शासन, व्यवस्था जैसे बड़े–बड़े शब्दों की प्रासंगिकता पर सवालिया निशान लगाती लीलाधर जगूड़ी की **बलदेव खटिक,** कुमारेन्द्र पारसनाथ सिंह की **भंगी कालोनी,** त्रिलोचन शास्त्री की **नगई महरा,** नागार्जुन की **हरिजन गाथा** जैसी लम्बी कविताएं हैं जो सीधे दलित चेतना से जुड़ती है। एक अन्य स्तर पर जीने के मकसद और सार्थकता की तलाश में अभिव्यक्ति का संकट भवानीप्रसाद मिश्र की **भाब्दों के तल्प पर** और गिरिजाकुमार माथुर की **इतिहास के जर्राहों से** के सिर चढ़कर बोला है। मिश्र का मनाव पूरे परिवेश को शब्द में समेटने का है बल्कि कहना होगा कि शब्द खोजने का नहीं, ध्वनि से ही परिवेश को चित्रित करने का तनाव है जिससे कविता भावुक बन पड़ी है क्योंकि शब्द और समाज का तनाव सतह पर ही डोलता है। 'इतिहास के जर्राहों से' का कवि 'मैं' और 'तुम' की जिरहबाजी में समाज और साहित्य दोनों स्तरों पर दो पीढ़ियों के अन्तरालजन्य तनाव को व्यंजित करता है। यहाँ रचना और शब्द का तनाव केन्द्र में है लेकिन नयी कविता के रचनाकारों की मानसिकता भी अभिव्यक्ति हुई है। शिल्पगत प्रयोग और संवेदनागत नवीनता से पूर्वाग्रही आलोचकों ने नयी कविता और नये कवियों पर जो आरोप लगाये उनके कारण कवियों को न चाहते हुए भी वक्तव्य देने पड़े। आक्षेप और वक्तव्य के बीच की पीड़ा के साथ कविता के परिवर्तित रूप और संरचना की पैरवी 'मैं' माध्यम से करते हुए 'तुम' (आलोचकों) पर नाराज़गी दिखायी गयी है। इस प्रकार गद्य में दिया जाने वाला वक्तव्य लम्बी कविता का तनाव बन कर कवि के विचार और चिन्तन

को सर्जनात्मक अभिव्यक्ति है।

साहित्य मानस को स्वतन्त्र भारत के मोहभंग ने सबसे ज्यादा कचोटा है क्योंकि आज़ादी से पहले विदेशी सत्ता के प्रति विद्रोह था, अतः स्थिति उतनी दयनीय नहीं थी लेकिन आज प्रजातान्त्रिक प्रणाली अपनों द्वारा, अपनों का, अपनी सत्ता के स्वार्थ हेतु राजनीतिक प्रयोग कर हमें पहले से कहीं अधिक बेबस और बेचारा बनाये दे रही है। इसी तनाव को लम्बी कविता ने जाना पहचाना है। रामदरश मिश्र की **फिर वही लोग,** रघुवीर सहाय की **आत्महत्या के विरुद्ध** राजनीतिक विसंगति को सामने लाती है। 'फिर वही लोग' में छोटे–छोटे घटना चित्रों से केन्द्रीय स्थिति पर बरावर दबाव बना रहा है। यहाँ तनाव का स्तर महज़ कवि के विचारशील आग्रह तक सीमित नहीं है। यह तनाव उस सड़क का भी है जो सीधी–नासमझ वजूद को खोकर नये–नये उगने वाले स्वार्थी कुकुरमुत्तों का प्रतिनिधित्व करने वाले झण्डे थामे हुए हैं और उस जनता का भी जो चन्द टुकड़ों के लिए बलि का बकरा बन रही है। रघुवीर सहाय ने स्थिति की भयावता को व्यंजित करने के साथ पाठकीय संवेदना को झकझोरने के उद्देश्य से एक कथन को दो पंक्तियों में तोड़ा है ताकि पाठक लय में बाधा पाकर सोचने को विवश हो जाये। 'आत्महत्या के विरुद्ध' के पात्र काल्पनिक होकर भी हमारे चारों ओर के लगते हैं। यही तनावपूर्ण अनुभूति इस लम्बी कविता को विशिष्ट बनाती है।

मोहभंग को सीधी–सीधी किन्तु तनावपूर्ण शैली में स्पष्ट करने वाली लम्बी कविताओं में धूमिल की **पटकथा** बहुचर्चित है। कवि ने स्वतन्त्रता के उजाले के साथ ही अहिंसावादी नेहरू युग की अन्दरूनी निमर्म जांच की कि पेट की भूख मिटाने की आशा गंवाने से आम आदमी अपनी नज़रों में गिरता जा रहा है इसलिए सब संवेदना शून्य हो गये हैं। कविता का सबसे अहम् पक्ष कवि के हमशक्ल के नाटकीय रूप में हिन्दुस्तान के माध्यम से हन्दिुस्तान बनाम भारत माँ के आँसुओं के कारण की जांच करना है। धूमिल ने ऐतिहासिक तनाव को राजनीतिक अराजकता और खण्डित होते मानव मूल्यों के संदर्भ में तानकर देखा है।

बसन्तकुमार परिहार की लम्बी कविता **टुंडे आदमी का बयान** में भारतीय जन की नाटकीय अभिव्यक्ति हुई है। कथा–सूत्र के कारण केन्द्रीय पात्र (कवि) विसंगति सम्बन्धी बयान देता चलता है। कथा–क्रम, नाटकीयता , संवाद, ब्यौरों का समायोजन धूमिल की भाँति एक तनावमय दबाव बराबर बनाये रखता है। इस दृष्टि से यह लम्बी कविता परिहार की अन्य लम्बी कविताओं **चिन्दी–चिन्दी अस्तित्व, आरम्भ होती है कविता, भ्रमों का जंगल, गुमशुदा चेहरे की तलाश** और **उन्नीसवां अध्याय** से

अधिक सफल है। कवि ने व्यवस्था के सारे छल के खिलाफ विद्रोह को कर्मरत बनाकर तनाव से मुक्ति की व्यावहारिक प्रेरणा देकर आस्था बनाये रखी है। मोहभंग ने बुद्धिजीवी के साथ आम आदमी के कैक्टस खड़े किये हैं। इनकी चुभन उसमें आक्रोश पैदा करती है किन्तु यह आक्रोश विद्रोह की सीमा तक नहीं पहुँच पाता। ज़िन्दगी जीने की चाह में ऐन मौके पर कुछ कर गुजरने से चूक से चूक जाते हैं। समकालीन दौर की इस विसंगत परिस्थिति को ओमप्रकाश गुप्त की **बेताल की आखिरी कथा** रूपायित करती है। यहाँ विक्रम और बेताल के मिथकीय आख्यान को फैण्टेसी के ज़रिए नवीन संदर्भ से युक्त किया गया है।

आत्म विश्लेषण द्वारा सर्वसाधारण पर घटाए जाने वाले पहलू भारतभूषण अग्रवाल की **चीरफाड़** और विजयदेव नारायण साही की लम्बी कविता **अलविदा** के विचार बने हैं। मुक्तिबोध का तनाव अस्मिता की अभिव्यक्ति का है जबकि भारतभूषण अस्मिता की तलाश में भटक रहे हैं कि अस्मिता की पहचान स्वयं होती है। *दीवारें टटोलती हताश भीड़ें, गटर में छुरे फेंकते स्याह चेहरे, समंदर की तरह काँपती लड़कियाँ, दुर्घटना ढ़ोती रेलगाड़ियाँ* आदि बिम्बों से भरा 'अलविदा' का 'मायालोक' आज के युग का सम्पूर्ण चित्र दिखाता है। इस क्रम में जगदीश चतुर्वेदी निरीक्ष–परीक्षण करते हुए संवेदना के भोंथरे होने का कारण **अतीत से गुजरे हुए** तलाश करते हैं। समस्या की कारणगत समीक्षा करने की दृष्टि से यह कविता, लम्बी कविता के एक अलग 'पैटर्न' का संकेत करती है। दूसरी लम्बी कविताओं में मानव के वंजर हृदय को देखकर कवियों में तनाव तो मिलता है किन्तु उसके शुष्क या ठूँठ होने का एक कारण जगदीश चतुर्वेदी ने ढूँढा कि बाल मन की स्मृति व्यक्ति के पूरे जीवन पर प्रभाव डालती है।

रोजी–रोटी की तलाश में गाँव से बिछड़े आदमी की पीड़ा, शहरी जटिल जीवन, गाँव की स्मृति और वापस लैटने की छटपटाहट को व्यंजित करने वाली लम्बी कविताओं को एक पूरी शृंखला है। गंगाप्रसाद विमल की **स्मृति की खोह** और सुखबीर सिंह की **बयान बाहर** में गाँव की स्मृति और उससे उपजे तनाव का एकपक्षीय चित्र है। मोहन सपरा की **संवाद गाथा** में शहर के जीवन चित्रों की नाटकीयता से तनाव का कैनवास शहर से देश तक फैला है।

तनाव की इसी व्यापकता को **घास का घराना** ने सहेजा है। मणि मधुकर ने राजस्थान में ही जैसे पूरे देश को उकेर दिया है। कविता का प्रत्येक बिम्ब पाठकीय सोच तक ही सीमित नहीं रहता, व्यवस्था के विरुद्ध क्रिया शील होने की भावना भी जगाता

है। सर्वेश्वर दयाल सक्सेना की **कुआनो नदी** में आज़ादी के बाद बुद्धिजीवी द्वारा किताबों को बचाने की कसमकस है। गाँव की स्मृति के साथ कवि ने शहर की यमुना को सूखा पाया है। इस लम्बी कविता की गरिमा कवि के निष्फल आचरण में निहित है। इन लम्बी कविताओं के पीछे शिल्पगत वैशिष्ट्य प्रमुख है इनकी भाषा सीधी लेकिन तनाव को सहजता के साथ पाठक के दिमाग में उतारने वाली है।

आज़ादी के दिन से ही साम्प्रदायिक तनाव के बीच मानवीय त्रासदी और विसंगति का जो दौर चला वह आज तक नहीं थमा है। लम्बी कविता की केन्द्रीय वस्तु में इस तनाव को अनेक विचारशील कवियों ने अलग–अलग सन्दर्भों में अभिव्यक्ति दी इन सभी केन्द्र में साम्प्रदायिकता है किन्तु वस्तु बदल गयी है। भारत विभाजन की त्रासदी से विक्षुब्द हिन्दू–मुस्लिम आज भी साम्प्रदायिकता की आग में एक–दूसरे को झोंकते हुए स्वयं झुलस रहे हैं। इसी से तनावग्रस्त नरेन्द्र मोहन हैं; जिन्होंने पाठक को इसी संघर्ष और तनाव से **'एक अग्निकाण्ड जगहें बदलता'** के माध्यम से परिचित कराया। यह ऐतिहासिक, सामाजिक, साम्प्रदायिक टकराव आज भी ज़ारी है। इसी की आवाज़ विनय ने **'यात्रा के बीच'** में सुनी। यहाँ कवि निर्धारित समय पर घर न पहुँचने की सफाई अपनी पत्नी को देते हुए आत्मगत से व्यापक संदर्भों में फैलकर देश में चारों ओर के ज़हरीले वातावरण के बीच मानव की बेबसी और तद्जनित तनाव के समाचार सुनाता है। रिर्पोटिंग शैली के कारण विनय की कविता अधिक यथार्थ, निष्पक्ष रागात्मक मोह से दूर लम्बी कविता में चित्रात्मक भाषा की संभावना उजागर करती है।

सुमनराजे **उसके उन्नीसवें जन्मदिन पर** अमानवीय प्रहारों के बीच पुत्र की मृत्यु का कारण जान लेती है किन्तु रोक नहीं सकती क्योंकि साम्प्रदायिक सामाजिक प्रवृत्तियों के घेरे में व्यक्ति जा तो सकता है, लौट नहीं सकता। यह अनवरत संघर्ष केन्द्रीय स्थिति है। इसीलिए यह लम्बी कविता मानवीय त्रासदी को शाश्वत मानती हुई हताशा और निराशा से घिरी है जबकि सोमदत्त की **क्रागुएवात्स में पूरे स्कूल के साथ तीसरी क्लास की परीक्षा** तानाशाह की गोली का निशाना बनकर भी देश प्रेम न छोड़ने से अराजक होने से बच जाती है। अभी तक लम्बी कविता में तनाव का अनुभव परिपक्व कवि और पाठक ही करता रहता है किन्तु सोमदत्त की दृष्टिबालसुलभ तनाव पर पहुँची है। इसका केन्दीय पात्र तीसरी कक्षा का नन्हा, निरीह बालक है जो तनाव के कारण स्वप्न और स्वप्न के कारण तनाव झेलता है। इसी दृष्टि से यह कविता तनावग्रस्त नन्हें पात्र की कल्पना की दृष्टि से लम्बी कविता के लिए नयी संभावनाएं उजागर करती है।

बीसवीं सदी के अन्तिम दशक तक आते–आते राष्ट्रीय स्तर पर अनेक ऐसे परिवर्तन हुए जिसके कारण एकाधिक लम्बी कविताएँ मॉडल रूप में सामने आयीं। इन्दिरा–राजीव हत्याकाण्ड, पंजाब–कश्मीर आतंकवाद, व्यापक दर्शन का अभाव, बाज़ारवाद, कम्प्यूटर–इंटरनेट जैसे नये संचार माध्यम और मीडिया के प्रभाव स्वरूप पल–पल बनते बिगड़ते, पुराने पड़ते जाते आँकड़े और तथ्य–सभी ने साहित्य को बड़े पैमाने पर प्रभावित किया। नतीजा, लम्बी कविता में आख्यान को लेकर नये प्रयोग हुए। इस सदी के अन्तिम वर्षों में लम्बी कविता की संवेदना में एक खास पहलू उभरा जो स्त्री और उसके विभिन्न सरोकारों से जुड़ा हुआ है। आलोक धन्वा की **ब्रूनों की बेटियाँ** और **भागी हुई लड़कियाँ** एवं नरेन्द्र मोहन की **खरगोश–चित्र और नीला घोड़ा** तथा **प्रिय बहिणा...** स्त्री और उससे जुड़ी संकल्पनाओं को सामने लाने वाली लम्बी कविताएं हैं। इसके बावजूद इन्हें किसी प्रकार के स्त्रीवादी विमर्श या 'फेमेनिज़्म' से नहीं बाँधा जा सकता।

इक्कीसवीं सदी के आरम्भ में आने वाले काव्य–संग्रह 'कविता से लम्बी कविता' में विनोदकुमार शुक्ल **शरारतन मैंने मुड़कर देखा एक पैड़ को** के अलावा कोई अच्छी लम्बी कविता नहीं दे सके। **लगभग जयहिन्द** और **आरपार शायद इसी को कहते हैं** न आकार और न ही तत्वों की दृष्टि स लम्बी कविता ठहरती है। इनमें बिम्बों की भरमार है किन्तु न उनका ब्यौरों के साथ संयोजन हो पाया है और न ही तनाव उभर सका है। देसरी ओर सुल्तान अहमद की **मायावी मध्यालोक के** मिथक का नवीन संदर्भों में प्रयोग कर अच्छी लम्बी कविता बन पड़ी है।

लम्बी कविता के इतिहास में एक नया अध्याय कश्मीर विस्थापन का जुड़ा है। अग्निशेखर की लम्बी कविता **कृष्ण के चेहरे पर युद्ध की छींटें** मिथकों की गुंजलक में उलझी होने के कारण पौराणिक संदर्भों को खोलने की माँग पाठक से करती है जिसके अभाव में कश्मीरी पण्डितों के विस्थापन और उससे उपजी वेदना को पकड़ पाना सम्भव नहीं है।

उत्तर आधुनिक दौर में मीडिया की व्यावसायिक खबरों और व्यवस्था के झूठ ने सब कुछ गैर ज़रूरी और बेमानी कर दिया है। बसन्तकुमार परिहार की लम्बी कविता **भ्रमों का जंगल** में समस्या यह है कि *''आँख के अन्धे धृतराष्ट्र को/महाभारत का युद्ध देखने के लिए/संजय की वाणी की/मिल सकती है सुविधा/किन्तु गीता का उपदेश सुनने के लिए/कान पता नहीं/किस दुकान से उधार मिलते हैं''* अनिल धीमान की **अंधेरे बुरे वक्त की कविता** राजनीतिक मोहभंग के साथ ज्वलन्त यथार्थ की बजाय

माँसल सौन्दर्य की खबरों और मायावी राशिफल के कॉलमों से भरे पड़े पथभ्रष्ट मीडिया वालों की खबर लेती है। दूसरी ओर लखविन्दर सिंह जौहल की लम्बी कविता **एक सपना/एक संवाद** महात्मा गाँधी और सरदार भगतसिंह के सर्मथकों और विरोधियों से जुड़े पूर्वाग्रहों, उनकी मानसिकताओं को, संवाद शैली में खोलते हुए दोनों हस्तियों के पुनर्मूल्यांकन की ज़रूरत का अहसास कराती है।

लम्बी कविता के लगभग 80–90 वर्षों के इतिहास से अनुमान लगाया जा सकता है कि इसके विकास हेतु आगामी समय में अनेक संभावनाएँ हैं। तकनीकी–वैज्ञानिक आविष्कार के बढ़ते प्रभाव से छोटा होता संसार और संकुचित हृदयगत संवेदनाओं से साहित्यकार दूर तक प्रभावित होगा। राजनीतिक छद्म और भ्रष्टाचार, आतंकवाद और अलगाववादी वर्चस्व के फैलाव से लम्बी कविता में सांस्कृति विरासत की पहचान और छटपटाहट उभरेगी सबसे चौंका देने वाला परिवर्तन शिल्प के धरातल पर होगा। सामाजिक यथार्थ जनित बढ़ते दबाव से फैण्टेसी केन्द्र में रहेगी। नाटकीयता के प्रवेश और युगीन सन्दर्भों से जुड़कर लम्बी कविताओं की रंगमंचीय प्रस्तुति और उनके रंग–पाठ को व्यापक दिशा मिलेगी। कवि, पाठक, आलोचक के लिए रूप और वस्ते के विभिन्न स्तरों पर नयी चुनौतियाँ सामने आयेंगी। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का मानना था ज्यों–ज्यों सभ्यता के आवरण और वैज्ञानिक प्रभाव बढ़ते जायेंगे, कवि और कविता का काम कठिन लेकिन ज़रूरी होता जायेगा। उनकी इस मान्यता को लम्बी कविता पर घटाते हुए कहा जा सकता है कि टेक्नोलॉजी, मीडिया, वैश्वीकरण आदि के प्रसार के साथ लम्बी कविता में दीर्घकालिक सर्जनात्मक तनाव अधिक गहरा और संश्लिष्ट होगा तथा शब्दगत निजता को महत्व मिलेगा।

4.4 सारांश – लम्बी कविता किसी युग अथवा वाद विशेष में बेशक लिखी गई हो किन्तु उस वाद विशेष की प्रवृत्तियों के आधार पर लम्बी कविता का मूल्यांकन नहीं किया जा सकता क्योंकि उसका गठन और शिल्प विशेष प्रकार का होता हैं जिसका अध्ययन हम अध्याय दो और तीन में कर चुके हैं।

4.5 कठिन शब्द – आख्यानपरक, फेमेनिज़्म, वैश्वीकरण, विस्थापन

4.6 अभ्यासार्थ प्रश्न–

प्र01 लम्बी कविता के ऐतिहासिक विकास पर प्रकाश डालिए।

.....

.....

.....

प्र02 आज़ादी से पहले की लम्बी कविताओं का विवेचन कीजिए।

.....

.....

.....

प्र03 स्वातन्त्र्योत्तर लम्बी कविताओं की विवेचना कीजिए।

.....

.....

.....

4.7 पठनीय पुस्तकें –

1) लम्बी कविता का रचना विधान – डॉ. नरेन्द्र मोहन

2) कहीं भी खत्म कविता नहीं होती – डॉ. नरेन्द्र मोहन

3) विचार और लहू के बीच – डॉ. नरेन्द्र मोहन

4) बीसवीं शताब्दी का उत्कृष्ट साहित्य : लम्बी कविताएं – डॉ. नरेन्द्र मोहन

6) समकालीन कविता की भूमिका – विश्म्भरनाथ उपाध्याय, मंजुल उपाध्याय

7) लम्बी कविताओं के बहाने – डॉ. रजनी बाला

8) लम्बी कविता : व्यापक परिदृश्य – डॉ. रजनी बाला

राम की शक्ति पूजा का केन्द्रीय विषय और शिल्प

5.0 रूपरेखा

5.1 उद्देश्य

5.2 प्रस्तावना

5.3 राम की शक्ति पूजा का केन्द्रीय विषय और शिल्प

5.4 सारांश

5.5 कठिन शब्द

5.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

5.7 पठनीय पुस्तकें

5.1 उद्देश्य

सूर्यकांत त्रिपाठी निराला की 'राम की शक्ति पूजा' लम्बी कविता के इतिहास में अपने आख्यानपरक कथ्य एवं शिल्प के लिए विशेष स्थान बनाए हुए है। इस पाठ में विद्यार्थी परम्परागत राम को नवीन रूप में देख सकेंगे। रामकाव्य से जुड़ी मान्यताओं और चरित्रों को लम्बी कविता के धरातल पर जाँचते हुए विद्यार्थी नये प्रकार के शिल्प विधान से परिचित होंगे।

5.2 प्रस्तावना

कथ्य के धरातल पर 'राम की शक्ति पूजा' के कथा स्त्रोंतों के साथ निराला के युगीन परिवेश और स्वयं कवि से यहाँ सामंजस्य स्थापित किया गया है। चरित्रविधान, प्रतीक योजना, छन्द विन्यास, भाषा कौशल आदि की दृष्टि से 'राम की शक्ति पूजा' का अध्ययन प्रस्तुत है।

5.3 राम की शक्ति पूजा का केन्द्रीय विषय और शिल्प

सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला कृत 'राम की शक्ति–पूजा' लम्बी कविता 23 अक्टूबर, 1936 के 'भारत' (दैनिक, इलाहबाद) में प्रकाशित हुई। कविता कथात्मक ढंग से शुरू होती है और इसमें घटनाओं का विन्यास इस ढंग से किया गया है कि वे बहुत कुछ नाटकीय हो गई है। वर्णन इतना सजीव है कि लगता है, आँखों के सामने कोई त्रासदी प्रस्तुत की जा रही है।

हिन्दी में 'राम की शक्ति–पूजा' का विरोध मुख्यतः उसके पहले अनुच्छेद के कारण ही किया गया, क्योंकि इसमें अठारह पंक्तियों के एक ही वाक्य को प्रयोग हुआ था और इसकी सोलह पंक्तियाँ छोटे–बड़े संस्कृत के समस्त पदों से बनी थीं, जो पाठकों के लिए ही नहीं, विद्वानों के लिए भी दुरूह थे !

दूसरे अनुच्छेद में रावण और राम दोनों पक्षों की सेनाओं के लौटने की सूचना है– ''लौटे युगदल'', लेकिन दोनों सेनाएं दो तरह से लौट रही हैं। राक्षसी सेना अपने पैरों से पृथ्वी को हिलाती हुई और अपने तुमुल हर्षनाद से बेधकर आकाश व्याकुल बनाती हुई लौट रही है, जबकि वानरी सेना कृत्रिम रूप से शांत वातावरण में अपने स्वामी का अनुसरण करती हुई दुखी भाव से अपने शिविर की ओर चल रही है।

चौथा अनुच्छेद बड़ा भी है और महत्त्वपूर्ण भी, क्योंकि यह सूचनात्मक न होकर पूर्णतः वर्णनात्मक है। इसमें निराला ने सब से पहले राम के सैन्य–शिविर के इर्द–गिर्द के परिवेश का वर्णन किया है, फिर उनकी मनोदशा का, फिर सीता के साथ प्रथम मिलन की उनकी स्मृति का, फिर उस स्मृति की उन पर होने वाली प्रतिक्रिया का और अन्त में आज के युद्ध में मिली उनकी असफलता तथा उससे उत्पन्न उनकी आशंका एवं व्याकुलता का।

पाँचवां अनुच्छेद सबसे बड़ा अनुच्छेद है, जिसमें निराला ने हनुमान पर राम के रोने की प्रतिक्रिया का वर्णन किया है। इस अनुच्छेद में हनुमान का महत्त्व बहुत बढ़ा–चढ़ाकर दिखलाया गया है, जैसे निराला को सिद्ध करना हो कि 'राम ते अधिक राम कर दासा'।

छठे अनुच्छेद में विभीषण का लम्बा संवाद है, जो किंचित् कूटनीतिक होने के कारण बहुत सजीव है। सातवें अनुच्छेद में निराला ने जो कुछ लिखा है, उससे विभीषण और राम के चरित्र का अन्तर स्पष्ट हो जाता है, राम की विवशता सामने आती है और

उनकी आँखों से पुनः जो आँसू की बूंदें गिरती हैं, तो अलग–अलग योद्धाओं पर उसकी अलग–अलग प्रतिक्रिया का पता चलता है।

अगले अनुच्छेद में राम अपने को प्रकृतिस्थ करते हैं और पहले कह गये हैं, उसे विस्तार से उपस्थित योद्धाओं को समझाते हैं। अन्त में जांबवान उन्हें शक्ति–पूजन का परामर्श देते हैं, उन्हें आश्वस्त करते हुए कि उनकी अनुपस्थिति में भी सुनियोजित ढंग से युद्ध चलता रहेगा।

नौवे अनुच्छेद में शक्ति–पूजा के आयोजन का विस्तार से वर्णन है। इसकी विशिष्टता यह है कि इसी में निराला ने शक्ति की वह 'मौलिक कल्पना' प्रस्तुत की है, जिसके लिए जांबवान ने राम को प्रेरित किया था और जो राम की इष्ट बनती है।

पहले अनुच्छेद से लेकर नौवे अनुच्छेद तक यह कविता संध्या–काल से लेकर अमावस्या की रात्रि में घटित होती है। इसी रात्रि के घने अंधकार को अपनी राम–भक्ति के तेज से भेदते हुए हनुमान ऊर्ध्वगमन करते हैं। लेकिन इसी में निराला राम के माध्यम से पर्वत में पार्वती का जो रूप निरूपित करते हैं, उसमें उसके ऊपर चंद्रमा को अवस्थित बतलाया गया है : ''अम्बर में हुए दिगम्बर अर्चित शशि–शेखर।'' 1936 में ही डॉ. रामविलास शर्मा को लिखे गए एक पत्र में निराला ने इस असंगति का निराकरण इस रूप में कर दिया था : ''यदि 'शशि' को देखना हो तो अमावस्या में वह कल्पना में ही देख पड़ेगा–वह आकाश में है।''

यह अनुच्छेद भी भीतर से दो खण्डों में बंटा है। पहले खण्ड में राम के शक्ति–पूजन का वर्णन है, जिसमें पूजन आरंभ करने से लेकर दुर्गा द्वारा अन्तिम नीलकमल चुरा ले जाने तक का वृत्तांत है, और दूसरे खण्ड में उसके बाद से लेकर दुर्गा के प्रकट होने तक का। कविता दूसरे खण्ड में ही चरमोत्कर्ष पर पहुँचती है।

'राम की शक्ति–पूजा' की अन्यतम विशेषता उसमें पाई जाने वाली उदात्तता है। 'शक्ति–पूजा' पत्नी–प्रेम की कविता है, जिसका एक अत्यन्त व्यापक सन्दर्भ है–आधुनिक युग में उत्पन्न जनतान्त्रिक चेतना और नारी–मुक्ति का आन्दोलन। इसी ने इस कविता को वह सुविस्तृत भाव–भूमि प्रदान की है, जिससे यह अत्यन्त उदात्त हो गई है। यह भाव–भूमि वैचारिकता से दृढ़ है, इसलिए इस कविता में बहुत सशक्त होने पर भी आवेग कहीं अनियन्त्रित रूप में नहीं दिखलायी पड़ता। राम पराजित अनुभव कर रहे हों या उत्साहित, वे प्रेम के क्षणों में हों या युद्ध के क्षणों में, वे चिन्तित हों या आनन्द–पुलकित, सर्वत्र संयत हैं। युद्ध में जब वे अपने वाणों को निष्फल होते देखते हैं, कुछ करते नहीं

सिर्फ उस दृश्य को एक टक देखते रह जाते हैं। निराला ने यहाँ उनके लिए सिर्फ यह लिखा है– 'अनिमेश–राम।' इसी तरह उन्हें जब सीता की स्मृति आती है, तो उनका पूरा अस्तित्व आंदोलित हो उठता है, लेकिन प्रकट रूप में कोई विस्फोटक प्रतिक्रिया नहीं होती। सिर्फ ''फूटी स्मिति सीता–ध्यान–लीन राम के अधर।'' उनका अश्रुपात भी ऐसा ही है, जिसमें कोई हाहाकार नहीं। अन्त में जब उन्हें अन्तिम नीलकमल नहीं मिलता तो सिर्फ ''भर गये नयन द्वय''। उपाय सूझने पर भी सिर्फ ''हुए सजग पा भाव प्रमन।'' जो स्थिति 'सराज–स्मृति' में निराला के शोक की है, वही 'शक्ति–पूजा' में राम के संशय और निराशा की। इससे इस कविता के आवेग में गहराई आई है और वह भावात्मक विस्फोट बनने से बच गई है।

उदात्तता के अनुरूप ही इस कविता का ढांचा है, जो ऊपर से सरल, लेकिन भीतर से जटिल है। एक बार दृष्टि डालने पर ही इसकी सरलता में निहित जटिलता स्पष्ट हो जाती है–युद्ध की समाप्ति, दोनों सेनाओं का लौटना, राम के शिविर में योद्धाओं की सभा, राम का संशय और सीता के साथ प्रथम मिलन की स्मृति, हनुमान का मानसिक ऊर्ध्वगमन, विभीषण का संवाद, राम का उत्तर, पुनः उनका युद्ध की स्थिति पर विस्तार से प्रकाश डालना , जांबवान का परामर्श, राम द्वारा पर्वत में शक्ति की कल्पना की व्याख्या, फिर योग–साधना की पद्धति से शक्ति–पूजा, उसमें स्वयं शक्ति द्वारा उपस्थित किया गया विघ्न, राम की आत्मभर्त्सना, उनके दूसरे मन की सक्रियता और उनका अपनी एक आँख निकाल कर अर्पित करने का संकल्प, शक्ति का प्रकट होना, राम का उनके चरणों में झुकना और उनका उनके मुख में लीन हो जाना।

सरल कथा में जटिलता एक तो इस कारण उत्पन्न हुई है कि उसमें फ्लैशबैक भी है और हनुमान के ऊर्ध्वगमन की प्रासंगिक कथा, भी दूसरे इस कारण भी कि सरल प्रसंगों को भी निराला ने काफी गहराई से चित्रित किया है, उनके पीछे स्थित पात्रों के मनोविज्ञान का चित्रण करते हुए, जैसे विभीषण का घबड़ाहट और बेचैनी से भरा हुआ संवाद, राम द्वारा युद्ध में अपनी विवशता का वर्णन, शक्ति की मौलिक कल्पना और राम की आत्मभर्त्सना तथा नेत्रार्पण के लिए किया गया उनका दृढ़ निश्चय।

एक और बात जो इस कविता के ढांचे को जटिल बनाती है, वह है इसमें पराजय–भाव या अपराजेयता–भाव एक रस वर्णन की जगह यथावसर अनेक भावों की अभिव्यक्ति। उदाहरण के लिए संशय और निराशा की स्थिति में राम को जो सीता के साथ प्रथम मिलन की स्मृति आती है, उससे कई प्रकार के भाव उत्पन्न होते हैं– प्रेम, उत्साह आदि, लेकिन शक्ति की भीम मूर्ति की स्मृति के साथ वे सारे भाव करुणा में

पर्यवसित हो जाते हैं। फिर हनुमान के उद्वेलित होने के साथ वीर भाव मूर्त हो उठता है, जिसकी परिणति उनके पूर्व वर्णित दैन्यभाव में होती है। विभीषण की चिन्ता राम से भिन्न स्तर पर है, फिर इसमें राम के त्रास का भी वर्णन है। कविता अन्त की ओर शक्ति के प्रति राम की भक्ति–भावना के साथ बढ़ती है, लक्ष्यप्राप्ति के पहले के उनके उत्साह के साथ वह ऊपर उठती है और अन्तिम नीलकमल के गायब होने के साथ पुनः निराशा के गर्त में गिर जाती है।

कविता का समापन किंचित् चक्करदार ढंग से, किन्तु तीव्र गति से होता है। राम उत्सर्ग–भाव से भर उठते हैं, शक्ति प्रकट होकर उन्हें रोकती है और उन्हें वरदान देती है, जिससे एक तरफ वे अपनी विजय के प्रति आश्वस्त होकर अपंकट रूप से उल्लसित होते हैं और दूसरी तरफ उनके चरणों में भक्ति–भाव से प्रणत। इतने प्रकार के भावों का सामंजस्य होने से भी यह कविता अपने ढांचे से भीतर जटिल हो उठी है।

केन्द्रीय कथावस्तु के अतिरिक्त केवल दो प्रसंग हैं – एक जनकवाटिका प्रसंग और दूसरा हनुमान का आकाश अभियान तथा अंजना का रूप धारण कर देवी द्वारा उनके आक्रोश का परिशमन। ये दोनों ही अंतःकथाएं अन्वय–व्यतिरेक शैली से, मूल कथावस्तु की कलात्मक परिणति में सहायक होती है।

शक्ति–पूजा की कथा पाँच भागों में विभक्त है। कथा का प्रथम सोपान वहाँ से प्रारम्भ होता है जहाँ रवि अस्त हो जाता है और राम और रावण का युद्ध अनिर्णीत रह जाता है। कथा के द्वितीय सोपान में लंका की अमानिशा का चित्र है जिससे राम की मनःस्थिति भी व्यंजित होती है। कथा का तीसरा सोपान एक अन्तर्कथा के आयोजन से प्रारम्भ होता है। हनुमान राम के सच्चे भक्त हैं और वे राम को उदास देखना नहीं चाहते। राम को जिस आकृति से भय लगता है, हनुमान उसी को खा लेना चाहते हैं। हनुमान के इस रूप को निहारकर शिव भी घबरा जाते हैं और वे शक्ति को सचेत करके कहते हैं।

सम्बरो देवि निज तेज, नहीं

यह वानर यह हुआ नहीं शृंगारयुग्म गत महावीर

अर्चना राम की मूर्तिमान अक्षय शरीर...

कथा का चौथा सोपान विभीषण के कथन से प्रारम्भ होता है। जब वे राम को खिन्न देखते हैं तो उन्हें समझाते–बुझाते हैं और उनमें नया जोश भरते हैं। शक्ति–पूजा

की कथा का पाँचवां भाग वहाँ से शुरू होता है जहाँ पर शक्ति की साधना आरम्भ होती है। राम शक्ति की मौलिक कल्पना करते हैं और नवरात्र का व्रत धारण करते हैं। यहाँ पर शक्ति की यह साधना योगियों की साधना की भाँति सम्पन्न होती है।

शिल्पगत विशेषताएं

शक्तिपूजा योगियों की साधना के अनुसार सम्पन्न होती है। 'चक्र से चक्र मन चढ़ता गया ऊर्ध्व निरलस' मे इसी भाव का पोषण है। 'योगी का मन जब इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना को पार करता हुआ सहस्रार तक पहुँचता है, तब सिद्धि की प्राप्ति होती है। षष्ठ दिवस में जिस आज्ञा–चक्र पर राम का मन समाहित होता है और त्रिकुटी पर ध्यान एकाग्र होकर द्विदल (देवी का पद) पर साधना पहुँचती है, वह यौगिक क्रियाओं का रूप है।' योगशास्त्र में आज्ञाचक्र का वर्णन आता है। यह चक्र भौहों के मध्य त्रिकुटी में स्थित है। इस पर चिन्तन करने का परिणाम ऊँची सफलता होता है। इसमें दो दल हैं और उनका रंग श्वेत है। साधना की चरम अवस्था में राम का मन ज्यों ही सहस्रार के दुर्ग को पार करने को उद्यत होता है, तभी परीक्षाकाल आ उपस्थित होता है। यह सहस्रार और कुछ न होकर योगियों का वही सहस्रदल कमल है जिसकी स्थिति तालुमूल में है। सुषुम्ना का छिद्र भी यही है जिसे ब्रह्मरंध्र की अभिधा प्राप्त है। सुषुम्ना का नीचे की ओर विस्तार होता है और जब यह मूलाधार चक्र में पहुँचती है तब कुण्डलिनी जाग्रत होती है, सुषुम्ना ऊर्ध्वगमन करती हुई ब्रह्मरंध्र में ही 'प्राणशक्ति' संचित होती है। इस योगमार्ग की अनुवर्तिता की एक ध्वनि तो यह स्पष्ट है कि शक्ति–साधना सम्पन्न करते समय राम ने अपनी अन्तवर्ती गुप्त–शक्ति को जाग्रत किया था। यह बात निराला की निम्नांकित पंक्तियों से पुष्ट होती है, जिसमें शक्ति का राम के वदन में लीन होना बतलाया गया है–

होगी जय, होगी जय, हे पुरुषोत्तम नवीन

कह महाशक्ति राम के वदन में हुई लीन।

प्रतीकान्वेषण इसे युग धर्म से भी जोड़ देता है। रावण और राम इसके प्रमुख प्रतीक हैं जो क्रमशः अधर्म और सत्यान्वेषी का प्रतीकार्थ लिए हुए है। यों यह भी कहा जा सकता है कि रावण युगीन संदर्भ में ब्रिटिश शासकों का भी प्रतीकत्व लिए हुए है और राम स्वतंत्रता के अन्वेषी देशभक्त का, किन्तु सत्य यह है कि रावण तो अन्याय का प्रतीक है ही, राम एक ऐसे साधारण मनुष्य के प्रतीक भी हैं जो सत्य और न्याय की प्रतिष्ठा के लिए शक्ति अर्जित करता हुआ सत्य के मुहाने पर इसलिए पहुँचता है कि संसार में न्याय के विश्वासियों को ठेस न पहुँचे।

हनुमान शक्ति, संयम और जागृति के प्रतीक हैं। उनमें कर्म की भावना स्वतः ही स्फुरित होती है बिना किसी के उकसाये। यही जागृति है। ऐसी जागृति ही शक्ति और संयम देती है और इसी से सफलता की भूमिका तैयार होती है। विभीषण उस भूमिका को आशावाद से और भी अधिक सुदृढ़ कर देते हैं। वे आशावाद के जीवन्त प्रतीक हैं। कवि जानता है कि कोरी आशा जीवनोपयोगी तो हो सकती है, किन्तु ठोस व रचनात्मक सहयोग नहीं दे सकती है। वह भावना की सहचरी जो ठहरी। इसके लिए रचनात्मक सहयोग के निमित्त, बुद्धि की आवश्यकता पड़ती है। यही कारण है कि जामवन्त की अवतारणा हुई है। वे बुद्धि के सखा बनकर ठोस बात कहते हैं। समूची स्थिति का नही मन विश्लेषण–परीक्षा करके निश्चयात्मक स्वर में राम को धैर्य व साहस प्रदान करते हैं। इस प्रकार हनुमान की जागरण वृत्ति, विभीषण की आशा और जाम्बवान की बौद्धिक तर्कणा और मंत्रणा से संगठित राम अन्याय का प्रतिकार, अधर्म का पराभव और दुष्टता व क्रूरता का विनाश करने के लिए कर्मलीन होते हैं।

निराला के जीवन में उन्हें जो झकझोरे लगे हैं, राम भी उनसे दामन बचा नहीं पाये हैं। डॉ. रामविलास शर्मा ने ठीक ही लिखा है कि ''यह राम तुलसीदास के मर्यादा–पुरुषोत्तम नहीं हैं। इनमें ब्रह्म की पूर्णता के बदले मानव की अपूर्णता है।'' वे अधीर हो जाते हैं, सीता की स्मृति से व्याकुल हो जाते हैं, पर फूट–फूट कर कभी नहीं रोते। रोते हैं तो लगता है कि पहाड़ की छाती से झरना फूट पड़ा हो। राम की शक्तिपूजा में राम उदात्त रूप में भी प्रस्तुत हैं और वीर योद्धा के रूप में भी। 'दृढ़ जटा मुकुट हो विपर्यस्त प्रति लट से खुल' आदि राम के सौन्दर्य का ऐसा वर्णन है जिसमें सौंदर्य का कोमल पक्ष तो है ही, प्रखर पौरुषमय रूप भी है जो योद्धा का–सा है। शक्तिपूजा में राम के अन्तःसंघर्षों और उनके पराजित मन के ऊँचे स्तरों पर उठने वाले चित्रों में कवि अधिक सफल हुआ है। निराला कभी हारे नहीं, लड़ते रहे। यह आशावाद शक्तिपूजा में भी प्रतिध्वनित है। यह हैं निराला के राम जो दिव्य पुरुष होकर भी हमारे निकट हैं।

निराला द्वारा चित्रित हनुमान के रूप में एक वीर योद्धा, साहसी, सेवक और कर्त्तव्यपरायण व्यक्ति का चरित्र हमारे समक्ष आता है, हनुमान का यह रूप उनके परम्परागत व्यक्तित्व के अनुकूल है, उसमें कोई हेर–फेर कवि ने नहीं किया है।

जामवन्त एक वृद्ध व्यक्ति हैं जिनके व्यक्तित्व में वार्धक्य के साथ–साथ अनुभव और धीरता का विशिष्ट संगम है। जब राम विचलित होते हैं तो जामवन्त वृद्ध ज्ञानी होने के कारण उन्हें सांत्वना प्रदान करते हैं। वे कहते हैं–''तुम पुरुष सिंह हो, तुम्हें विचलित

नहीं होना चाहिए। रावण ने यदि शक्ति की आराधना से वर पाया है तो तुम भी शक्ति की मौलिक कल्पना करो, दृढ़ आराधना का दृढ़ उत्तर दो, और विजयश्री का वरण करो।'' वस्तुतः जामवन्त यहाँ पर विचलित राम को प्रोत्साहन देने, प्रबोधन देने के लिए ही आये हैं। वे विभीषण की भाँति कचोटने वाला उत्साह राम में नहीं भरते हैं।

विभीषण राम को उकसाते हैं, रावण के विरुद्ध यह कहकर कि रावण सीता को दुःख देगा। राम पर इन बातों का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। दूसरे जामवन्त के स्वरों में जहाँ सच्ची सहानुभूति दिखाई पड़ती है, वहाँ विभीषण का स्वर भयमिश्रित है और इतना ही नहीं, उनके स्वर में यथार्थ की हल्की सी गंध भी है लगता है जैसे विभीषण राम को केवल इसलिए युद्ध की ओर उत्साहित कर रहे हैं कि कहीं वे राजा बनने से न रह जायें–'मैं बना किन्तु लंकापति, धिक् राघव धिक् धिक्' जैसी पंक्तियों में प्रोत्साहन की अपेक्षा स्वार्थ अलग झलकता है। लक्ष्मण का चरित्र भी राम के पीछे सेनानायक के रूप में आता है। वे राम के दुःख से दुःखी सच्चे भ्राता के रूप में विचित्र हुए हैं। वे तेजस्वी हैं, राम के अश्रु–बिन्दुओं को देखकर वे तेज से अभिभूत हो उठते हैं। कुल मिलाकर शक्तिपूजा में चरित्र–चित्रण बड़ा कलात्मक है।

राम की शक्तिपूजा में प्रकृति के कोमल और कठोर दोनों रूपों की अवतारणा की गई है। हनुमान जी के क्रोध को दिखाने के लिए प्रलयंकारी समुद्र का चित्रण प्रकृति के कठोर रूप को ही इंगित करता है–

शत घूर्णावर्त, तरंग भंग उठते पहाड़,

जल–राशि–राशि जल पर चढ़ता खाता पछाड़।

राम के घोर अवसाद और निराशा के क्षणों में जनकवाटिका के प्रसंग की स्मृति प्रकृति के कोमल पक्ष का ही चित्रण करती है। राम और सीता की प्रणय–भावना मानो प्रकृति में घुल मिल गई है–

काँपते हुए किसलय, झरते पराग–समुदय,

गते खग–नव–जीवन–परिचय तरु मलय–वलय।

प्रकृति का मानवीकरण छायावाद की अन्यतम विशेषता है। राम की शक्तिपूजा में भी इसकी उपस्थिति देखी जा सकती है। प्रकृति चित्रण यहाँ मानव सापेक्ष है–सारी प्रकृति मानो राम के दुख की सहभागी बनकर आयी है। राम के मन में चलने वाला

अन्तर्द्वद्व समुद्रगर्जन के रूप में चित्रित हुआ है–

अप्रतिहत गरज रहा पीछे अम्बुधि विशाल

शक्तिपूजा में प्रकृति कहीं तो राम की मनःस्थिति के समान कोमल और भयावह है तो कहीं वही सीता–स्मृति के क्षणों में मिथिला के सुन्दर उपवन के रूप में कोमलता के साथ साकार हो उठी है। शक्ति की मौलिक कल्पना के प्रसंग–विधान में भी प्रकृति का रूप अद्वितीय बन पड़ा है।

राम की खिन्न, हताशा और अवसादयुक्त मनःस्थिति के क्षणों में जगी सीता की स्मृति के प्रसंग में प्रकृति के कोमल, मसृण और उद्दीपक रूप को अनुभव किया जा सकता है। उक्त प्रसंग में एक ओर तो सीता की अनाघ्रात छवि में अकलुष, पावन सौंदर्य से सिक्त छवि है, तो दूसरी ओर विदेह के उपवन का लतान्तराल मिलन भी है, जिसमें वृक्षों के पत्ते मलयानिल का स्पर्श पाकर कंपित हो रहे हैं, पुष्पों का पराग–संभार दिशाओं के आँचल को सुवासित कर रहा है, वन्य–विहगों की टोलियाँ लता–नीड़ों में बैठकर सौंदर्य और प्रेम की रागिनियाँ छेड़ रही हैं और सूर्याभा झरने के रूप में फूट रही है। अभिप्राय यह है कि आलोच्य कृति में प्रकृति कहीं उद्विग्न करती है, कहीं प्रतीक रूप में आकर अभिव्यक्ति में प्राण डालती है तो कहीं चित्रों को व्यापकता और विराटता प्रदान करती है।

शक्ति–पूजा की भाषा में एक प्रवाह है, जैसे–जैसे प्रसंग परिवर्तित होता चलता है, वैसे–वैसे भाषा भी परिवर्तित होती जाती है। युद्ध–वर्णन, पुष्पवाटिका में सीता–राम के प्रथम मिलन का श्रृंगारिक वणर्न हनुमान का आकाश निगलने वाला वर्णन आदि कुछ ऐसे वर्णन हैं जहाँ भाषा अपना स्वरूप बदलती हुई अनेक रंग–रूपों में हमारे सामने आती है। रवि के अस्त हो जाने पर ज्योति–पत्र पर अंकित राम–रावण के अनिर्णीत युद्ध का चित्रण समासगुंफित संस्कृतगर्भित भाषा और शैली में किया गया है।

यहाँ भाव और भाषा का समानधर्मा रूप दिखलाई देता है। 'रवि हुआ अस्त' प्रयोग सूर्यास्त की भी व्यंजना देता है और सूर्यवंशी राम के पराजयबोध की भी। इसी प्रकार 'निशि हुई विगत, नभ के ललाट पर प्रथम किरण' में राम की विजय की प्रच्छन्न व्यंजना भी आकर्षक बन पड़ी है। अस्तगत रवि के साथ राम की निराशा और निशांत के दृश्य में मन के आकाश में सूर्य की किरण फूटना उनके आशापूर्ण मानस की व्यंजित करता है। यह भाषिक संरचना में आई संगति के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। वहाँ आये वर्णन को 'रवि हुआ अस्त' की योजना एक संगति प्रदान करती है।

'शक्तिपूजा' की भाषा में तत्सम और तद्भव शब्दों की टकराहट ने एक नयी अर्थ–शक्ति को जन्म दिया है। यही कारण है कि 'राक्षस–विरुद्ध प्रत्यूह क्रुद्ध–कपि विमश' के साथ 'हूह' जैसा शब्द भी बैठा हुआ है। यह शब्द–प्रयोग इस तथ्य को प्रमाणित करता है कि निराला शब्दों की जाति नहीं बनाना चाहते थे। वे तो आभिजात्य वर्गीय शब्दावली की पंक्ति में मामूली शब्दों को रखकर यह बताना चाहते थे कि शब्द नहीं अर्थ या शब्द की आत्मा में छिपा भाव अधिक महत्व रखता है। संदर्भ जिस शब्द की माँग करे, वही शब्द शब्द है, बाकी तो व्यर्थ का प्रपंच है।

भाषा को गौरवान्वित करने के हेतु कवि निराला ने शक्तिपूजा में जो अलंकार जुटाये हैं, वे प्रयत्नसाध्य नहीं हैं, वरन् सहज स्वाभाविक रूप से भाषा को प्रवाहमय बनाने के लिए ही प्रयुक्त हुए हैं। शक्तिपूजा में ध्वन्यर्थव्यंजक अलंकार दर्शनीय हैं। इस अलंकार के प्रयोग में कवि ने संस्कृत के शबें का अधिक सहारा लिया है।

शत घूर्णावर्त तरंग–भंग उठते पहाड़

जल–राशि–राशि–जल पर चढ़ता–खाता पछाड़

इन पंक्तियों में शब्दों के माध्यम से ही नाद उत्पन्न कराया गया है और साथ ही ऊँची–ऊँची तरंगों का चित्र भी हमारे समक्ष आ जाता है। झंझा की तीव्रता से समुद्र मंथन का चित्र भी साकार कर दिया गया है। इसके अतिरिक्त शक्तिपूजा में उपमा, रूपक और रूपकातिशयोक्ति अलंकारों के भी सुन्दर प्रयोग हुए हैं। इन प्रयोगों में अलंकार काव्य–सौन्दर्य की वृद्धि ही करते हैं, भाव के ऊपर हावी नहीं हो सके है। कुछ उदाहरण देखिए–

फैला पृष्ठ पर, बाहुओं पर, वक्ष पर विपुल

उतरा ज्यों दुर्गम पर्वत पर नैशांधकार

चमकी दूर ताराएँ ज्यों कहीं पार

'ऐसे क्षण अंधकार घन में विद्युत जागी 'पृथ्वी तनया कुमारिका छवि', 'जल रहे शलभ ज्यों रजनीचर' में उपमा की रमणीयता देखी जा सकती है। 'गिरे दो मुक्तादल' में अंधकार' में मानवीकरण का आकर्षक प्रयोग हुआ है।

निराला के छन्द सम्बन्धी प्रयोग छायावादी रचनाओं में अपना अलग महत्व रखते है। शक्तिपूजा में प्रयुक्त 24 मात्राओं का यह छन्द 8/8/8 मात्राओं की यति से तीन पदों को एकीकृत करके जिस नूतन छन्द का निर्माण करता है, वह गतिशील, शक्तिसम्पन्न

और भाव सम्पदा के सर्वथा अनुकूल है –

है अमानिशा उगलता गगन घन अंधकार

खो रहा दिशा का ज्ञान, स्तब्ध है पवन चार

अप्रतिहत गरज रहा पीछे अम्बुधि विशाल,

भूधर ज्यों ध्यानमग्न जलती केवल मशाल।

अंधकार उगलना अंधकार की घनता, संश्लिष्टता और ऐसी प्रसरणशीलता का बोधक है, जिसमें परिवेश को जैसे साँप सूँघ गया हो। परिवेश की यह स्थिति राम के मानस की भी स्थिति है। अंधकार का प्रसार, उसमें निमग्न दिशाएँ, पवन की गति का अवरोधित होना, सागर की गर्जन–तर्जन वाली मुद्रा, पर्वत की ध्यानस्थ स्थिति और केवल मशाल का जलना आदि सभी कुछ अर्थगत नाद–सौंदर्य की सृष्टि कर रहा है। एक तरह से देखें तो यहाँ क्षिति, जल, पावक, गगन और समीर' पाँचों तत्वों की सक्रियता संकेतित कर दी गयी है।

रस की दृष्टि से देखें तो स्पष्ट होगा कि शृंगार, वीर और शांत तीनों रसों की योजना बड़ी सफलता से की गई है। वीर रस प्रधान होकर आया है शक्तिपूजा में वीररसानुरूप वातावरण भी है। सीता की स्मृति के रूप में शृंगार की योजना की गई है। सिद्धि और शक्ति–पूजा में शांत रस का परिपाक हुआ है। रौद्र रूपों के चित्रण भी बड़े सफल बन पड़े हैं। प्रस्तुत काव्य में शृंगार, वीर और शांत रस की त्रिवेणी प्रवाहित होती हुई दिखाई देती हैं वीर रस प्रधान रस के रूप में आया है तो शृंगार और शांत उसके सहायक रूप में। रावण से युद्ध के प्रसंग में वीररस अपनी पूरी उद्दामता के साथ चित्रित हुआ है –

राक्षस विरुद्ध प्रत्यूह क्रुद्ध कपि वियम हूह

लेहित लोचन रावण मदमोचन–महीयान।

अवसाद और घोर निराशा के क्षणों में जब राम को अपनी प्रिया की स्मृति आती तो उस प्रसंग में कवि निराला ने शृंगार रस की योजना कर कविता को एक नई अर्थवत्ता प्रदान की है। कोमल भावों का चित्रण दृष्टव्य है–

देखते हुए निष्पलक, याद आया उपवन

विदेह का–प्रथम स्नेह का लतान्तराल मिलन

नयनों का नयनों से गोपन प्रिय सम्भाषण

पलकों का नव पलकों पर प्रथमोत्थान–पतन,

काँपते हुए किसलय झरते पराग समुदाय

गाते क्षग–नव–जीवन–परिचय, तरु मलय–वलय।

यहाँ आगत 'लतान्तराल', 'किसलय', 'पराग' जैसे शब्द शुद्ध शृंगारिक भावनाओं के प्रतीक कहे जा सकते हैं। राम द्वारा सिद्धि प्राप्ति के प्रसंग में शांत रस की योजना हुई है –

दो दिन से निःस्पंद एक आसन पर रहे राम

अर्पित करते इन्दीवर जपते हुए नाम।

यहाँ राम के एक योगी के रूप में शक्ति की पूजा करते हुए दिखाकर शांत रस की सुन्दर योजना की है।

नाटकीयता इस लम्बी कविता की विशिष्टता है। विभिन्न परिस्थितियां स्थितियाँ, परिस्थितियां, घात–प्रतिघात, कथोपकथन, मिथक और संकेतों से अंधकार और प्रकाश, बाह्य संघर्ष और अन्तः संघर्ष से इसमें नाटकीयता उत्पन्न होती है। पात्रों के कार्य–व्यापार इसी तत्त्व के अंग हैं। सर्जनात्मक भाषा ही इसमें नाटकीय रूप ले लेती है । द्वन्द्व और संयम के संतुलन ने 'राम की शक्ति पूजा' को अद्‌भुत नाटकीयता प्रदान की है जो इस कविता के कथा–विन्यास, वातावरण, चरित्र–सृष्टि, भाव–बोध, बिम्ब–योजना, भाषा–शैली, छन्द–विधान आदि सभी स्तरों पर स्पष्ट दृष्टिगत होती है। इस दृष्टि से 'राम की शक्ति पूजा हिन्दी की अद्वितीय लम्बी कविता है।

5.4 सारांश – राम कथा के परम्परागत रूप का सूक्ष्म सा अंश संभालकर लम्बी कविता की कथ्यगत विशेषताओं और अभिव्यंजना कौशल को निराला ने कैसे चरितार्थ किया है, इनका विश्लेषण इस पाठ में हुआ है।

5.5 कठिन शब्द – तुमुल हर्षनाद, सैन्य–शिविर, शक्ति की मौलिक कल्पना, अमानिशा, प्रतीकान्वेषण

5.6 अभ्यासार्थ प्रश्न –

प्र01 'राम की शक्ति पूजा' के केन्द्रीय विषय को स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

प्र02 'राम की शक्ति पूजा' की कथ्यगत विशेषता बताइए।

.....

.....

.....

प्र03 'राम की शक्ति पूजा' के विभिन्न चरित्रों का वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

प्र04 'राम की शक्ति पूजा' की शिल्पगत विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

.....

.....

.....

5.7 पठनीय पुस्तकें –

1) अनामिका – सूर्यकांत त्रिपाठी निराला

2) निराला – इन्द्रनाथ मदान (सं.)

3) महाप्राण निराला और राम की शक्ति पूजा – बी एल आर्य

4) निराला आत्महंता आस्था – दूधनाथ सिंह

5) राम की शक्ति पूजा – डॉ. नगेन्द्र

6) आधुनिक हिन्दी कविता में पौराणिक संदर्भों की पुनर्रचना – रामदरश राय

7) निराला की दो लम्बी कवितांए – डॉ. हरिचरण शर्मा

8) लम्बी कविता का रचना विधान – डॉ. नरेन्द्र मोहन

9) निराला की साहित्य साधना – रामविलास शर्मा

'अंधेरे में' का केन्द्रीय विषय और शिल्प

6.0 रूपरेखा

6.1 उद्देश्य

6.2 प्रस्तावना

6.3 'अंधेरे में' का केन्द्रीय विषय और शिल्प

6.4 सारांश

6.5 कठिन शब्द

6.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

6.7 पठनीय पुस्तकें

6.1 उद्देश्य

स्वातन्त्रयोत्तर भारत के अराजक माहौल का दहकता दस्तावेज 'अंधेरे में' लम्बी कविता प्रस्तुत करती है। विद्यार्थी आजादी के साथ मिले मोहभंग के विभिन्न स्तरों की पहचान इस कविता में करने में सक्षम होंगे।

6.2 प्रस्तावना

मुक्तिबोध की 'अंधेरे में' लम्बी कविता के इतिहास में अपने कथ्यगत एवं शिल्पगत वैशिष्ट्य के करण मील का पत्थर साबित हुई है। समकालीन परिवेश और कवि के आत्मसंघर्ष की अभिव्यक्ति बिम्ब, प्रतीक, फैंटेसी एवं भाषा के जिन आधारों पर हुई है, उन्हें यहाँ स्पष्ट किया गया है।

6.3 'अंधेरे में' का केन्द्रीय विषय और शिल्प

मुक्तिबोध की कविता **'अंधेरे में'** एक विशिष्ट ऐतिहासिक और साहित्यिक बोध को लेकर चलने वाली एक अभूतपूर्व कविता है। जो इतिहास को तथ्यों, आंकड़ों या घटनाओं के रूप में नहीं एक अंतरंग साक्षी, परिवेक्ष्य, संवेदन और विचार के रूप में ग्रहण करती है इस स्तर पर आकर कवि की आत्मिक अनुभूति इतिहास बोध के साथ जुड़ गई है। इस विशिष्टता के कारण ही यह कविता देश के आधुनिक जन इतिहास का स्वतंत्रता और पश्चात् का एक दहकता इस्पाती दस्तावेज़ है।

'अंधेरे में' कविता का कथ्य समय, समाज, व्यक्तियों एवं वर्गों की नब्ज से जुड़ा है, सामाजिक सरोकारों से जुड़ा है, मानवीय भावों से जुड़ा है। इसीलिए यह कविता नये बनते– बिगड़ते समय एवं समाज के बीच जन्म लेती ह्रासोन्मुख प्रवृत्तियों एवं सिकुड़ते जीवन मूल्यों के प्रति सीधी प्रतिक्रिया करती है और मानवीय संवेदना से युक्त होकर मनुष्य–मुक्ति, जन–मुक्ति, के सपनों को साकार करने के लिए स्पष्ट राह दिखाती है। कहना न होगा कि मुक्तिबोध इस कविता में अपने काव्य–नायक के माध्यम से अपने समय एवं समाज के परिवेश एवं परिस्थिति और वर्तमान की समीक्षा करते हैं। उसे आलोचकों ने मुक्तिबोध की 'वर्तमान सभ्यता–समीक्षा' कहा है। मुक्तिबोध उसमें व्यावसायिक मनोवृत्तियों एवं पूंजीवादी विकृतियों को सबसे बड़े कारक के रूप में पाते हैं।

अपने वैविध्ययुक्त कथ्य के बीच 'अंधेरे में' कविता इस तथ्य पर प्रकाश डालती है कि व्यक्तिगत जीवन में या समाज की व्यवस्था में स्वार्थ, उत्पीड़न, भ्रष्टाचार, हताशा, उदासी, कुंठा, अवसाद आदि के जो बिन्दु आज दिखाई दे रहे हैं उनका मूल कारण यही पूंजीवादी सभ्यता है जिसने साहित्य, संस्कृति, दर्शन, कला, चिन्तन आदि के विभिन्न पक्षों को किसी–न–किसी रूप में अपनी गिरफ्त में ले लिया है। जिसका परिणाम यह हुआ है कि वही चीजें सामने आती हैं जो पूँजीवादी सभ्यता की शक्तियाँ दिखाना चाहती है। साहित्यकार कलाकार, चिन्तक सबके सब उसके आकर्षण के जाल में उलझे हुए हैं।

'अँधेरे में' कविता का काव्य–नायक स्पष्ट देखता है कि बौद्धिक वर्ग जाने–अनजाने झूठी सभ्यता, आडम्बरयुक्त सभ्यता के मकड़जाल में पड़कर अपने सच्चे पथ से विचलित हो गया है और उसने जन सामान्य की समस्याओं से मुँह मोड़ लिया है। इसी स्थिति की ओर संकेत करते हुए कहा गया है –

सब चुप, साहित्यिक चुप और कविजन निर्वाक्

चिन्तक, शिल्पकार, नर्तक चुप हैं

उनके ख्याल से यह सब गप है

मात्र किंवदन्ती।

रक्तपायी वर्ग से नाभिनाल–बद्ध ये सब लोग...

बौद्धिक वर्ग है क्रीतदास

किराये के विचारों का उद्‌भास।

अंधेरे में कविता का कथ्य राजनीति, समाज और व्यक्ति तीनों से जुड़ा है और इन तीनों से जुड़ी कविता में निर्णय–अनिर्णय के अनेक रूप दिखाई देते हैं, आशा और हताशा के अनेक बिन्दु दिखाई देते हैं, आत्म–विश्वास एवं आत्म पराजय की स्थितियाँ भी दिखाई देती है, लेकिन अनेकानेक तनावों एवं दुविधाओं के बीच से गुजरते हुए भी वह (काव्यनायक) अन्ततः इसी निष्कर्ष पर पहुँचता है कि–

नहीं नहीं उसको मैं छोड़ नहीं सकूँगा

सहना पड़े मुझे चाहे जो भले ही।

कविता के प्रारम्भ में जो व्यक्तिवादी भाव दिखाई देता है, वह व्यक्तिवादिता धीरे– धीरे समाजोन्मुख होती जाती है।

कविता में एक बड़ा प्रोसेशन निकला है मुक्तिबोध उसका चित्रण बड़े सजीव रूप में करते हैं। उस प्रोसेशन में सशस्त्र फौज है टैंक हैं, मोर्टार हैं, आर्टिलरी है लेकिन इसी के समानान्तर या कहें इसी के साथ कवि, नेतागण, विद्वान्, आलोचकगण, मंत्रीगण, उद्योगपति भी हैं। यही नहीं बल्कि 'शहर का हत्यारा कुख्यात डोमाजी उस्ताद' भी हैं।

कविता का नायक इन मुखौटाधारी लोगों की वास्तविकता को महसूस कर लेता है, फलतः उस सड़क पर जहाँ प्रोसेशन निकल रहा है, उन्हीं लागों के बीच उसमें शामिल हैं एक ओर खड़ा हो जाता है, वे सब अपने आप को बेनकाब होते देखने लगते हैं तभी तो आवाज़ जाती है–

मारो गोली,

दागो स्साले को एकदम

दुनिया की लहरों से हटकर

छिपे तरीके से

हम जा रहे थे

आँधी रात अँधेरे में

उसने देख लिया हमको

व जान गया वह सब

मार डालो उसको खत्म करो एकदम।

वस्तुतः वह कौन–सा रहस्य है जिसे मुखौटाधारी छिपाना चाहते हैं और जिस रहस्य पर से काव्यनायक ने पर्दा उठा दिया है। कवि के दो शब्दों में–

गहन मृतात्माएँ इसी नगर की

हर रात जुलूस में चलतीं

परन्तु दिन में

बैठती हैं मिलकर करती हुई षड्यंत्र

विभिन्न दफ्तरों, कार्यालयों, केन्द्रों में, घरों में।

वस्तुतः यह कवि की अपने समय एवं समाज की व्यवस्था तथा उससे जुड़े लोगों के प्रति सचेतनता है जो कथाकथित आन्दोलनकर्ताओं, मुखौटाधारी कवियों, नेताओं, विद्वानों आलोचकों को पहचान लेती है और उन पर सीधा व्यंग्य करने से नहीं चूकती। सच तो यह है कि मुक्तिबोध ने अपने काव्यनायक के माध्यम से बुर्जुआ समाज (जिसका कि काव्यनायक भी अंग है) के विरूद्ध उसकी सफेदपोशी के प्रति विद्रोह का भाव व्यक्त किया है तथा चाहा है कि वह अपनी सफेदपोशी छोड़कर जनजीवन से जुड़ने की ओर अग्रसर हो क्योंकि –

जनता के गुणों से ही संभव

भावी का उद्‌भव।

लेकिन इसके लिए व्यक्तित्वान्तरण की ज़रूरत है, और व्यक्तित्वान्तरण के लिए

आत्मचिन्तन जरूरी है। इसीलिए मुक्तिबोध की समस्या व्यक्ति के आत्मचिन्तन से शुरू होती है – खोज की राह पर आगे बढ़ती है और विलय के रूप में अपने को पूर्णता तक पहुँचाती है। उसकी सबसे बड़ी समस्या जो दिखाई देती है – धारा से मिलकर चलने की – 'पुण्य–धारा' के साथ, मानवीय गंगा की धारा के साथ। उस धारा से जिस धारा से वे चमक–दमक की दुनिया के कारण अलग हो गये हैं, या अधूरी एवं सतही जिन्दगी जीने की लालसा के कारण उससे दूर छिटक गये हैं। इसीलिए मुक्तिबोध स्वयं उसकी खोज करते हैं, स्वयं उससे मिलना चाहते हैं –

खोजता हूँ पठार... पहाड़... समुन्दर
जहाँ मिल सके मुझे
मेरी वह खोई हुई
परम अभिव्यक्ति अनिवार
आत्मसंभवा।

यों भी मुक्तिबोध की समस्या मात्र अपने विलय की या अपने व्यक्तित्वान्तरण की समस्या नहीं है, बल्कि उनकी समस्या उन सभी सचेतन व्यक्तियों की समस्या है जिन्हें वे सम्राज्यवादी उत्पीड़क शक्तियों के प्रति संघर्ष हेतु प्रेरित करना चाहते हैं। 'अँधेरे में' कविता के मूलकथ्य पर काफी कुछ लिखा गया है। मार्क्सवादी आलोचक डॉ. नामवर सिंह 'अँधेरे में' कविता की ये अन्तिम पंक्तियाँ (खोजता हूँ पठार... पहाड़... समुन्दर/जहाँ मिल सके मुझे/मेरी वह खोई हुई/परम अभिव्यक्ति अनिवार/आत्मसंभवा!) उस अस्मिता या 'आइडेंटिटी' की खोज की ओर संकेत करती हैं, जो आधुनिक मानव की सबसे ज्वलंत समस्या है। निस्सन्देह इस कविता का मूल कथ्य है अस्मिता की खोज किन्तु अन्य व्यक्तिवादी कवियों की तरह इस खोज में किसी प्रकार की आध्यात्मिकता या रहस्यवाद नहीं बल्कि गली–सड़क की गतिविधि, राजनीतिक परिस्थिति और अनेक मानव–चरित्रों की आत्मा के इतिहास का वास्तविक परिवेश है।

काव्य–नायक जिस स्वप्न के बीच से गुजरता है, उसमें कई तरह के परिवर्तन दिखाई पड़ते हैं, और उन्हीं के बीच विलय की प्रक्रिया विकासोन्मुख होती है, और वह 'अँधेरे' से 'उजाले' में आता है। सच तो यह है कि कविता आरम्भ होती है अँधेरे से लेकिन क्रमशः 'दीया', 'अग्निमणि' और सूरजमुखी के गुच्छे उसे प्रकाशित करते हैं, और अन्ततः 'सुनहला रवि छोर' फैल जाता हे। इस प्रकार विकास की मंजिलें निरन्तर ऊँची

होती गयी हैं।

'अंधेरे में' कविता प्रतीकों–बिम्बों के माध्यम से ही लिखी गयी है। 'अंधेरे में' की मूल कथा रूपकात्मक है अतः बिम्ब और प्रतीक के बिना उसका चित्रण ही असम्भव है। कवि अंधेरे जैसे भयानक डरावने सपनों से भरे, रहस्यमय प्रतीक के अतिरिक्त उसी की प्रतीकात्मक को पूरी–व्यवस्था में, मानव जीवन में फैले अंधकार, व्यभिचार को चित्रित करने के लिए अन्य प्रतीक भी चुनता है। वृक्षों में बरगद और पीपल उनके महत्वपूर्ण प्रतीक हैं– पीपल अगर जीवन की भयावहता का संकेत करता है तो बरगद जनगण का प्रतिनिधित्व करने वाला जन–संघर्ष और क्रान्ति के सम्बन्ध हैं। यह बरगद विशाल, विस्तृत है, सक्रिय चेतना युक्त है। मुक्तिबोध द्वन्द्वात्मक और विरोधी शब्दों को लेते हैं जैसे आग और गोली, क्रिया–प्रतिक्रिया, ध्वंस–दमन, अंधेरा–प्रकाश आदि। इससे उनके प्रतीकों की व्यंजकता स्वतः बढ़ती गयी है। अंधेरे के विरुद्ध जो प्रतीक वह लाये हैं वे हैं – मशाल, रक्तालोक–स्नात–पुरुष, अरुण कमल, लाल रंग।

इस कविता का महत्वपूर्ण प्रतीक अनिवार्य प्रतीक तो अंधेरा है। जहाँ से कविता शुरू ही होती है और यह अंधेरा बढ़ता जाता है, घना होता जाता है। यहाँ अंधेरा ही पूरी फैंटेसी क्रियेट करता है – समग्र कविता का सृजन करता है। इसीलिए यह प्रतीक केवल छायावादी प्रतीकार्थ नहीं देता यानी मात्र नैराश्य उसकी व्यंजना नहीं है। यह सामाजिक जीवन का अंधेरा है जो लगातार रूप बदलता रहता है। यह अंधेरा एक तिलस्मी खोह का जादुई रहस्यमय, डरावना वातावरण भी रचता है जो शहर के बाहर, पहाड़ी के उस पार सब तरफ है, ठहरे हुए जल पर भी है। यह अंधेरा 'मौत की सजा' देने वाला भी है। और अनेक ध्वनियों, दृश्यों, कार्यों के रहस्य की परतें खोलने वाला भी है।

मुक्तिबोध अधिकांशतः स्मृति और कल्पनामूलक बिम्बों की रचना करते हैं और इस कार्य को वह अप्रस्तुत विधान से या लक्षणा–व्यंजना से, संकेतों से सम्पन्न करते हुए संवेदना को मूल रूप देते हैं। खास बात यह है कि उनके बिम्बों में पुनरावृत्ति नहीं है और उनकी लम्बी कविता की समग्र बिम्बात्मकता में अनेक प्रकार के बिम्बों का योगदान होता है।

सामान्यतः उनके बिम्ब भयावह हैं – अंधेरा, पठार, पहाड़, समन्दर, नीली झील, गुफा, खोह, जंगल, गली, अंधेरा जीना, पत्थर, बीरान घटाघर, चौराहा, कोलतार पथ, भवन आदि के योग से रहस्यात्मक और व्यंग्यात्मक, भयावह वातावरण पैदा हुआ है। लगता है जैसे बिम्ब–चयन में इतिहास राजनीति, गणित, विज्ञान, प्रकृति, मनोविज्ञान,

कला, जीवन, आदिम सभ्यता, विश्वसंदर्भ, व्याकरण, भाषा, साहित्य किसी का कोना नहीं छोड़ा है। प्राकृतिक बिम्बों में पहाड़, पठार, समन्दर, झील, पेड़, गुफायें, जंगल, हवा, प्रभंजन, बिजली, खुरदरे कगार–तट, तुंग शिखर आदि का वह भरपूर सार्थक उपयोग करते हैं और उन्हीं के माध्यम से कभी वातावरण–निर्माण करते हैं।

कवि ने जिन अप्रस्तुतों को प्रयुक्त किया है वे सकारण आये हैं और उनमें मौलिकता एवं व्यंजकता है। इसी प्रकार अलंकरण पर विशेष ध्यान न देने के बावजूद कवि ने अनेक उपमाओं, उत्प्रेक्षाओं एवं रुपकों का भी प्रयोग नये एवं मौलिक रूप में किया है। इस दृष्टि से 'गहन रहस्यमय अंधकार ध्वनि–सा/अस्तित्व जनता', मैं अपने कमरे में/यहाँ पड़ा हुआ हूँ/आँखें खुली हुई हैं/पीटे गये बालक–सा मार खाया चेहरा/उदास इकहरा, 'वह कोलतार–पथ अथवा/मरी हुई खिंची हुई काली जिहवा'। 'हृदय में मानो कि संगीन नोंकें ही घुस पड़ी बर्बर। 'आँगन में नल जोर मारता/जल खखारता', 'मन–मन–करुणा सी माँ को हंकाल दिया/स्वार्थों के टेरियार कुत्तों का पाल लिया। जैसे प्रयोग विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

'अंधेरे में' में प्रयुक्त भाषा का एक रूप वह है, जिसमें संस्कृत शब्दों के अत्यधिक प्रयोग के द्वारा ओजस्वी दृश्यांकन किया गया है। इस रूप का उदाहरण है :

तेजो प्रभावमय उसका ललाट देख,
मेरे अंग–अंग में अजीव एक थर–थर।
गौरवर्ण, दीप्त–दृग, सौम्यमुख
संभावित स्नेह–सा प्रिय रूप देखकर
विलक्षण, शंका,
भव्य–आजानुभुज देखते ही साक्षात्
गहन एक संदेह।

अथवा

स्वप्नों की कोमल किरणों का पानी
घनीभूत संघनित द्युतिमान
शिलाओं में परिणत,

ये सब दृढ़ीभूत कार्म–शिलाएं हैं

जिनसे कि स्वप्नों की मूर्ति बनेगी

सस्मित सुखकर

जिसमें से उद्‌गत क्रियाशील किरनें

ब्रह्मांड भर में नापेंगी सब कुछ !

सचमुच, मुझको तो जिंदगी सरहद

सूर्यों के प्रांगण पार भी जाती दीखती !!

इन उदाहरणों में भी संस्कृत शब्दों के साथ 'अजीब' और 'जिंदगी–सरहद' जैसे 'विजातीय' शब्दों का प्रयोग हुआ है। ये शब्द संस्कृत शब्दों से निर्मित भाषा को जड़ीभूत होने से बचाते हैं। अन्यत्र को मुक्तिबोध ने जान–बूझकर संस्कृत शब्दों को साथ 'विजातीय' शब्दों या 'विजातीय' शब्दों के साथ संस्कृत शब्दों को रखकर ओजस्वी चित्रों की सृष्टि की है :

विचित्र प्रोसेशन

गंभीर क्विक मार्च

कलाबत्तू वाली काली जरीदार ड्रैस पहने

चमकदार बैंड–दल

अस्थि–रूप, यकृत–स्वरूप, उदर–आकृति

आंतों के जालों–से उलझे हुए, बाजे वे दमकते हैं भयंकर

गंभीर गीत–स्वन–तरंगें

ध्वनियों के आवर्त मंडराते पथ पर।

विजातीय शब्दों के साथ शुद्ध संस्कृत शब्दों के प्रयोग से कवि ने ओजस्वी चित्रों के निर्माण में योग दिया है लेकिन जरूरी नहीं कि मुक्तिबोध संस्कृत शब्दों के कौशलपूर्ण प्रयोग के द्वारा ही वर्णन को ओजस्वी बनाएं। यह काम वे अपेक्षाकृत सरल और स्वाभाविक भाषा में भी सफलतापूर्वक करने में समर्थ हैं। प्रमाण स्वरूप उनका यह वर्णन देखा जा सकता है :

तलाब के आस–पास अंधेरे में वन–वृक्ष

चमक–चमक उठते हैं हरे–हरे, अचानक

वृक्षों के शीश पर नाच–नाच उठती हैं बिजलियां,

शाखाएं, डालियां झूमकर, झपटकर

चीख, एक दूसरे पर पटकती हैं सिर की अकस्मात्

वृक्षों के अंधेरे में छिपी हुई किसी एक तिलिस्मी खोह का शिला–द्वार

खुलता है धड़–से

'अंधेरे में' में जगह–जगह पर मुक्तिबोध की भाषा बहुत ही स्निग्ध और मधुर हो उठती है। ये इस कविता के सर्वाधिक संवेदन स्थल हैं और यहाँ उन्होंने उतनी ही संवेदनशील भाषा का प्रयोग किया है। इस दृष्टि से इसका निम्नलिखित अंश द्रष्टव्य है :

मेरा यह चेहरा

घुलता है जाने किस अथाह गंभीर, सांवले जल से,

झुके हुए गुमसुम टूटे हुए घरों के

तिमिर अतल से

धुलता है मन यह।

रात्रि के श्यामल ओस से क्षालित

कोई गुरु गंभीर महान् अस्तित्व

महकता है लगातार,

मानो खंडहर–प्रसारों में उद्यान

गुलाब–चमेली के, रात्रि–तिमिर में,

महकते हों, महकते ही रहते हों हर पल।

किन्तु वे उद्यान कहाँ हैं,

अंधेरे में पता नहीं चलता।

मात्र सुगंध है सब ओर,

पर उस महक–लहर में

कोई छुपी वेदना, कोई गुप्त चिन्ता

छटपटा रही है, छटपटा रही है।

हमारा ध्यान ''रात्रि के श्यामल ओस के क्षालित गुरु गंभीर अस्तित्व'' और ''महक–लहर में छटपटाती किसी छुपी हुई वेदना'' पर ही नहीं, अभावग्रस्त श्रमजीवियों के ''झुके हुए गुमसुम टूटे हुए घरों के उस अतल तिमिर'' की ओर भी जाना चाहिए, जिससे काव्य–नायक का मन धुल जाता है !

भाषा और अभिव्यक्ति के स्तर पर 'अंधेरे में' एक 'दृश्यालेख' जैसी कविता है। उसकी गत्यात्मकता उसका बहाव, उसकी संवादात्मकता, क्रियाशीलता और वातावरण उसमें 'नाटक' को जन्म देता है। बल्कि कविता में नाट्य की हरकत और तनाव ही उसकी भाषा और शिल्प की मूल प्रकृति और मौलिकता है – वही उसकी प्राणवत्ता और अद्‌भुत व्यंजकता का कारण है।

दूसरी विशेषता है कि मुक्तिबोध पाठक को एक दर्शक की तरह इस पूरी कविता के साथ लेते अनुभव कराते, प्रत्यक्ष दर्शन कराते हुए, बेचैन–उत्सुक–जिज्ञासु और अद्‌भुत लोक के जादुई रोमांच एवं यथार्थ के कठोर सत्य और साथ–साथ क्रान्ति की जागरुक प्रक्रिया से साक्षात्कार कराते हुए चलते हैं, उसे छोड़ते नहीं बल्कि लगातार 'बिजली के झटके' से देते हैं।

इस प्रकार अंधेरे में लम्बी कविता गजानन माधव मुक्तिबोध के त्रासद अनुभव, भाषा और शिल्प की दृष्टि से कवि बिरादरी के लिए एक मॉडल एवं चुनौती बनी रहेगी।

6.4 सारांश – लम्बी कविता में केन्द्रीय विषय के साथ जिन विभिन्न मनोभावों, मनोदशाओं, विचारों, ब्यौरों और वर्णनों की बात जरूरी मानी जाती है उनके आधार पर 'अंधेरे में' की कथ्यगत एवं शिल्पगत उपलब्धियों पर प्रकाश डाला गया है।

6.5 कठिन शब्द – दहकता इस्पाती दस्तावेज़, ह्रासोन्मुख, पूँजीवादी सभ्यता, प्रोसेशन, फैंटेसी

6.6 अभ्यासार्थ प्रश्न–

प्र01 'अंधेरे में' का मूल विषय प्रतिपादित कीजिए।

.....

.....

.....

प्र02 'अंधेरे में' की प्रतीक योजना समझाइए।

.....

.....

.....

प्र03 'अंधेरे में' आजाद भारत का दहकता दस्तावेज है, तर्कसम्मत उत्तर दीजिए।

.....

.....

.....

प्र04 'अंधेरे में' की कथ्यगत विशेषताएं बताइए।

.....

.....

.....

प्र05 'अंधेरे में' के शिल्पगत वैशिष्ट्य पर प्रकाश डालिए।

.....

.....

.....

6.7 पठनीय पुस्तकें –

1) चाँद का मुँह टेढ़ा है – गजानन माधव मुक्तिबोध

2) बीसवी शताब्दी का उत्कृष्ट साहित्य : लम्बी कविताएं – डॉ. नरेन्द्र मोहन

3) मुक्तिबोध की कविताई – अशोक चक्रधर

4) लम्बी कविता का रचना विधान – डॉ. नरेन्द्र मोहन

5) मुक्तिबोध की काव्य–सृष्टि – सुरेश ऋतुपर्ण

6) अंतस्तल का पूरा विप्लव : अंधेरे में – निर्मला जैन

हरिजन गाथा का केन्द्रीय विषय और शिल्प

7.0 रूपरेखा

7.1 उद्देश्य

7.2 प्रस्तावना

7.3 हरिजन गाथा का केन्द्रीय विषय और शिल्प

7.4 सारांश

7.5 कठिन शब्द

7.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

7.7 पठनीय पुस्तकें

7.1 उद्देश्य

नागार्जुन की लम्बी कविता हरिजन गाथा यथार्थ घटना पर केन्द्रित सामाजिक भेदभाव से जन्मी त्रासदी को सीधी, सरल भाषा में अभिव्यक्त करती हैं। इस पाठ के माध्यम से विद्यार्थी दलित जीवन के संघर्ष से भी परिचित होंगे।

7.2 प्रस्तावना

वर्ण व्यवस्था के कारण उच्च वर्ग के द्वारा निम्न वर्ग पर किए जाने वाले नृशंस अत्याचारों को मिथकीय चरित्र की उद्‌भावना कर नागार्जुन ने अभिव्यक्त किया है, जिसकी पहचान इस अध्याय में हुई है।

7.3 हरिजन गाथा का केन्द्रीय विषय और शिल्प

नागार्जुन की लम्बी कविता **हरिजन गाथा** सर्वप्रथम **खिचड़ी विप्लव देखा**

हमने काव्य संग्रह में संकलित हुई। हरिजन गाथा एक समस्यामूलक जनवादी कविता है। इस कविता में हरिजनों पर होने वाले अत्याचार को वर्ण्य–विषय बनाया गया है। वर्णव्यवस्था भारतीय धर्म–दर्शन का प्रमुख आधार है। समाज का उच्च वर्ग वर्णव्यवस्था में नियामक मानकर मानवीय मूल्यों की व्याख्या करता रहा है, पर कालान्तर में मानवता को इस सिद्धान्त के अभिशाप को लम्बे समय तक भुगतते रहना पड़ा है। यह समस्या यदि बौद्धिक स्तर तक रहती तो भी ठीक था पर सबसे त्रासद पक्ष यह है कि स्वस्थ वैचारिक संवाद के स्थान पर अत्याचारों की अंतहीन श्रृंखला से प्रारंभ हुई। हरिजनों के नरसंहार की अनेक घटनायें हुईं, उन्हें जिन्दा बनाया गया, भूमि व सम्पत्ति से बेदखल कर दिया गया। प्रस्तुत कविता अत्याचार की इसी पृष्ठभूमि से सम्बद्ध है।

'हरिजन गाथा' का प्रारम्भ होता है एक ऐसी घृणित घटना से जो साधन सम्पन्न लोगों के द्वारा घटित की जाती है। जिसमें तेरह के तेरह 'अकिंचन मनु पुत्रों' को जीवित जला दिया जाता है। और उसी घटनाक्रम के बाद उस बस्ती में नवजात शिशु का जन्म होता है उसके जन्म लेने, उसके संरक्षण करने की चिन्ता के साथ कविता आगे बढ़ती है जहाँ नवजात शिशु में क्रान्तिकारी व्यक्तित्व की कल्पना की गई है। नये भविष्य को बनाने का तथा मुक्ति के संदेश का भाव व्यक्त किया गया है।

इसकी बुनावट में अन्याय भी है अत्याचार भी है, करुणा भी है, आक्रोश भी है', व्यंग्य भी है, कल्पना भी है और इन सबसे मिश्रित यह कविता नयी आस्था को जन्म देने वाली है। दलित जीवन की पीड़ा को अभिव्यक्ति देने वाली 'हरिजन गाथा' कविता को नागार्जुन के रचना–संसार में मील के पत्थर के रूप में देखा जा सकता है क्योंकि इस कविता में वे आशान्वित रहे हैं कि एक–न–एक दिन ऐसा अवश्य आयेगा जब सवेरा होगा और दलितों के भाल विजय के कुकुम की लाली से चमकेंगे। तभी तो वे लिखते हैं–

श्याम सलोना यह अछूत शिशु
हम सबका उद्धार करेगा
आज यही सम्पूर्ण क्रान्ति का
बेड़ा सचमुच पार करेगा

इन पंक्तियों में कवि की बेचैनी और उसके आक्रोश को तो हम देख ही सकते हैं, साथ ही उसकी दूरदृष्टि को भी देख सकते हैं। डॉ. मैनेजर पाण्डेय ने ठीक ही लिखा है कि ''यह वर्णन–व्यवस्था के विरुद्ध गहरे आक्रोश और उसके अंत की कामना से लिखी

गई कविता है''।

'हरिजन गाथा'' कविता के कथ्यगत वैशिष्ट्य पर विचार करते हुए हमें यह देखना होगा कि इस कविता का पूरा का पूरा ताना–बाना किन–किन रेशों से बुना गया है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए ही 'हरिजन गाथा' कविता का विश्लेषण सही रूप में किया जा सकता है। यह कविता तीन भागों में बँटी हुई है। प्रथम भाग का कथ्य मूलतः व्यथा पर आधारित है इसमें मूल रूप से तीन चीजें विशेष रूप से दिखायी देती है :

1. अन्याय एवं अत्याचार का चित्र।
2. वर्ण–व्यवस्था पर चोट।
3. सामाजिक–राजनीतिक व्यवस्था के कटु यथार्थ का चित्रण।

कविता के दूसरे भाग का कथ्य नये जीवन की कल्पना और व्यवस्था–विरोध के भाव से जुड़ा हुआ है। जबकि तीसरे भाग का कथ्य चिन्ता और एकता से जुड़ा है क्योंकि उनके संरक्षण पर ही उस बालक का भविष्य आधारित है और उस बालक के भविष्य पर ही मानवता का भविष्य आधारित है। 'हरिजन गाथा' कविता हरिजन दहन की पारिवारिक पृष्ठभूमि से शुरू होती है प्रारम्भ की पंक्तियां उस पैशाचिक घटना की ओर संकेत करती हैं जो 'पहले कभी नहीं' घटित हुआ था लेकिन आज घटित हुआ है। यहाँ पर दो बातें एक साथ घटित हो रही हैं एक और निरपराध हरिजनों का भस्मीभूत होना जिसे कवि ने इन पंक्तियों में व्यक्ति किया है :

ऐसा तो कभी नहीं हुआ था
एक नहीं, दो नहीं, तीन नहीं,
तेरह के तेरह अभागे अकिचन मनु पुत्र
जिन्दा झोंक दिये गये हों
प्रचंड अग्नि की विकराल लपटों में
साधन सम्पन्न ऊँची जातियों वाले
सौ–सौ मनु पुत्रों द्वारा

दूसरी ओर वह घटना है जो हरिजन–दहन की पाश्विक पृष्ठभूमि घटित होती है जहाँ एक और ऐसी घटना घटित होती है जो 'पहले कभी नहीं हुई' थी। जिसे कवि ने

हरिजन माताओं की गर्भकुक्षियों में लगातार दौड़ लगाने वाला भ्रूण के चित्र के माध्यम से व्यक्त किया। वस्ततुः वे दिखाना चाहते हैं कि माताओं के भ्रूण तक इस जुल्म से वेचैन हो उठे हैं और वे भी प्रतिरोध हेतु जन्म लेना चाहते हैं। नागार्जुन यहाँ यह भी दिखाना चाहते हैं कि इन भ्रूणों ने भी अप्रत्यक्ष रूप से बाहरी दुनिया की विपदा को झेला है और इसीलिए नवजात की हथेली में बर्छी, भाला, बम आदि के निशान बने हुए दिखाते हैं।

कहने का तात्पर्य यह है कि बच्चे का जन्म अमानुषिक, पैशाचिक, अन्याय एवं अत्याचार की पृष्ठभूमि में होता है। ऐसी घटनाएँ प्रायः होती रही हैं और उनके प्रति कोई सक्रिय प्रतिरोध देखने को नहीं मिलता है बल्कि वे सबके सब पैदा होने वाले समय आने पर भाग्यवान मनु पुत्रों के द्वारा शोषित ही होते रहे हैं। नागार्जुन ने दोनों व्यस्क व बुजुर्गों–बुद्धू और खदेरन के माध्यम से इस ओर संकेत भी किया है :

पैदा हुआ बेचारा –

भूमिहीन बँधआ मजदूर के घर में

जीवन गुजारेगा हैवान की तरह

भटकेगा जहाँ–तहाँ बनमानुष जैसा

अधपेटा रहेगा अधनंगा डोलेगा

यह एक पक्ष है। इसी के आगे कवि ने एक कल्पना भी की है जहाँ–हाथ पैरों को अनोखे रूप में चित्रित कर उसे जन्म लेने वाले बालकों से अलग चित्रित किया गया है। नागार्जुन स्वयं गुरु महाराज के रूप में उपस्थित होकर उसके भाग्य को बाँचते हैं और पाते हैं कि यह बालक सामान्य बालकों से भिन्न नेतृत्व करने वाला होगा। इसीलिए वे उसे 'भाग्यवान मनु पुत्रों' से दूर भागने की आवश्यकता को प्रतिपादित करते हैं। क्योंकि उसकी रक्षा आवश्यक है। इस नये जन्म लेने वाले बालक की रक्षा को इसलिए भी अनिवार्य बतलाया है क्योंकि कवि को मालूम है कि यदि 'भाग्यवान मनु पुत्रों' से इसे दूर नहीं किया जायेगा तो यह भी अकिंचन मनु पुत्रों की तरह असमय ही मौत के घाट उतार दिया जायेगा। इस स्थिति की ओर संकेत करते हुए कवि ने लिखा है–

आज भगाओ, अभी भगाओ

तुम लोगों को मोह न घेरे

होशियार इस शिशु के पीछे

लगा रहे हैं गीदड़ फेरे

बड़े–बड़े इन भूमिधरों को

यदि इसका कुछ पता चल गया

दीन–हीन छोटे लोगों को

कविता के दूसरे खण्ड में कवि ने जो कल्पना की है व्यवस्था–विरोध की नहीं है बल्कि वहाँ कुछ आदर्शों की भी कल्पना की गई है। साथ ही यह विश्वास किया गया है कि आने वाले समय में यह बालक उन मानवतावादी आदर्शों को मूर्त रूप देगा जिसके लिए इसका संरक्षण किया जा रहा है। अर्थात् उसे भविष्य के नेतृत्वकर्त्ता के रूप में कवि प्रस्तुत करता है और उसी दृष्टिकोण को व्यक्त करता है :

सबके दुख में दुखी रहेगा

सबके सुख में सुख मानेगा

समझ–बूझ कर ही समता का

असली मुद्दा पहचानेगा

हिंसा और अहिंसा दोनों

बहनें इसको प्यार करेंगी

इस के आगे आपस में वे

कभी नहीं तकरार करेंगी

इस बालक की कल्पना के साथ–ही–साथ कवि यह भी कल्पना करता है कि दलित माँओं के सभी बच्चे जो कि अमानुषिक पैशाचिक वातावरण के बीच जन्म ले रहे हैं वे सबके–सब होंगे और नई व्यवस्था को जन्म देने में सहभागी बनेंगे :

दिल ने कहा–दलित माँओं के

सब बच्चे अब बागी होंगे

अग्नि पुत्र होंगे वे, अन्तिम

विप्लव में सहभागी होंगे

कविता का तीसरा खण्ड मूलतः उस चिन्ता से जुड़ा हुआ है जिसमें गुरु महाराज के बताये हुए कार्य को अन्तिम परिणति तक ले जाने के क्रिया व्यापार का चित्रण है। यहाँ पर हम देखते हैं कि सबके सब एक जुट होकर उस शिशु को सुरक्षित कर उसे एक ऐसा परिवेश देना चाहते हैं जिस परिवेश में वह बड़ा होकर दलित और शोषित वर्ग के लिए कुछ कर गुजरने की शक्ति अर्जित कर सके। इसमें एकता का भाव भी है और यह भी भाव है जो पैशाचिक नरमेध घटित हुआ है वह नरमेध पुनः घटित न हो। इस कविता में सर्जनात्मक तनाव देखने को मिलता है लेकिन उसी सर्जनात्मक तनाव के बीच कविता अपने अन्तिम बिन्दु की ओर पहुँचती है।

नागार्जुन की यथार्थवादी चेतना पूरी सक्रियता के साथ इस कविता में दिखायी देती है वे अन्याय और अत्याचार के परिवेश का भी चित्रण करते हैं जो कि कविता का वर्तमान है। साथ ही उस भविष्य के प्रति स्वप्नशील भी दिखायी देते हैं जो कविता का अंत है। यहाँ पर नागार्जुन ने कलात्मक रूप में समय और समाज के बीच नई जन्म देने वाली प्रवृत्तियों की और भी संकेत किया है। दलित वर्ग की चिन्ता करते हुए कवि ने यहाँ पर उसके अंत की भी कामना की है और एक ऐसा अंत जो मानवतावादी हो। कवि की पक्षधरता स्पष्टतः जनोन्मुखी है। निःसंदेह 'हरिजन गाथा' कविता कवि की यथार्थवादी चेतना की काव्यात्मक अभिव्यक्ति है।

शिल्पगत वैशिष्ट्य

नागार्जुन कविता में शिल्पगत विशेषताओं के प्रति अतिरिक्त सजगता भी नहीं दिखाते। यही कारण है कि उनकी कल्पना, उनकी भाषा का मुहावरा, उनके प्रतीक, उनके बिम्ब सब बड़े सहज और आडम्बरहीन रूप में दिखाई देते हैं। 'हरिजन गाथा' कविता के समूचे शिल्प विधान को बतौर उदाहरण देखा जा सकता है।

कविता तीन खण्डों में प्रस्तुत है और तीनों का काव्य रूप अलग–अलग रूपों में दिखाई देता है। कवि ने यहाँ पर जिस भाषा का प्रयोग किया है वह दो दृष्टियों से महत्वपूर्ण है– एक विचार–सम्प्रेषण हेतु और दूसरा भावाभिव्यक्ति के लिए है। और दोनों में लोकजीवन के प्रचलित मुहावरों एवं शैलियों को आधार बनाया गया है। मोटे तौर पर कविता की भाषा सपाटबयानी के करीब की हे जिसमें संस्कृतनिष्ठ शब्दों के साथ ही तद्भव एवं देशज शब्दों का प्रयोग बहुलता से हुआ है। साथ ही उर्दू के शब्दों का प्रयोग देखने को मिलता है लेकिन ये सभी प्रयोग बोधगम्य हैं क्योंकि बोलचाल के करीब के हैं।

'हरिजन गाथा' में जहाँ गर्भकुक्षियों, पैशाचिक, चिताकुंड, प्रचण्ड, विह्वल, सुसज्जित,

दुष्कांड जैसे संस्कृतनिष्ठ शब्दों, लक्कड़ आसरे, माटी, डोलेगा, खर्ची, तलैया, मुलुर–मुलुर, कपार, जुलुम, जैसे तद्भव एवं देशज शब्दों तथा महसूस, महज़, आबादी, हैवान, फिक्र, किस्मत, होशियार, फौरन जैसे उर्दू के शब्दों का प्रयोग भी बड़ी कुशलता से हुआ है। नवीन एवं मौलिक प्रयोग के रूप में 'सुपर मौज' जैसे प्रयोग भी देखने को मिलते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि कवि ने प्रसंगानुकूल एवं भावानुकूल ग्रामीण शब्दों को ही कविता में स्थान दिया है ताकि कथ्य के साथ उसका सामंजस्य भी बैठ सके और वह बोधगम्य भी हो।

नागार्जुन प्रगातिवादी काव्यधारा के कवि हैं, अतः उनकी कविताओं में क्रांति एवं आर्थिक शोषण से जुड़े प्रतीक अधिक मिलते हैं। आपने प्रतीकों के माध्यम से नागार्जुन ने 'हरिजन गाथा' कविता में जो व्यंग्य किया है वह विशेष उल्लेखनीय है :

तेरह के तेरह अभागे मनुपुत्र

सौ–सौ भाग्यवान मनुपुत्रों द्वारा।

यहाँ अभागे एवं भाग्यवान मनुपुत्रों की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति बहुत सीधी–सरल है। एक वे जो शोषित–पीड़ित दलित हैं दूसरे वे जो धनवान हैं जिन्हें कवि ने 'भूमिधरों' कहा है। 'गीदड़' के प्रतीकात्मक प्रयोग से कवि ने उन समस्त उच्चवर्गीय लोगों की मानसिकता की ओर संकेत किया है जो दलितों पर होने वाले अत्याचार के लिए जिम्मेदार है। इसीलिए कवि ने संत गरीबदास के द्वारा यह कहलवाया है–

होशियार इस शिशु के पीछे

लगा रहे हैं गीदड़ फेरे।

नवजात के दायीं हथेली की आड़ी–तिरछी रेखाओं के बीच जो हथियारों के निशान बताये गये हैं वो भी किसी–न–किसी रूप में अपनी प्रतीकात्मकता व्यक्त करते हैं और यह ध्वनित करते हैं कि इस बालक को अप्रत्यक्ष रूप में गर्भकुक्षि में रहते हुए भी इन्हीं अस्त्र–शस्त्रों की पीड़ा झेली है–

सोच रहा था–इस गरीब ने

सूक्ष्मरूप में पिदा झेली

आड़ी तिरछी रेखाओं में

हथियारों के ही निशान हैं

खुखरी है, बम है, असि भी है

गंडासा–भाला प्रधान है।

नागार्जुन ने चित्रात्मक एवं गत्यात्मक दोनों तरह के बिम्बों का सहज विधान किया है। कविता के बिम्ब अत्यन्त सहज एवं स्पष्ट हैं इसीलिए उनसे होने वाली अभिव्यक्ति भी सहज है। दलित माओं के गर्भ में भ्रूणों की सक्रियता का जो बिम्ब कवि ने प्रस्तुत किया है वह उल्लेखनीय है क्योंकि वह नवजातक की सक्रियता की पृष्ठभूमि निर्मित करता है।

ऐसा तो कभी नहीं हुआ था

महसूस करने लगी वे

एक अनोखी बेचैनी

एक अपूर्व आकुलता

उनकी गर्भकुक्षियों के अंदर

बार–बार उठने लगीं टीसें

लगाने लगे दौड़ उनके भ्रूण

अंदर ही अंदर।

आलोचकों का यह मानना है कि इस कविता में अस्पष्ट ही सही पर मिथकीय संदर्भ भी है और वह कृष्ण के जन्म तथा उनके संरक्षण से जुड़ा है। इस संदर्भ में नरेन्द्र मोहन ने माना है कि – ''यद्यपि कविता में मिथक–विधान की पद्धति हमारे यहाँ बड़ी स्थूल–सी रही है। (लेकिन) इस कविता में मिथक का महीन सूत्र गहराने लगता है। यह मिथक है कृष्ण का जिसे कवि बाकायदा खड़ा नहीं करता, कृष्ण का कहीं उल्लेख भी नहीं करता लेकिन कृष्ण सम्बन्धी मिथकीय संकतों को नवजातक से सम्बद्ध करता है। ऊँची जाति के लोगों द्वारा किया गया नरमेध, जन–मन का भय, नवजातक का जन्म और तत्संबंधी ब्यौरे जिस रूप में कविता में आये हैं, उन्हें पढ़ते हुए पाठकीय चेतना में कृष्ण की मिथ का कौंध जाना स्वाभाविक है। मिथक संकेतों पर यथार्थ स्थितियों का ऐसा अन्तर्गुम्फन अन्यत्र कम देखने को मिलता है।

कविता में जहाँ पहले और तीसरे खण्ड में भावानुरूप मुक्त छंद का विधान किया

गया है वहीं दूसरे खण्ड में छनद–बद्धरूप में भावों को अभिव्यक्ति दी गयी है। यहाँ पर भी लय एवं तुक का पर्याप्त ध्यान रखा गया है।

अलंकारों के प्रति नागार्जुन बहुत आग्रहशील नहीं रहे हैं लेकिन उपमा, रूपक एवं उत्प्रेक्षा के प्रयोग द्वारा उन्होंने अर्थ गांभीर्य में वषद्धि ज़रूर की है। कुछ प्रयोग देखे जा सकते हैं :

जीवन गुजारेगा हैवान की तरह

भटकेगा जहाँ–तहाँ बनमानुष जैसा।

फिक्र की तलैया में खाने लगे गोते।

बकरी वाली गंगा–जमनी दाढ़ी थी।

युग की आँचों में फौलादी/साँचे–सा यह वही ढलेगा।

दीन–हीन छोटे लोगों को/समझो फिर दुर्भाग्य छल गया।

साफ सलेटी हृदय–गगन में/जाने कैसे सुधियाँ छाई।

वह था माना पीछे–पीछे/आगे थी भास्वर शिशु–छाया।

इसके अतिरिक्त इन बूढ़ों की नींद उड़ गयी है; बेड़ा सचमुच पार करेगा; जंगल में ही मंगल होगा; उसमें सौ–सौ गोते खाये; शोषण की बुनियाद हिलेगी जैसे मुहावरों के प्रयोगों द्वारा कवि ने अपनी अभिव्यक्ति को लोकोन्मुखी एवं बोधगम्य भी बनाया है।

यह सच है कि 'हरिजन गाथा' में कलागत सौन्दर्य की अपेक्षा सपाटबयानी अधिक है लेकिन कवि ने सीधी बात करते समय सूक्ष्मता एवं सांकेतिकता का भी सहारा लिया है। और इन दोनों के सामंजस्य के बीच कविता प्रेषणीय बन पड़ी है। दुर्बोधता एवं जटिलता कविता में कहीं भी नहीं मिलती है और यह कविता के शिल्पविधान की रेखांकित करने योग्य विशेषता है। पूरी कविता अपने कथ्य के साथ भाषा, प्रतीक, बिम्ब, छन्द, लय आदि सभी दृष्टियों से लोकजीवन के करीब की कविता है उनके दुःख–दर्दों की जीती–जागती तस्वीर है, और उस तस्वीर की प्रस्तुति में नागार्जुन को पूरी सफलता मिली है।

7.4 सारांश – आख्यान का सूक्ष्म सहारा लेकर सामाजिक यथार्थ के जरिए दलित विमर्श के संदर्भ में इस लम्बी कविता के चरित्रों, संवादों के साथ कथ्यगत एवं शिल्पगत

वैशिष्ट्य का विवेचन हुआ है।

7.5 कठिन शब्द – अकिंचन मनु पुत्र, पैशाचिक, भाग्यवान मनु पुत्र, नवजातक

7.6 अभ्यासार्थ प्रश्न–

प्र01 'हरिजन गाथा' का कथ्य बताइए।

.....

.....

.....

प्र02 'हरिजन गाथा' दलित संघर्ष की कविता है, स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

प्र03 'हरिजन गाथा' के पात्रों का विवेचन कीजिए।

.....

.....

.....

प्र04 'हरिजन गाथा' के शिल्प पर विचार कीजिए।

.....

.....

.....

7.7 पठनीय पुस्तकें –

1) खिचड़ी विप्लव देखा हमने – नागार्जुन

2) प्रतिनिधि कविताएं नागार्जुन – नामवर सिंह (सं.)

3) बीसवी शताब्दी का उत्कृष्ट साहित्यः लम्बी कविताएं– डॉ. नरेन्द्र मोहन

4) नयी कविता की लम्बी कविताएं – रामसुधार सिंह

5) समकालीन कविता की पहचान – युद्धवीर धवन

6) नागार्जुन का काव्य एक नव मूल्यांकन – जे.बी.ओझा

7) लम्बी कविता : नये संदर्भ – डॉ. रजनी बाला

'टुण्डे आदमी का बयान' का केन्द्रीय विषय और शिल्प

8.0 रूपरेखा

8.1 उद्देश्य

8.2 प्रस्तावना

8.3 'टुण्डे आदमी का बयान' का केन्द्रीय विषय और शिल्प

8.4 सारांश

8.5 कठिन शब्द

8.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

8.7 पठनीय पुस्तकें

8.1 उद्देश्य

आज़ादी के बाद मोहभंग की स्थिति ने लम्बी कविता में खास पहचान बनाई है इस क्रम में टुण्डे आदमी का ब्यान के माध्यम से विद्यार्थी, देश में राजनीतिक अराजकता, कानूनी विसंगति, माफिया गैंग आदि से वैचारिक शैली में अवगत हो सकेंगे।

8.2 प्रस्तावना

इस अध्याय में विद्यार्थी एकाधिक लम्बी कविताओं की रचना करने वाले कवि बसन्तकुमार परिहार के रचना कौशल के साथ विवेच्य कविता के युगीन सदर्भों की प्रतीकात्मक पहचान कर सकेंगे।

8.3 'टुण्डे आदमी का बयान' का केन्द्रीय विषय और शिल्प

ग़ैर हिन्दी–भाषी प्रदेश गुजरात में रहने वाले बसन्तकुमार परिहार का जन्म

स्यालकोट जो अब पाकिस्तान में है, वहाँ हुआ। वह हिन्दी में लिखने वाले महत्त्वपूर्ण नाटककार, सम्पादक और कवि हैं। इनके साहित्य की मूल धुरी स्वातन्त्रयोत्तर भारत में जन्मी राजनीतिक विसंगति पर आधारित और उससे जुड़े विभिन्न पहलुओं से जन्मी वैचारिक चिन्तन दृष्टि है, जिसके केन्द्र में व्यक्ति और व्यवस्था के परस्पर विरोधी सम्बन्ध हैं। अतः आजादी के साथ जन्मी मोहभंगजनित पीड़ा और उससे मुक्ति का प्रयत्न उनकी सृजनधार्मिता को क्रियान्वित करता है।

इस मानसिकता की सर्वाधिक सटीक अभिव्यक्ति उनकी लम्बी कविताओं 'गुमशुदा चेहरे की तलाश', 'उन्नीसवां अध्याय', 'चिन्दी–चिन्दी अस्तित्व', 'आरंभ होती है कविता', 'भ्रमों का जंगल', 'टुण्डे आदमी का बयान' और प्रेमी परसराम' और 'नक्शे पर नुक्ता' में हुई है।

राजनीतिक मोहभंग ने बुद्धिजीवी के साथ आम आदमी के सामने सवालों के जो कैक्टस खड़े किये हैं, उनकी चुभन बसन्तकुमार परिहार की लम्बी कविताओं में महसूस की जा सकती है।

'गुमशुदा चेहरे की तलाश' में एक गुमशुदा चेहरे जो वास्तव में कवि या बुद्धिजीवी का है और वह खण्डित सपनों के माया जाल में कहीं खो गया है – की तलाश की गयी है। 'उन्नीसवां अध्याय' कविता में श्रीमद्भागवत गीता के अठारह अध्याय अपर्याप्त जान पड़ते हैं और कवि को उन्नीसवें अध्याय की आवश्यकता अनुभव होती है। उन्नीसवां अध्याय लम्बी कविता प्रत्यक्ष रूप से व्यवस्था के विरोध में साधारण व्यक्ति को खड़े होने के लिए प्रेरित करती है। जितनी भी मारक या संहारक स्थितियां हैं उनको नष्ट करने के लिए एक संघर्षकामी चेतना भरने का कार्य इस कविता में हुआ है।

'चिन्दी–चिन्दी अस्तित्व' में आज़ादी के पश्चात् मोहभंग की स्थिति है। जिसके चलते व्यक्ति का अस्तित्व खण्ड–खण्ड हुआ है। एक तरह से कहें तो व्यक्ति खण्डित होकर अस्तित्वहीन हो गया है क्योंकि जिन स्वप्नों या अधिकारों को लेकर स्वतन्त्रता पायी थी उनकी पूर्ति अभी तक नहीं हो पायी है। जिसके कारण व्यक्ति स्वयं को अति अपमानित या लज्जित होकर आधा–अधूरा अनुभव करता है।

'आरम्भ होती है कविता' में नौ ब्यौरेनुमा अन्तराल हैं जिनके माध्यम से कवि आज की भद्दी या बदरंगी दुनिया का चेहरा हमारे समक्ष प्रस्तुत करता है। एक विद्रोही व्यक्ति का विद्रोह क्यों असफल हो जाता है यहाँ इस पर प्रकाश डाला गया है। इसके भी दो कारण मिलते हैं एक तो उसे सही दिशा का ज्ञान नहीं है, दूसरा पेट की भूख एवं

लालच के कारण इतना फंस जाता है कि सत्ता द्वारा दिये जाने वाले मन लुभावने नारों में चिपक कर रह जाता है। इसमें गाँधी के सपनों का खंडित भारत मिलता है। परिहार ने गाँधी जी के स्वप्निल भारत नहीं वरन् असली भारत को दिखाया गया है और गांधीगिरी की आड़ में आज के नेता क्या–क्या कर रहे हैं इस बात की भी झलक मिलती है।

'भ्रमों के जंगल' लम्बी कविता में व्यक्ति के मानस पटल पर फैले भ्रमों को हटाने का कवि ने सफल प्रयास किया है ताकि साधारण व्यक्ति आज की व्याप्त विसंगतियों में न उलझे, या ऐसी विसंगत परिस्थितियों में अपना विद्रोह प्रकट करने के लिए स्वयं को सक्षम समझे। लेकिन यहाँ आम आदमी अपने कर्तव्य के प्रति इतना दिशाहीन हो गया है कि व्यवस्था के प्रति किस औज़ार से संघर्ष करना है, उसे मालूम नहीं है। वह व्यवस्था के तन्त्र में आकर उनकी ही साजिशों का शिकार होकर इतना भ्रमित हो जाता है कि अपने अन्दर समाये तीव्र आवेश को हिम नदी को समर्पित कर देता है। यहाँ तक कि अपनी मुट्ठियों में बर्फ दबाकर सत्ता से विद्रोह करने के लिए निकल पड़ता है लेकिन ऐसी विपरीत स्थितियों से कवि असहमत है। विद्रोही व्यक्ति के हाथ में बर्फ नहीं बल्कि वह लोहार की भट्ठी और ठनठनाता हुआ हथौड़ा थमाना चाहता है ताकि ऐसी परिस्थितियों से निपटा जा सके।

'प्रेमी परसराम' शीर्षक लम्बी कविता में आज की राजनीति, प्रजातंत्र तथा व्यवस्था के मकड़जाल में फँसे आम व्यक्ति की दुर्दशा को व्यंग्यात्मक अभिव्यक्ति दी है। 'नक्शे पर नुक्ता' कविता में असंगत कविता की तर्ज पर समकालीन परिवेश का चित्रण है।

परिहार की कविताओं में राजनीतिक अराजकता के प्रति आक्रोश का स्वर मुखरित हुआ है। कवि ने अपनी लम्बी कविताओं में आम आदमी और सत्ता या व्यवस्था के मध्य किस प्रकार का संघर्ष व्यवहार होता है ? उसे ही अपना विषय बनाया है। साधारण व्यक्ति व्यवस्था के द्वारा पेट की भूख और लालच के कारण उनके हाथों की कठपुतली बन जाता है और व्यवस्था उसे साम, दाम, दण्ड, भेद में उलझाकर मूल कर्त्तव्य या चेतना से विमुख करने का प्रयत्न करती है। इस विसंगत वातावरण से जन्मे मोहभंग में छटपटाते आम व्यक्ति की विवशता को परिहार ने अपने काव्य के केन्द्र में रखा है।

'टुण्डे आदमी का बयान' में समकालीन इतिहास की विसंगति और विद्रूप को झेल रहे साधारण आदमी की टूटन और टुण्डेपन के बोध को परिवेशगत ब्यौरों और तनावपूर्ण मानसिकता में ताना गया है। आम व्यक्ति ने स्वतंत्रता से पूर्व कितने स्वप्न संजोये थे,

कितनी आकांक्षायें की थीं, कि हमारा भारत स्वतंत्रता मिलने के पश्चात् इस तरह का होगा। सब कुछ अपना एवं इच्छानुसार होगा। उस समय यही अनुभव हुआ था कि आने वाली सत्ता लोगों की, लोगों द्वारा और लोगों के लिये ही होगी और एक खुशहाल विशाल भारत का निर्माण होगा –

उसे विश्वास था
कि माली उसकी परवरिश
नेक नीयत से कर रहा है
इसलिए वह खुश था
अपनी नियत पर..
बाग़ और बाग़बाँ पर
तथा उन फ़िज़ाओं पर
जिनमें सांस लेते समय
उसके फेफड़े
मुक्त आकाश में
उन्मुक्त उड़ते पखेरु से फुदकते थे...

किन्तु इसके विपरीत देश के स्वतन्त्र होते ही आम व्यक्ति का मोहभंग हो गया। तब सभी के संजोये स्वप्न क्षत–विक्षत होकर चकनाचूर हो गये। सब कुछ अनचाहा हुआ जिसकी किसी व्यक्ति ने कभी कल्पना नहीं की थी।

इस कविता में एक लाश आती है। यह लाश उस आम आदमी और आधुनिक मनुष्य की लाश है जो देखता है कि राजनीति पक्षधरता में और धर्म पाखण्ड में परिवर्तित हो गया है। एक व्यक्ति को कटघरे में खड़ा किया जाता है, यह वही मोहभंग से ग्रस्त कुण्ठा जनित आम व्यक्ति है जो यहाँ से अपना एक हमदर्द देखता है वह है लहूलुहान हिन्दोस्तान, जिसे फैंटेसी के रूप में लिया गया है। यहाँ फिर से अभिव्यक्ति का संकट है और कवि एक अदद जबान की तलाश करता है ताकि वह अपनी बात को स्पष्ट रूप से प्रस्तुत कर सके। कवि महानगरीय संस्कृति से होते हुए समसामायिक संस्कृति और परिदृश्य पर अनेक प्रश्न उठाता है। इस प्रकार स्वतंत्रता के पश्चात् का कच्चा चिट्ठा

'टुण्डे आदमी के बयान' के माध्यम से उत्पन्न होता है।

महानगरीय संस्कृति के बीच से गुज़रती हुई यह कविता समसामयिक संस्कृति और परिवेश पर अनेक सवाल उठाती है। यह कविता मध्यवर्ग की उस मानसिकता को कटघरे में लाकर खड़ा कर देती है जो सुविधाभोगी है और इस प्रवृत्ति के कारण एक लाश की तरह निष्क्रिय है । कवि कविता के आरंभ में ही कविता के केन्द्रीय परिदृश्य को स्पष्ट करता हुआ कहता है कि आज की भारतीय परिस्थितियों के बीच के देश के लोग जिसे स्वतन्त्रता मान बैठे हैं वह वस्तुतः एक सुविधा है, जिसे छीना भी जा सकता है, गिरवी भी रखा जा सकता है, सुविधा या सुरक्षा के लिए।

स्वतन्त्रता के साथ विरासत में मिला विभाजन मोहभंग का पहला चरम रूप है जिसका फैलाव कालान्तर में भारत–पाक और भारत–चीन के विभिन्न युद्धों, आपातकाल, 1984 के उग्रवाद, 1990 के कश्मीरी पंडितों के विस्थापन, क्षेत्रीय–प्रान्तीय धरातल पर उठते–गिरते साम्प्रदायिक–भाषायिक तनाव के साथ आटा, दाल, चावल और रोटी, कपड़ा, मकान की जुगाड़ में टूटते, घिघियाते आम आदमी की तस्वीर में बेतुके रंग भरने में हुआ है। मुख्य रूप से आज़ादी से लेकर आपातकाल तक के अधिनायकवाद सम्बन्धी ब्यौरे इस में मिलते हैं लेकिन इसकी प्रासंगिकता समकालीन सन्दर्भों जैसे बावरी मस्जिद–राम मन्दिर विवाद, गोधरा काण्ड, महाराष्ट्र एवं उत्तर पूर्वी प्रान्तों में गैर हिन्दी भाषी सम्बन्धी समस्या और ऐसे ही अनगिनत प्रसंगों में भी उतनी है –

कविता का आरम्भ ही मोहभंग से होता है।

उसे विश्वास था

कि माली उसकी परिवरिश

नेक नियत से कर रहा है

इसलिए वह खुश था

जिस शख्स को यह ज्ञान हो जाता है कि आज़ादी की आड़ में वह छला गया है उसे न तन की स्वतन्त्रता मिली है, न मन की; वही टुण्डा बना दिया जाता है। चुग्गा चुगने (आज़ादी की गलतफहमी में जीने) के प्रलोभन में चिड़िया और कबूतरी (भारतीय जनता) कब जाल में फंस गयी पता ही न चला। पुरानी पीढ़ी (कीट–पतंगे, चिक्–चिक् करते पक्षी) अपने अनुभव से नयी पीढ़ी (कबूतरी) को समझाने की कोशिश करते हैं।

इसके बावजूद वे व्यवस्था के शिकार होते जाते हैं –

गिनती की कुछ साँसें लेने के बाद

उसने देखा

कि चुग्गा चुगती कबूतरी के ऊपर

अचानक

गिर पड़ा है बहेलिये का जाल

और पंखों को फड़फड़ाती

दहशतज़दा कबूतरी

मुक्त होने की असफल चेष्टा कर रही है

इसका आभास उन्हें तब होता है जब माली में बहेलिए और बहेलिए के चेहरे में से माली का चेहरा उभरने लगता है। विरोधी साहचर्य और दृश्य के रूपान्तरित होने पर स्थिति की भयावहता का शिद्दत के साथ अहसास होता है कि भक्षक ही रक्षक बनने का ढोंग कर रहा था। इस इस अनुभव के होते ही वह रीढ़ गायब कर दी जाती है जिसके सहारे आदमी तनता है –

इसके पूर्व कि वह

अपनी रीढ़ की हड्डी का सहारा लेकर खड़ा होता है

उसने देखा

कि माली ने तेज औज़ार से

उसके दोनों हाथ कलम करके

पेड़ के तने पर टाँग दिए थे...

तब उसे लगा था

कि अपने ही वतन में

वह निर्वासन का दंड़ भोग रहा है।

कर्म और विद्रोह के दोनों हाथ कलम कर दिये जाते हैं और फिर गति या हरकत करने वाले पैर काटकर आदमी को टुण्डा बना दिया जाता है।

कविता में टुण्डे दो प्रकार के हैं। एक प्रत्यक्ष अपाहिज जिसका बयान कविता में है। वह बुद्धिजीवी है और उसकी संवेदना भोंथरी नहीं हुई है। कुछ कर गुजरने का जज़्बा उसमें बाकी है। दूसरे वे सुविधाभोगी, सुरक्षित जीवन जीने वाले जिन्हें व्यवस्था द्वारा अपने हक में करके नाकारा बना दिया गया है जैसे जज, पुलिस, महन्त, सरगना, नेता जिसमें स्वार्थ बुद्धि है लेकिन उसकी सार्थकता नहीं। हृदय, भावना, विचार को जिन्होंने अपने महल के पिछवाड़े दफन कर दिया है। ऐसे लोग घृणास्पद लेकिन बेचारे हैं क्योंकि आदमी होकर आदमी के काम न आकर उसे टुण्डा बनाने, लाश में तब्दील करने, जिन्दा दफन करने में मुस्तैद हैं। वे ऐसी कुल्हाड़ी है जिसमें लगी लकड़ी से उसी की बिरादरी (लकड़ी) काटने का काम लिया जाता है। शायद उन्होंने जान लिया है कि टुण्डा ही बनना है तो 'एलीट टुण्डा' क्यों न बनाया जाये। पहले प्रकार के टुण्डे की स्वतन्त्रता छीनी जाती है दूसरे 'एलीट टुण्डे' की गिरवी रखवा ली जाती है।

इस पड़ाव पर परिहार की भाषा मारक हो गयी है। जज को 'न्याय का तस्कर' है और कानून की देवी जिसकी आँखों पर पट्टी बंधी है उससे भला सही–गलत की पहचान की उम्मीद कैसे की जा सकती है –

तराजू थामे
उस न्याय के तस्कर से हमें बचाओ
जो वर्षों से
उस अंधे गिद्ध के इशारों पर
खुले हाथों
बाँटे जा रहा है मौत के फ़र्मान –
उसने चारों तरफ
फैला दी है इतनी गन्दगी
कि हरी–भरी चारागाहों से
गायों को खदेड़

अब उसे

जंगली सूअर पालने की ज़रूरत बन आयी है –

उसका सूफियाना चेहरा

धर्म का उपयोग

उस अंधे गिद्ध की सुविधा की खातिर किया करता है।

अंधा गिद्ध है सत्ता–नियामक। गिद्ध एक तो हिंसक प्रवृत्ति वाला, दूसरे लाशों पर पलने वाला, तीसरे अंधा। भला हिंसक, नर–भक्षक, सच–झूठ की पहचान न करने वाले से और क्या उम्मीद की जा सकती है ?

इस लम्बी कविता का सबसे महत्वपूर्ण प्रतीक टुण्डा आदमी है। आज़ादी के बाद के मोहभंग से कुण्ठाजनित भारतीय जनमानस। टुण्डेपन से अभिप्राय उसके स्वप्नों का खण्डित होना। इस मोहभंग के लिए कवि परिहार मध्यवर्गीय सुविधाभोगी संस्कार को जिम्मेदार मानते हैं जो ऐन वक्त पर निष्क्रिय हो जाता है। वह न कुछ स्वयं करता है और न ही दूसरों को करने देता है। रोटी, कुर्सी, पद, प्रतिष्ठा का लालच उसे सत्ता के समक्ष कब पंगु बना दे कोई पता नहीं, यही टुण्डे आदमी का बयान है।

8.4 सारांश – इस लम्बी कविता के ज़रिए स्वातन्त्र्योत्रर भारत के बहुआयामी अराजक और विसंगत माहौल को टुण्डे आदमी, बहेलिया, अंधे गिद्ध, सोए हुए जज आदि के ब्यौरों द्वारा केन्द्रीय स्थिति के साथ विभिन्न मनोदशाओं से जोड़ा गया है।

8.5 कठिन शब्द – घिघियता, अधिनायकवाद, विरोधी साहचर्य, रीढ़ गायब, हाथ कलम, एलीट टुण्डा, पंगु।

8.6 अभ्यासार्थ प्रश्न–

प्र01 'टुण्डे आदमी का बयान' मोहभंग की कविता है, सिद्ध कीजिए।

.....

.....

.....

प्र02 'टुण्डे आदमी का बयान' की चारित्रिक विशेषताएं बताइए।

.....

.....

.....

प्र03 'टुण्डे आदमी का बयान' कविता अंधे कानून की तस्वीर दिखाती है, सिद्ध कीजिए।

.....

.....

.....

प्र04 'टुण्डे आदमी का बयान' लम्बी कविता की शिल्पगत विशेषताएं बताइए।

.....

.....

.....

8.7 पठनीय पुस्तकें –

1) कैनवास पर फैलते रंग – बसन्तकुमार परिहार

2) बीसवीं शताब्दी की उत्कृष्ट लम्बी कविताएं – डॉ. नरेन्द्र मोहन

3) लम्बी कविता : नये सन्दर्भ – डॉ. रजनी बाला

'ब्रूनो की बेटियाँ' का केन्द्रीय विषय और शिल्प

9.0 रूपरेखा

9.1 उद्देश्य

9.2 प्रस्तावना

9.3 'ब्रूनो की बेटियाँ' का केन्द्रीय विषय और शिल्प

9.4 सारांश

9.5 कठिन शब्द

9.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

9.7 पठनीय पुस्तकें

9.1 उद्देश्य

इस अध्याय का पाठ करते हुए विद्यार्थी जान सकेंगे कि लम्बी कविता का फलक अत्यन्त व्यापक है। ब्रूनों की बेटियाँ की चर्चा करते हुए सत्ता और सच की स्थिति, धार्मिक मान्यताओं और वैज्ञानिक सत्य आदि की वैचारिक और प्रतीकात्मक स्तर पर पहचान की गई है।

9.2 प्रस्तावना

ऐतिहासिक वास्तविक दुष्कांड के माध्यम से आलोक धन्वा ने समकालीन परिवेश एवं मानवीय सरोकारों पर जो चिन्तन किया है, वह विद्यार्थी को चिंतन हेतु अवश्य बाध य करेगा।

9.3 'ब्रूनो की बेटियाँ' का केन्द्रीय विषय और शिल्प

आलोकधन्वा का जन्म बिहार के मुंगेर जनपद के अंतर्गत ग्राम बेलबिहमा में हुआ।

वामपंथी विचारधारा वाले आलोकधन्वा ने सत्तर के दशक में हिन्दी कविता को नयी पहचान दी। उनकी पहली कविता 1972 में वाम पत्रिका में प्रकाशित हुई। आलोकधन्वा के काव्य संग्रह **दुनिया रोज़ बनती है** में चार लम्बी कविताएं 'कपड़े के जूते', जनता का आदमी' 'भागी हुई लड़कियाँ' और 'ब्रूनो की बेटियाँ' हैं। इन सभी के केन्द्र में संघर्ष चेतना से युक्त मनुष्य है। **ब्रूनो की बेटियाँ** इस दृष्टि से ध्यान आकर्षित करती कि इसमें अर्थ की विभिन्न भंगिमाएं, संदर्भ और मनोदशाएं हैं। इटली के वैज्ञानिक दार्शनिक जियोर्दानो फिलिप्पो ब्रूनो से जुड़ी वास्तविक घटना पूरी कविता को संचालित करती है।

जियोर्दानो ब्रूनो इटली का दार्शनिक, गणितज्ञ एवं खगोलवेत्ता था जिसे कैथोलिक चर्च ने अफवाह फैलाने का आरोप लगाकर ज़िन्दा जला दिया था। अपनी मृत्यु के बाद वह बहुत प्रसिद्ध हुआ। 19वीं–20वीं शताब्दी के समीक्षकों ने उसे 'स्वतंत्र चिन्तक शहीद' और आधुनिक वैज्ञानिक विचारों का उद्घोषक माना है। जियोर्दानो ब्रूनो 16वीं सदी के प्रसिद्ध इटेलियन दार्शनिक, खगोलशास्त्री, गणितज्ञ और कवि थे। उन्होंने खगोल वैज्ञानिक निकोलस कोपरनिक्स के विचारों का समर्थन किया था। वह भी उस समय, जब यूरोप में लोग धर्म के प्रति अंधे थे।

निकोलस कोपरनिक्स ने कहा था– 'ब्रह्माण्ड का केन्द्र पृथ्वी नहीं, सूर्य है।' ब्रूनो ने उनके विचारों का समर्थन करते हुए कहा – 'आकाश सिर्फ उतना नहीं है, जितना हमें दिखाई देता है। वह अनंत है और उसमें असंख्य विश्व हैं।' धर्म के प्रति ब्रूनो का विचार था कि – 'धर्म वह है, जिसमें सभी के अनुयायी आपस में एक–दूसरे के धर्म के बारे में खुलकर चर्चा कर सकें।' ब्रूनो का विचार था कि – हर तारे का वैसा ही अपना परिवार होता है जैसा कि हमारा सौर परिवार है। सूर्य की तरह ही हर तारा अपने परिवार का केन्द्र होता है। 'इस ब्रह्माण्ड में अनगिनत ब्रह्माण्ड हैं। ब्रह्माण्ड अनंत और अथाह है।' ब्रूनो का मत था कि – 'धरती ही नहीं, सूर्य भी अपने अक्ष पर घूमता है।' जियोर्दानो ब्रूनो बड़े निर्भीक और क्रान्तिकारी विचार वाले थे, इसलिए चर्च के पादरियों का विरोध भी उन्हें डरा न सका।

ब्रूनो जीवन भर चर्च की कठोर यातनाएँ सहते रहे। उन्होंने अपने जीवनकाल के लगभग 8 वर्ष जेल में बिताए मगर उन्होंने कभी हिम्मत नहीं हारी। उन्हें हारता न देखकर 17 फरवरी, 1600 को तत्कालीन पोप और चर्च के पादरियों ने खुलेआम रोम में भरे चौराहे पर ब्रूनो को खंभे से बांध कर मिट्टी का तेल उन पर छिड़क कर जला डाला। ब्रूनो ने हँसते हुए आग में जलना स्वीकार किया लेकिन वे अपने तथ्यों और निष्कर्षों पर अडिग रहे। उसके चेहरे पर डर या पश्चाताप का कोई एहसास न था। उन्हें पूर्ण विश्वास था

कि एक न एक दिन ऐसा अवश्य आयेगा जब पूरी दुनिया उनकी खोज को सत्य मानेगी। ब्रूनो के जीवनकाल में यह तथ्य लोगों को समझ नहीं आया और उनका पुरजोर विरोध हुआ लेकिन उनकी निर्मम हत्या के बाद यह साबित हो गया कि सूर्य भी अपने अक्ष पर घूमता है। कहीं–कहीं यह भी माना गया कि ब्रूनो की प्रेमिका जो उसके विचारों की पक्षधर थी, उसे भी उसके साथ ज़िन्दा जला दिया गया। ब्रूनो की मृत्यु के लगभग 200 वर्षों के बाद हमारे सौरमंडल के सातवें ग्रह 'यूरेनस' की खोज हुई।

आलोक धन्वा के सर्जक मन पर धर्म के साथ व्यक्तिगत और वैज्ञानिक सच के इस संघर्ष का प्रभाव इस कदर पड़ा कि जब उन्होंने ज़िन्दा जलायी गयी औरतों को देखा तो वर्तमान की यह घटना सन् 1600 में ज़िन्दा जला दिये गये ब्रूनो से जा मिली और कवि के सामने अपने समय का जलता हुआ युग खड़ा हो गया। उसने ध्यान से देखा तो जाना कि समाज और सत्ता से अलग सोचने वाले को बेशक ज़िन्दा जला दिया हो किन्तु उसके जज़्बे, संघर्ष–चेतना को जलाया नहीं जा सकता।

अपनी सच्चाइयों के लिए ज़िन्दा जला दी जाने वाली स्त्रियों को कवि ब्रूनो की बेटियों के रूप में देखता है। कवि जानना चाहता है कि क्या सत्य के उद्घाटन के लिए ब्रूनो और गैलीलियो से इन स्त्रियों तक के लिए आज भी सत्ता प्रतिष्ठान की क्रूरता वैसी ही पूर्ववत है। क्या आदिम साम्यवाद से राजतंत्र और इस उदार लोकतंत्र तक सब सभ्यता के मुखौटे हैं।

सच के साथ उसके उद्घाटनकर्ता को बचा लेने की बेचैनी से ही यह कविता पैदा होती है। यह कविता पहली बार स्त्री के श्रम और सामर्थ्य को उसकी विकासमानता में प्रस्तुत करती है। कविता की शुरूआत जीवन में स्त्री–श्रम की भूमिका और उसके अस्तित्व के विडंबित अस्वीकार से होती है। आखिर क्या मजबूरी थी कि हत्यारों को अपने सहज संबंधों को ही जला देना पड़ा कैसे तुच्छ हित थे उनके सभ्यता के इस पड़ाव पर भी हम स्त्री के श्रम की स्वतंत्र भूमिका क्यों नहीं स्वीकारते। उनके श्रम की कीमत गैलीलियो की दूरबीन की कीमत क्यों हो जाती है।

श्रम के कालातीत सौंदर्य की ऐसी सहज अभिव्यक्ति हिंदी कविता में कम ही मिलती है। 'ब्रूनो की बेटियाँ' कविता में आलोक धन्वा का श्रमशील स्त्री विषयक दृष्टिकोण समाज के संकीर्ण दृष्टिकोण से हट कर कुछ अलग तरह का है। वह स्त्री के लिए उसकी मुक्ति को महत्वपूर्ण मानते हैं। इस कविता में जिन मज़दूर स्त्रियों के संघर्ष का ज़िक्र कवि ने किया है उन्हीं के विषय में कवि प्रश्न करता है :

क्यों वे सिर्फ़ मालिकों के लिए

आतीं थीं इतनी सुबह

क्या मेरे लिए नहीं ?

क्या तुम्हारे लिए नहीं ?

उनका सुबह जल्दी आना उनमें संघर्ष की बेचैनी के कारण था, उस समय की पीढी को अपने साथ चलाने का प्रयास था। उन स्त्रियों द्वारा किया जा रहा कार्य किसी एक के लिए या उनके अपने स्वार्थ के लिए नहीं था। कवि अपने ही वर्ग के लोगों से प्रश्न करता है कि क्या ऐसी स्त्रियों का अस्तित्व उनके लिए कुछ भी अर्थ नहीं रखता था ? किसी के संघर्ष को समझने के लिए एक विस्तृत दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है। जो स्त्री संघर्ष शील है, वह निश्चय ही साधारण स्त्री नहीं है। उसके बारे में पूर्वाग्रहों से हटकर सोचने की आवश्यकता है :

कैसे देखते हो तुम इस श्रम को ?

भारतीय समुद्र में तेल का जो कुआँ खोदा

जा रहा है

क्या वह मेरी ज़िन्दगी से बाहर है ?

क्या वह सिर्फ़ एक सरकारी काम है ?

तेल का कुआँ खोदने के लिए किए गए जा रहे ड्रिल का सम्बन्ध कवि के अपने अस्तित्व के ड्रिल से है।

संघर्षशील व्यक्ति के लिए उसका संघर्ष आत्मपीड़ा नहीं बल्कि गर्व का विषय होता है। इसी गर्व के कारण वह आततायी के समक्ष कभी घुटने नहीं टेकता, भले ही उसकी हत्या क्यों न कर दी जाए। कवि इस बात पर बल देता है कि ऐसे ही व्यक्ति साहित्य का विषय बनते हैं और ऐसा साहित्य समाज की प्रेरणा का स्रोत है :

उनकी हत्या की गयी

उन्होंने आत्महत्या नहीं की

इस बात का महत्व और उत्सव

कभी धूमिल नहीं होगा कविता में !

संक्षेप में कहा जा सकता है कि इस कविता में श्रम की महत्ता का प्रतिपादन करते हुए कवि ने संघर्षशील स्त्री के प्रति समाज द्वारा एक नवीन दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता पर बल दिया है जो सभी प्रकार के पूर्वाग्रहों से मुक्त हो। कवि का विचार है कि समाज की मुक्ति स्त्री की मुक्ति में निहित है। संघर्षशील श्रमिक स्त्री का अपना अस्तित्व है। वह साधारण स्त्री नहीं है। ऐसी स्त्री द्वारा किये जाने वाले श्रम में केवल उसका स्वार्थ नहीं है। उसके श्रम में समाज का विकास छुपा हुआ है। उसका संघर्ष उसके लिए गर्व का विषय है। इसी गर्व के कारण वह आततायी के समक्ष झुकती नहीं है। इसी प्रकार के संघर्षशील व्यक्ति साहित्य का विषय बनते हैं।

पहले कवि मातृत्व के निर्जन शिकार पर द्रवित होता है फिर समाज के अर्थशास्त्रियों से सवाल करता है। जिनसे एकालाप कर वह उन्हें आसानी से चुप करा देता है। ब्रूनो की बेटियां में एक उजाला है। टूटन की कुंठा यहां नहीं है। जीवन में श्रम की भूमिका और उसका विकास आगे कविता में फिर साध लिया गया है। यही एक चीज कविता को समय से आगे ले जाती है। श्रम की सभ्यता को यह कविता नए सिरे से रेखांकित करती है और तमाम सभ्यताओं के विरुद्ध इसे आधार देती है। स्त्री के श्रम की सभ्यता पर एक नये ढंग से विचार किया गया है।

धर्म हो या राजनीति, व्यवस्था हो या व्यक्ति, रूढ़ि हो या प्रगतिशीलता दोनों एक दूसरे के एकदम विरोधी छोरों पर खड़े हैं। इन दोनों के बीच एक ध्रुव सत्य यह भी है कि विद्रोही को बेशक मार दिया जाये किन्तु समाज की परिवर्तनकामी शक्तियों की ऊर्जा कभी समाप्त नहीं होती। बदलाव की इच्छा शक्ति रखने वाले धर्म, राजनीति, समाज, व्यवस्था, परिवार सभी धरातलों पर रूढ़ियों को चुनौती देने वाले को समाप्त नहीं किया जा सकता। ऐसी मानसिकता व्यक्ति विशेष के साथ युगीन परिवेश से जुड़ी होती है इसीलिए इन्हें न तो झीने टाट की तरह जलाया जा सकता है, न काटा–फाड़ा जा सकता है और न ही किसी जानवर की तरह इनका शिकार किया जा सकता है। ये काई की तरह ढुलमुल लिजलिजे व्यक्तित्व वाले नहीं हैं जिन्हें आसानी से अपने सामने से हटाया जा सके। इस तरह की मानसिकता वाले, दुनिया परम्परागत रूढ़ियों से अलग तरह की सोच रखने वालों की एक पूर्वापर परम्परा होती है। ये शताब्दियों के इतिहास से जन्म लेते हैं और अपने संघर्षशील जीवन एवं संघर्षकामी चेतना शक्ति से इसी विचारधारा की अगली पीढ़ी को जन्म देते हैं। अपने अतीत से सीखते हैं और भविष्य की कोख में उसके बीज रोप कर जाते हैं।

कवि विद्रोह प्रवृत्ति का प्रसार कोपरनिक्स, ब्रूनो, गैलीलियो से लेकर भारत के गंगा तट, अफ्रीका की नील, गाँवों, शहर, जंगल, खेतों, मिलों तक में दिखाता है और कविता एक बड़े फलक पर विविध सन्दर्भों से जुड़ जाती है।

शिल्पगत वैशिष्ट्य

ब्रूनो की बेटियाँ लम्बी कविता समाज में संघर्षशील स्त्रियों के प्रति एक नया दृष्टिकोण अपनाने के विचार को लेकर प्रस्तुत की गई है। इस कविता के केन्द्र में भी स्त्री मुक्ति का ही विचार है, साथ ही कवि ने यह दिखाने का प्रयास किया है कि स्त्री में भी पुरुष के समान ही संघर्ष का सामर्थ्य है।

ज़िन्दा जला दिये जाने का जो सिलसिला ब्रूनो के समय शुरू हुआ वह नील गंगा से होता हुआ आज़ादी के बाद लोकतान्त्रिक व्यवस्था में भी थमा नहीं है। ब्रूनो की बेटियाँ को स्त्रीवादी विमर्श का भावुकता भरा आवेश मात्र मान लेने से पहले यह सोच लेना चाहिए कि अगर ऐसा होता तो आलोकधन्वा यह ऐलान नहीं करते *''रानियाँ मिट गयीं''* यहाँ स्पष्ट है कि ब्रूनो की बेटियाँ, ज़िन्दा जलायी जाने वाली औरतें, मजदूरिनें, गाँव की औरतें हैं; रानियाँ नहीं। इसलिए यह लम्बी कविता किसी भी तरह तथाकथित फैमेनिज्म से नहीं जुड़ती। दूसरे, ब्रूनो की बेटियों और विभिन्न सन्दर्भों में आयी इन लड़कियों, औरतों, स्त्रियों को मेटाफर के तौर पर देखा जाना चाहिए क्योंकि अर्थ के धरातल पर यह कविता हर उस व्यक्ति से जुड़ती है जो विद्रोही और सच की पैरवी करने वाला है। सत्ता की आँख की किरकिरी है, तन्त्र के लिए मिसफिट है, पूँजीपति से हक़ की लड़ाई लड़ने वाला है, नयी खोज और संघर्ष चेतना को जन्म देने वाला है।

इस कविता में गंगा के मैदानों में काम करने वाली उन मज़दूर औरतों की कथा है, जो हर प्रकार से एक सामान्य जीवन व्यतीत कर रही थीं। इन स्त्रियों के मज़दूर वर्ग पर किए जा रहे पूँजीपति और मालिकों के शोषण के विरुद्ध आवाज़ उठाई और संघर्ष की शुरूआत की, जिसके कारण इन्हें पूँजीपति वर्ग की प्रताड़ना सहन करनी पड़ी। शोषक सत्ता ने इन्हें रात के अंधेरे और बंदूकों के घेरे में जलाकर मार डालने का अमानवीय कुकृत्य किया। कवि ने संघर्ष में प्राण देने वाली स्त्रियों को 'ब्रूनो की बेटियाँ' कहा है। उन स्त्रियों द्वारा किए गए संघर्ष का महत्त्व नगण्य नहीं था, इसलिए उनके दमन के बाद भी उनका महत्त्व बना रहेगा :

वे ख़ानाबदोश नहीं थीं

कुएँ के जगत पर उनके घड़ों के निशान हैं

उनकी कुल्हाड़ियों के दाग़

शीशम के उस सफ़ेद तने पर

बाँध की ढलान पर उतरने के लिए

टिकाये गये उनके पत्थर

उनके रोज़–रोज़ से रास्ते बने हैं मिट्टी के ऊपर

शीशम के तने पर पड़े कुल्हाड़ियों के निशान शोषक–सत्ता के विरोध में उठे उनके स्वर व उस पर किए गए प्रहार का प्रतीक है। 'बाँध' विरोध को दबा रखने वाले के प्रतीक रूप में आया है। उस पर से उतरने के लिए टिकाए गए पत्थर उनके प्रयत्न का प्रतीक हैं जो उन्होंने सत्ता से निपटने के लिए थे। उनके द्वारा बनाए गए रास्ते आज भी मौजूद हैं जो नए विद्रोहियों के काम आयेंगे। कवि के अनुसार वे शाँतिप्रिय स्त्रियाँ थीं और इस लिए जीवन शान्ति से व्यतीत करना चाहती थी। शोषक वर्ग की भाँति अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए शोषण के नृशंस हथियार उनके पास नहीं थे परन्तु उन्हें सामान्य जान कर यदि कोई उनका शोषण करना चाहता या साँप की तरह उन्हें डसने की चेष्टा करता तो उनके पास उस ''साँप को मारने वाली बर्छी'' भी मौजूद थी। अपनी रक्षा व विरोध के लिए हथियार उनके पास थे। इसी कारण सत्ता, व्यवस्था व शोषक ताकतों के द्वारा अपनी सुविधा व स्वार्थ के लिए चलाए गए तंत्र में वे व्यवधान की तरह थीं। उन्हें कमजोर समझ कर सत्ता ने उनका दमन भले पहले कर दिया हो पर उनमें वह सामर्थ्य और वह ज्योति अब भी विद्यमान है जो आततायी वर्ग का नाश कर सके :

कल शाम तक यह जली हुई ज़मीन

कच्ची मिट्टी के दिये की तरह लौ देगी

और

अपने नये बाशिंदों को बुलायेगी।

यह 'लौ' उनके विद्रोह का प्रतीक है और उसकी रोशनी में जो राह दिखाई देगी वह नये विद्रोहियों के लिए मार्गदर्शक साबित होगी। वह नए विद्रोह को जन्म देगी। उन मज़दूर स्त्रियों की हत्या पर कवि स्पष्ट करता है कि उनका संघर्ष और उससे जुड़े

विचार ही उनके अस्तित्व में ऐसी शक्ति थे, ऐसी क्षमता थे जिन्हें छल या बल से भी शोषक वर्ग अपने स्वार्थ हेतु प्रयोग नहीं कर सका :

जिसे सिर्फ़ आग से जलाना पड़ा

वह भी आधी रात में कायरों की तरह

बंदूकों के घेरे में ?

कवि का विचार है कि विचारों को ख़रीदा नहीं जा सकता, न ताकत से न पूँजी से इसलिए उन्हें इस तरह कायरता से मारना पड़ा क्योंकि उनकी हत्या को देखकर नये विद्रोहियों के पैदा होने का भय था। विचार और संघर्ष के इतिहास को नष्ट नहीं किया जा सकता। यह मात्र सत्ता का पागलपन है जो यह समझती है कि वह संघर्ष को मिटा सकती है पर वह व्यक्ति की हत्या के बाद भी नहीं मिटता। संघर्ष शाश्वत व सनातन है। 'ब्रूनो की बेटियाँ' कविता में भी इस आस्था के दर्शन होते है :

पागल तलवारें नहीं थीं उनकी राहें

डनकी आबादी मिट नहीं गयी राजाओं की तरह !

पगल हाथियों और अंधी तोपों के मालिक

जीते जी फ़ॉसिल बन गये

लेकिन लकड़ी का हल चलाने वाले

चल रहे हैं।

संघर्ष करने वाली उन मज़दूर स्त्रियों का लक्ष्य किसी का शोषण नहीं था इसलिए वे उन राजाओं की तरह नहीं मिट सकती जिनका लक्ष्य शक्ति के बल पर केवल शोषण करना ही था। जन जीवन से दूर रानियों की दशा भी कुछ अलग नहीं है :

रानियाँ मिट गयीं

ज़ंग लगे टिन जितनी क़ीमत भी नहीं

रह गयी उनकी याद की

राजे–रानियाँ मिट गये लेकिन मज़दूर वर्ग की औरतें आज भी संघर्ष करती हुई

जिन्दा है :

रानियाँ मिट गयीं

लेकिन क्षितिज तक फ़सल काट रही

औरतें

फसल काट रही हैं।

कविता में ब्रूनो का पौराणिक चरित्र धर्म, समाज व राजनीति के दकियानूसी विचारों को हिलाने की क्षमता रखने वाली शक्ति मौलिक विचार, विद्रोही स्वर, सत्य व ज्ञान का प्रतीक है। ब्रूनो की बेटियों का जिक्र कविता में कवि ने किया है हालांकि बेटियों के स्थान पर बेटों का ज़िक्र करने पर भी यह कविता इतनी ही सशक्त होती पर बेटियों को लेने के पीछे यह कारण हो सकता है कि शोषक वर्ग या पुरुष की सामंतवादी दृष्टि स्त्री को अबला रूप में देखती है। उससे विद्रोह की आशा ही नहीं रखती और कवि ने उसी स्त्री को संघर्षशील दिखाने का प्रयत्न किया है।

आलोक धन्वा ने 'ब्रूनो की बेटियाँ' कविता के माध्यम से वर्तमान राजनीतिक व्यवस्था की उस नृशंस प्रवृत्ति का पर्दाफाश भी किया है जिसके तहत वह मीडिया के सहयोग से शोषण का एक व्यापक चक्र चलाते हैं। मीडिया पर आरोप लगाता हुआ कवि कहता है कि राजनीति से प्रेरित होकर मीडिया उनकी ही भाषा बोलता है। वह पूर्ण रूप से सत्ता के नियंत्रण में कार्य करता है। मीडिया सत्ता का विरोध करने वाले लोगों को जंगल की तरह अर्थात् घातक और वहशी रूप में चित्रित करता है :

कौन मक्कार उन्हें जंगल की तरह दिखाता है

और कैमरों से रंगीन पर्दों पर

वे मिट्टी की दीवारें थीं

प्राचीन चट्टानें नहीं

उन पर हर साल नयी मिट्टी

चढ़ाई जाती थी !

मीडिया सत्ता का विरोध करने वाले लोगों को दुष्प्रचार करके चील के रूप में अन्य

लोगों को चूहे की तरह दबोच लेने वाला और सिंह की तरह आदमखोर के रूप में चित्रित करता है। यह षड्यंत्र उन्हें इस दुनिया से बाहर करने के लिए रचा गया है। इस तरह मीडिया सत्ता द्वारा चलाए जा रहे शोषण चक्र में बराबर का भागीदार है।

कवि का विचार है कि मीडिया का दायित्व समाज में घटने वाली घटनाओं को यथार्थ रूप में चित्रित कर समाज के हित में कार्य करना है परन्तु वर्तमान व्यवस्था में ऐसा नहीं है। आम आदमी का शोषण करने वाले वर्ग ने मीडिया का इस्तेमाल मनमाने ढंग से किया गया है। अपने मानव विरोधी कुकृत्यों को छिपाने के साथ–साथ उन्होंने मीडिया की सहायता से अपने विरुद्ध संघर्ष करने वाले वर्ग को समाज से ही बाहर कर देने का भयानक षड्यन्त्र रचा है।

इस प्रकार यह लम्बी कविता शिल्प के सभी तत्वों को आत्मसात् करते हुए पाठक को स्वयं सोचने के लिए छोड़ देती है। यही आलोक धन्वा की 'ब्रूनो की बेटियाँ' की विशेषता है।

9.4 सारांश – वैज्ञानिक सत्य को आत्मगत अनुभूमि का विषय बनाते हुए आलोकधन्वा ने सच के लिए जीने और जरूरत पड़े तो मरने को तैयार ऐसे जिज्ञासुओं का काव्यात्मक वर्णन किया है जिनके समक्ष जीवन मूल्यों से बड़ा कुछ भी नहीं है। जिसकी अभिव्यक्ति कवि ने ब्रूनो और स्त्री के प्रतीकात्मक रूप में की है।

9.5 कठिन शब्द – संघर्षकामी, मेटाफर, आदमखोर, ढुलमुल, लिजलिजा।

9.6 अभ्यासार्थ प्रश्न –

प्र01 जियोर्दानो फिलिप्पो ब्रूनो का परिचय दीजिए।

.....

.....

.....

प्र02 ब्रूनो की बेटियां कवि ने किन्हें कहा है, स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

प्र03 'बूनों की बेटियां' लम्बी कविता की कथ्यगत विशेषताएं बताइए।

.....

.....

.....

प्र04 'बूनों की बेटियां' लम्बी कविता की शिल्पगत विशेषताएं बताइए।

.....

.....

.....

9.7 पठनीय पुस्तकें –

1) दुनिया रोज़ बनती है – आलोक धन्वा

2) लम्बी कविता : नये सन्दर्भ – डॉ. रजनी बाला

लम्बी कविता के तत्वों के आधार पर 'राम की शक्तिपूजा' की समीक्षा

10.0 रूपरेखा

10.1 उद्देश्य

10.2 प्रस्तावना

10.3 लम्बी कविता के तत्वों के आधार पर 'राम की शक्तिपूजा की समीक्षा'

10.4 सारांश

10.5 कठिन शब्द

10.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

10.7 पठनीय पुस्तकें

10.1 उद्देश्य

लम्बी कविता के प्रारंभिक दौर में छायावादी विशेषताओं से आगे लम्बी कविता के मानदण्डों पर राम की शक्ति पूजा का आकलन कैसे किया जाए इसकी पहचान विद्यार्थी इस पाठ में कर सकेंगे।

10.2 प्रस्तावना

राम काव्य परम्परा में यह लम्बी कविता एक अलग प्रकार के मॉडल को प्रस्तुत करती हैं तनाव की चरम स्थिति के साथ विश्रान्ति तक कैसे पहुँचा जाता है इसकी नाटकीय पहचान काव्यात्मक संवादों के जरिए यहाँ की गई है।

10.3 लम्बी कविता के तत्वों के आधार पर 'राम की शक्तिपूजा की समीक्षा'

'राम की शक्तिपूजा' में सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला ने जिस कथानक को स्वीकार किया है, उसके सूत्र वाल्मीकि रामायण, कल्कि पुराण, वृहत् धर्म पुराण, देवी भागवत और शिव महिम्न स्त्रोत व बंगला की कृतिवास रामायण में बिखरे पड़े हैं। राम–रावण के युद्ध का प्रसंग वाल्मीकि रामायण से लेकर साहित्यिक, ऐतिहासिक और पौराणिक ग्रंथों में एक–सा मिलता है। युद्धकाल के सहायक और साथी भी सर्वत्र वे ही हैं जो 'शक्तिपूजा' में आये हैं। राम की निराशा का संदर्भ वाल्मीकि रामायण और 'अध्यात्म रामायण' में विद्यमान हैं। यह अलग बात है कि इन दोनों काव्यों में राम की निराशा का कारण लक्ष्मण की मूर्च्छा है। शक्तिपूजा में निराशा का कारण महाशक्ति द्वारा अधर्मरत रावण का पक्ष लेना है।

'कृतिवास रामायण' के कई प्रसंग जैसे शक्ति का रावण का पक्षधर होना, रावण को गोद में लेकर बैठना, राम की चिन्ता, निराशा और परामर्श, हनुमान का देवीदह से कमल लाना, एक कमल की कमी के कारण राम का उसके स्थान पर नेत्र देने को उद्यत होना और फिर देवी का प्रकट होकर राम को रोकना व विजय का आशीष देना।

राम की शक्ति पूजा का आरंभ भूमिका के बिना और अंत बिना उपसंहार के होता है। 'रवि हुआ अस्त' के उद्घोष के साथ मानो पर्दा उठता है और 'होगी जय, होगी जय हे पुरुषोत्तम नवीन। कह महाशक्ति राम के वदन में हुई लीन।' के साथ पटाक्षेप हो जाता है।

''धिक् जीवन को जो पाता ही आया विरोध'', यह पंक्ति पूरी कविता का सूत्र है।

राक्षस, वानर, लंका, समुद्र–तट, यह सब एक विशाल सेटिंग मात्र है, वास्तविक संघर्ष राम के हृदय में है। वह शक्ति की साधना कर रहे हैं और प्रश्न है कि वह विजयी होंगे या नहीं।

रवि अस्त हो गया लेकिन ज्योति के पत्र पर राम–रावण के अपराजेय समर कर इतिहास सदा के लिए अंकित हो गया। इस युद्ध में प्रति पल ब्यूह परिवर्तित किये गये हैं; वानरगण भयानक 'हूह' शब्द करते हुए राक्षसों पर टूट पड़े हैं; रामचन्द्र रावण पर छोड़े हुए अपने वाणों के व्यर्थ होने से अग्निनयन हो उठे हैं। लंकापति उद्धत होकर वानर–दल का मानमर्दन कर चुका है; सुग्रीव, अंगद, गवाक्ष, नल आदि मूर्छित हो गये हैं; युद्ध के समुद्र–गर्जन में केवल हनुमान की चेतना स्थिर रही है; वहीं जानकी के हृदय

को आशा बंधाये हुए है।

संध्या होने पर दोनों दल अपने शिविरों को लौटे हैं। 'तुलसीदास में असुरों द्वारा संस्कारों की पृथ्वी दली गई थी; यहाँ भी राक्षसों की पद–चाप से पृथ्वी हिल उठती है। तमोगुण का प्रतीक आकाश–जो रावण के इष्टदेव शंकर का निवास है–दानवीर विजय से उल्लसित और विह्‌ल हो उठता है। वानरों की सेना वैसे ही खिन्न हो रही है। राम के धनुष की प्रत्यंचा ढीली पड़ गई है। जटा–मुकुट खुलकर पृष्ठ पर बाहुओं और वक्ष पर इस तरह फैल गया है जैसे दुर्गम पर्वत पर रात्रि का अंधकार फैल गया हो। इस निराशा की घड़ी में दूर चमकती हुई तारिकाओं की तरह उनके दो नेत्र दीप्त हो रहे हैं।

समुद्र के किनारे पर्वत हैं; वहीं पर वानरी सेना एकत्र हुई है। अमावस्या की रात में आकाश मानो अंधेरी उगल रहा था। हनुमान के पिता पवनदेव स्तब्ध थे। विशाल समुद्र अप्रतिहत स्वर में गरजकर शान्ति भंग कर रहा था। पर्वत ऐसे निश्चल था मानो ध्यानमग्न हो। प्रकाश के लिए केवल एक मशाल जल रही थी। रामचन्द्र के मन में संशय हो रहा था कि रावण को जीत पायेंगे या नहीं। जो मन आज तक अशान्त न हुआ था, वही असमर्थ होकर अपनी हार मान रहा था। राम को अचानक स्वयंवर के दिनों की जानकारी का स्मरण हो आता है। उपवन का वह मिलन, नयनों का नयनों से संभाषण, जानकी का वह प्रथम कम्पन–वह सब याद आते ही क्षण भर को वह अपनी स्थिति भूल जाते हैं और शिव का धनुष–भंग करने के लिए उनका हाथ फिर अपने आप उठ जाता है। फिर उन्हें अपने दिव्य शर याद आते हैं जो देव दूतों के समान उड़ते हुए ताड़का, सुबाहु आदि राक्षसों को भस्म कर चुके हैं। उन्हें वह शक्ति की मूर्ति याद आती है जो आज युद्ध में समस्त आकाश को छाये हुए थी। राम के सभी अस्त्र महानिलय में बुझकर लीन हो गये। उनके नेत्रों में सीता के राममय नेत्रों की छवि अंकित हो गई। तभी उनके दैन्य को विक्त करने के लिए रावण भयानक स्वर में अट्टहास कर उठा, पराजित राम के नेत्रों से मुक्ता वैसे दो अश्रु–बिन्दु ढुलक पड़े।

महावीर हनुमान अस्ति और नास्ति के रूप राम के दोनों चरणों को देख रहे हैं। अश्रु–बिन्दु देखते ही उनका मन अस्तिर हो उठा। पिता दक्ष के उनचासों पवन डोल उठे। समुद्र में पहाड़ जैसी तरंगें उठकर गिरने लगी। हनुमान अट्टाहस करते हुए महाकाश में पहुँच गये। रावण की महिमा अमावस के अन्धकार के समान थी और हनुमान रामभक्ति के तेज के समान उसे छिन्न कर रहे थे। रावण के इष्टदेव शंकर के निवास महाकाश को समेट लेने के लिए महावीर पहुँच गये। इस महानाश को देखकर एक क्षण

को शिव भी चंचल हो गये। महावीर के वेग को संभालने के लिए उन्होंनें शक्ति का स्मरण किया। जिसका मन कभी शृंगाररत नहीं हुआ, वह राम की मूर्तिमान अर्चना शिव के सामने आ पहुँची उन्होंने शक्ति को सावधान किया कि इस ब्रह्मचारी पर प्रहार करने से तुम्हारी ही हार होगी। उसे विद्या से ही प्रबोध देना चाहिए। सहसा आकाश में अंजना रूप में शक्ति का उदय हुआ। उन्होंने हनुमान को मीठी फटकार बतलाई बचपन में सूर्य को निगल लिया था, वही भाव तुम्हें आज भी विकल कर रहा है। यह महाकाश शिव का निवास स्थान है जिन्हें रामचन्द्र भी पूजते हैं। उन्हें नष्ट करने के लिये क्या रामचन्द्र ने आज्ञा दी है ? फिर सेवक होकर यह अनाधिकार चेष्टा कैसी ? यह फटकार सुनकर महावीर का मन नम्र हो गया और उन पर फिर वही सेवा–भाव छा गया।

इधर विभीषण को चिन्ता हो रही थी कि रामचन्द्र की यही दशा रही तो लंका का राज कैसे मिलेगा । उन्हें उत्साहित करने के लिये विभीषण ने अनेक वीर–वचन कहे लेकिन राम के मन पर उनका कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा। उन्होंने शान्त मन से उत्तर दिया, ''मित्रवर, यह लड़ाई मुझसे न जीती जायेगी। स्वयं महाशक्ति रावण का समर्थन कर रही हैं। उन्हें कौन परास्त कर सकता है ?'' एक बार लक्ष्मण को सहज क्रोध हो आया, जाम्बवान स्थिर रहे, सुग्रीव व्याकुल हुए और और विभीषण आगे का कार्यक्रम सोचने लगे। रामचन्द्र आज श्रीहत हो गये। महाशक्ति रावण को अपने अंक में वैसे ही लिये थीं, जैसे चन्द्रमा कलंक धारण करता है। वानर–दल को विचलित होते देखकर वह जब–जब सर संधान करते थे, महाशक्ति के नेत्रों में तब–तब अग्नि दीप्त हो उठती थी। फिर महाशक्ति ने राम को इस दृष्टि से देखा कि उनके हाथ बंध गये और धनुष खींचते ही न बना।

जाम्बवान ने सलाह दी कि शक्ति की आराधना करने से रावण को पराजित करना ही सम्भव होगा। यह प्रस्ताव सभी को पसन्द आया। हनुमान एक सौ आठ कमल लेने चले। रात बीत गई और नभ के ललाट पर प्रथम किरण फूटी। समर भूमि में फिर कोलाहल होने लगा लेकिन रामचन्द्र मन को एकाग्र किये दुर्गा का जप कर रहे थे। इसी प्रकार पाँच दिन बीत गये। छटे दिन उनका मन योगियों के आज्ञा नामक चक्र तक पहुँचा। जप के महाकर्षण से अम्बर थर–थर कांपने लगा। देवी को कमल अर्पित करते हुए राम एक ही आसन पर बैठे रहे। आठवें दिन एक इन्दीवर रह गया और मन सहस्रार को पार करने की बाट जोहने लगा। दो पहर रात बीतने पर साक्षात् दुर्गा आकर पूजा का अन्तिम फूल उठा ले गईं। हाथ बढ़ाने पर फूल न मिला तो राम का मन चंचल हो उठा। ध्यान छोड़कर उन्होंने आँखें खोली और यह विचार आते ही कि आसन को छोड़ने

से असिद्धि होगी, वे अपने जीवन को धिक्कारने लगे। विरोध और निरंतर विरोध, साधनों का अभाव और सदा ही अभाव ! जानकी का उद्धार कैसे करें ? तभी उनके अविनीत मन ने कहा, माता मुझे राजीव नयन कहती थीं। दो नीलकमल तो अभी शेष हैं। इसलिये ''पूरा करता हूँ मातः देकर एक नयन'' कहकर उन्होंने महाफलक वाला प्रदीप्त ब्रह्मसर हाथ में ले लिया। ज्यों ही अपना दक्षिण नेत्र अर्पित करने को हुए, देवी ने सादुवाद देते हुए उनका हाथ पकड़ लिया। रामचन्द्र ने शक्ति को प्रणाम किया और वे विजय की भविष्यवाणी करके राम के मुख में लीन हो गईं।

इस पूरे प्रकरण में नाटकीय कथावस्तु के विकास की पंच अवस्थाएं स्पष्ट रूप से लक्षित की जा सकती हैं – युद्ध की पृष्ठभूमि पर राम की सभा का विषादपूर्ण चित्रण–आरंभ है। हनुमान के आकाश–अभियान से लेकर विभीषण के उद्‌बोधन तक 'यत्न' है। जाम्बवान द्वारा राम को शक्तिपूजा का आश्वस्त परामर्श, ''तब तुम ही निश्चय सिद्ध करोगे, उसे ध्वस्त।'' और राम की अनुपस्थिति में सैन्य–संचालन की योजना 'प्राप्त्याशा' है। राम द्वारा अनुष्ठान का आरंभ 'नियताप्ति' है क्योंकि राम जैसे धर्मनिष्ठ 'सिद्ध' पुरुष की साधना की सफलता अवश्यंभावी थी। अन्त में देवी का वरदान 'फलागम' है।

कविता का आरम्भ 'रवि हुआ अस्त' नाटकीय व्यापार से ही हुआ है। रवि के अंधकार होने का संकेत भी नाटकीयता है और इसके बाद युद्ध के वर्णन में तो आंगिक, वाचिक, आहार्य और सात्त्विक अभिनय के अनेक सुन्दर प्रसंग हैं। कवि विष्कम्भक के रूप में यानी प्रथम दो पंक्तियों और 'आज का' कह कर सारा दृश्य ही जीवन रूप में उपस्थित कर देता है। दूसरे अंश का आरम्भ 'लौटे युगदल' में भी नाटकीयता है। इसी इसी अंश में पुन' विराट् अंधकार के साथराम की मनोदशा को नाटकीय बिम्ब रूप में अत्यन्त लाघवता से प्रकट किया गया है। सानु सभा, पुनः–है अमानिशा–सागर का गर्जन, मशाल का जलना, राम का मानसिक द्वन्द्व (सात्त्विक–अभिनय), लतान्तराल मिलन की स्मृति के व्यापार–'सिहरा तन'...'फूटी स्मिति'–रावण का अट्टहास, 'बैठे मारुति देखते', हनुमान का रौद्र रूप और अट्टाहस, अंजना के साथ संवाद, विभीषण और राम–संवाद, जाम्बवान और राम संवाद, हनुमान को समझाना, निशा का बीतना और प्रकाश का फैलना, रण–कोलाहल, आराधना प्रक्रिया, देवी का पुष्प उठाना, 'धिक् जीवन' 'यह है उपाय' ब्रहाशर को उठाना, 'देखा राम ने', होगी जय'–ये प्रमुख संवाद, स्थितियां, दृश्य आदि से प्रकट होने वाले नाटकीय मोड़ हैं जो कविता को गति प्रदान करते हैं। वास्तव में सारी कविता की आन्तरिक संयोजना ही नाटकीय है। जिस स्थल पर बाह्य संघर्ष नहीं

है और मात्र वर्णन है वहाँ भी लय और छंद सभी नाटकीय व्यापार को पुष्ट करते हैं।

इसे समर्थ अभिनेता चाहे तो रंगमंच पर सफलतापूर्वक प्रस्तुत कर सकता है। निराला ने राम के साथ अपने जीवन की अनुभूति, निराशा, पराजय, संघर्ष और काल्पनिक विजय को जोड़कर अत्यन्त सघन नाटकीय अभिव्यक्ति की है। इसमें संवादों की भूमिका महत्वपूर्ण है। इस कविता में संवाद विभिन्न पात्रों की मनोदशा और संस्कार अनुरूप आये हैं।

नाटकीय संरचना की मुख्य विशेषता है द्वन्द्व, जिसमें तर्क और एक से अधिक दृष्टियों का संवाद नितान्त अपेक्षित है। आख्यानपरक रचना में वस्तुपरक दृष्टि प्रधान रहती है। 'राम की शक्ति पूजा' ऊपर से अन्य पुरुष प्रधान होने के कारण आख्याानपरक दिखती है, पर उसकी भीतरी संयोजना को ध्यान से पढ़ने पर स्पष्ट हो जाता है कि इसमें राम के अनेक रूपों का ही अन्तर्द्वनद्व मुख्य प्रतिपाद्य है। पूरी कविता एक प्रकार से राम और राम की शक्ति के बीच संवाद है–इसीलिए इसमें तीन मुख्य नाटकीय लक्षण हैं। जो भी ब्यौरे इसमें दिये गये हैं, वे बहुत थोड़े से हैं और बहुत स्पष्ट और स्थिति की गम्भीरता के अनुकूल प्राकृतिक परिवेश भी इसी गुरूता के अनुकूल हैं। ध्वनि संरचना बहुत नियमित है, छन्द घनाक्षरी ही प्रायः है, जहाँ कहीं उसमें भंग है, वहाँ नाटकीय मोड़ ही उपलक्षित हैं, उसमें तुक संरचना भी नियमित है। कविता समर के नाटकीय विवरण से प्रारम्भ होती है और राम की चिन्ता से राम की सिद्धि तक विभिन्न दृश्यों में विभक्त होकर आगे बढ़ती है। इसमें संवाद है, लेकिन वे संवाद दोनों प्रकार के हैं – अन्तर्मुख और बहिर्मुख।

मिथक के लिये वस्तु–बोध की जिस तैयारी और भाषा की नयी भंगिमा की ज़रूरत होती है उसका चरम विकास निराला की राम की शक्ति–पूजा में देखा जा सकता है। बड़ी बात यह है कि निराला ने राम कथा का प्रयोग महाकाव्य के रूप में न करके लम्बी कविता के धरातल पर किया है जो आज भी लम्बी कविता के सर्जक के लिए चुनौती बना हुआ है। मिथक को निजी और समसामयिक प्रासंगिकता के मद्देनजर यहाँ रखा गया है, राम का संशय उन्हें आम आदमी की तरह तनावग्रस्त दिखाता है। दूसरी तरफ *''है अमानिशा; उगलता गगन घन अन्धकार; खो रहा दिशा का ज्ञान; स्तब्ध है पवन–चार''* कहकर आधुनिक मूल्यघाती परिस्थितियों और बाह्य परिवेश के साथ आन्तरिक धरातल पर मचे हाहाकार को रेखांकित करता है। राम यहाँ दिशाहीन आधुनिक मानव और स्वयं

निराला के रूप में, रावण गुलामी के अभिशाप और सीता आज़ादी की आकांक्षा के रूप में व्याख्यायित है। रावण की जय का भय और महाशक्ति का रावण के पक्ष में होना दरअसल, आज की विविध आयामी अराजकता को ही रूपायित करता है। 'राम की शक्ति–पूजा' अन्त्यानुप्रास के कारण परम्परागत काव्य संस्कार से प्रभावित बेशक लगे किन्तु भाषा का विशिष्ट तेवर और राम कथा से जुड़े प्रसंगों का प्रतीकात्मक प्रयोग इसे समस्त छायावादी संस्कार से अलगाकर अलग चमक देता है।

'राम की शक्ति पूजा' यदि राम–काव्य–परम्परा में एक नया अध्याय जोड़ सकी है अथवा उस परम्परा के भीतर प्रतिष्ठित होकर भी बाहर आ सकने की क्षमता का उदाहरण बन सकी है तो इसका मूल कारण है–राम कथा के मिथकों पर निराला का अपना समर्थ हस्ताक्षर। इसमें धर्म–भावना भी कथा गति प्रेरक बनी है। राम एक खास तरह की धर्म–भावना से परिचालित हैं, अतः उनकी वेदना का भी मुख्य कारण वही है–'रावण अधर्मरत भी अपना, मैं हुआ अपर'। रावण अधर्मरत है, पर शक्ति उसी को अपनी गोद में लेकर युद्ध में राम से उसका रक्षण कर रही है। होना तो यह चाहिए था कि धर्म की रक्षा में लगे राम का वह साथ देती। यह विडम्बना धर्मप्राण निराला और उनके राम दोनों के लिए समान रूप के त्रासद है। यह जैसे–जैसे गहरी होती जाती है, वैसे–वैसे शक्ति की मौलिक कल्पना करने के जाम्बवान के सुझाव के अनुरूप वातावरण निर्मित होने लगा है।

विपरीत परिस्थितियों के कारण निराला की धर्म भावुकता चाहे अविचल न रह पाती हो, पर समाधान उनका अराधन के प्रत्युत्तर में दृढ़ आराध नही हो सकता था। परिस्थितियों का वैपरीत्य महाप्राण कवि को भी द्वन्द्व में डाल देता था, ऐसी मानसिकता में वे आधुनिक मनुष्य की वेदना को अधिक कलात्मक और संश्लिष्ट अभिव्यक्ति दे पाते थे यानी कविता का रंग निखर उठता था।

युद्ध में विजयी होंगे, इस निश्चय को दिन के युद्ध का अनुभव अनिश्चयग्रस्त बनाता है। इससे कविता आधुनिक–बोध के स्तर पर द्वन्द्वात्मक अभिप्रायों से समृद्ध हो उठती है। इसमें राम–काव्य परम्परा की एक उपलब्धि होकर भी, उसमें एक नया कीर्तिमान स्थापित करके 'राम की शक्ति पूजा' परम्परागत धर्म–भावुकता की पुनरावृत्ति होने से बच जाती है।

अपनी जातीय सांस्कृतिक अस्मिता को भाषा के स्तर पर पूरी गरिमा के साथ वहन करके भी 'राम की शक्ति–पूजा' रामचरित मानस के समय से भिन्न एक नये

देश–काल से प्रतिकृत होती है। ये देश काल है निराला का जातीय स्वाधीनता के लिए अंग्रेजी साम्राज्यवाद से भिन्न स्तरों पर संघर्ष का। सीता यहाँ पौराणिक केंचुल से निकलकर हमारी जातीय अस्मिता से प्रतिरुपित होने लगती हैं और राम का संशय युग चरित नायक के संशय का प्रतिनिधित्व करने लगता है। एक तीसरा स्तर स्वानुभूति का भी है और ये तीनों मिलकर श्रुति–सम्मत ज्ञान का प्रतिपक्ष रचते हैं। अवश्य, इससे रामकथा की प्रचलित मिथकीय संरचना आहत हो उठती है। राम के मन में रावण की जय का भय रेखांकित कर निराला ने मिथक का नया हस्ताक्षर ही किया है–

स्थिर राघवेन्द्र को हिला रहा फिर–फिर संशय,

रह–रह उठता जग जीवन में रावण–जय–भय।

यहाँ राघवेन्द्र के लिए 'स्थिर' विशेषण अकारण नहीं आया है। बल्कि, उनके मन में व्याप्त संशय का यह समर्थ प्रतिपक्ष है। इसमें 'विरुद्धों' का सामंजस्य कहकर टरकाया नहीं जा सकता यह साधारण मनुष्य का संशय नहीं है बल्कि उस मर्यादा पुरुषोत्तम का है जिसका नाम–मात्र संशय–विहग का उड़ा देने में समर्थ है। निराला निःसंशय धार्मिक और अलौकिक चरित्र को संशय से घिरा आधुनिक और लौकिक मानवीय व्यक्तित्व देते हैं। राम की शक्ति पूजा' की अन्तर्वस्तु में इस एक तत्व के समावेश से युगान्तर आ जाता है। डॉ. दूधनाथ सिंह ने इसे सबसे पहले रेखांकित किया और लिखा कि 'जिस संशय के शिकार राम होते हैं, उसका धरातल समसामयिक और राष्ट्रीय है'। संशय–रिक्तता की भूमि से उठाकर निराला ही पहली बार राम को संशय की मनःस्थिति में प्रस्तुत करते हैं। उनके चरित्र का यह संशय ही उन्हें नयी मानवीय भावभूमि पर लाता है। यहाँ तुलसी के राम की तरह जानते हुए भी उनके आँसू या विलाप अथवा विरह–लोक–मन में स्वाभाविकता पैदा करने वाली एक लील–मात्र नहीं है। यहाँ संशय राम के सम्पूर्ण योग व्यक्तित्व का एक अंग है। इसी के द्वारा वे जनसाधारण के लीलामय भगवान न बनकर एक नवीन पुरुषोत्तम की भूमिका ग्रहण करते हैं और मनुष्य मात्र की तरह राष्ट्रीय मुक्ति की चिन्ता में समर्पित होते हैं।

राम–रावण युद्ध की भयावहता और उसमें महाशक्ति की भूमिका को पूरी तत्परता से संक्षेप में ही समग्र अभिव्यक्ति देने पर भी निराला 'राम की शक्ति पूजा' के रूप में कोई युद्धकाव्य नहीं लिखते। युद्ध से ज्यादा युद्ध के लिए अनिवार्य आत्म–बल का संधान और समायोजन ही उनका अभीष्ट रहा है। इस कविता में द्वन्द्व संघर्ष उथल–पुथल के साथ युद्धोपरान्त घटिया होता है। बाहर के दृश्यमान युद्ध से कहीं अधिक भीषण और मर्मस्पर्शी

है भीतर का युद्ध इससे निजात तब मिलता है, जब राम लक्ष्य सिद्धि के लिए भौतिक स्तर पर अपनी प्रियतम वस्तु समर्पित करने की मनः स्थिति में पहुँच जाते हैं। यहाँ शरीर बल और अस्त्र–शस्त्र से लड़ा जाने वाला युद्ध संक्षेप में सामाजिक पद–योजना में आकार लेता है। बाहरी युद्ध भी कम प्रभावशाली नहीं है, किन्तु मन में और मन स लड़ा जाने वाला युद्ध वस्तुनिष्ठ समीकरणों की व्यापकता ढूँढ़ता है। वह एक और मन रहा राम का जो न थका, जो नहीं जानता दैन्य, नहीं जानता विनय'। इस मन को पूरी वैज्ञानिकता के साथ निराला ने अभिव्यक्ति दी है।

'राम की शक्ति–पूजा' से जुड़ा सर्वाधिक विवादास्पद प्रश्न इस रचना के काव्य रूप से जुड़ा हुआ है। इस विवाद का मुख्य कारण यह था कि यह रचना सभी पारंपरिक काव्य–रूपों से भिन्न थी। निराला ने डॉ. रामविलास शर्मा के नाम अपने एक पत्र में 'राम की शक्तिपूजा' को 'बैलेड' कहा है। 'बैलेड' के लिए हिन्दी में 'वीरगीत' पर्याय का प्रयोग किया गया है जो सही नहीं है क्योंकि उसमें किसी लघुकथा का आधार अनिवार्यतः होने के कारण उसे केवल गीत नहीं कहा जा सकता। अतः उसके लिए 'गाथागीत' पर्याय ही समीचीन है। 'राम की शक्तिपूजा' गाथागीत नहीं है, क्योंकि :

1. उसकी रचना सार्वजनिक वाचन के अनुकूल ऋजु–सरल गेय शैली में नहीं, वरन् महाकाव्य की उदात्त शैली में हुई है।

2. उसमें काव्यकला के आभिजात्य का पूर्ण उत्कर्ष और प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में लोकतत्त्व का एकांत अभाव है।

अतः राम की शक्तिपूजा के काव्य रूप का संधान अन्य विधाओं की परिधि में ही करना होगा। इस संदर्भ में एक तथ्य स्वतः स्पष्ट है और वह यह कि 'राम की शक्तिपूजा' कथा–काव्य है। कथा–काव्य के दो प्रसिद्ध भेद हैं–महाकाव्य और खंडकाव्य।

महाकाव्य की उदात्त शैली का उत्कर्ष होने पर भी, इसे महाकाव्य मानने का तो प्रश्न ही नहीं उठता, क्योंकि केवल एक घटना पर केन्द्रित इसका कलेवर नितांत संक्षिप्त है। साथ ही महाकाव्य का एक सर्ग भी इसे नहीं माना जा सकता, क्योंकि यह तो एक स्वतःपूर्ण कलाकृत्ति है, किसी वृहत्तर काव्य का खण्ड नहीं है।

खंडकाव्य में जहाँ नायक के जीवन के 'एकदेश'–अर्थात् खंड का वर्णन रहता है, वहाँ इस कविता में राम के जीवन–संघर्ष के अंतिम खंड 'राम–रावण युद्ध की एक, केवल एक प्रासंगिक घटना का ही वर्णन है। संस्कृत या हिन्दी में जो खंडकाव्य हैं, उनके

कलेवर में निश्चय ही कई घटनाओं का समाहार मिलता है। अतः शुद्ध प्राविधिक दृष्टि से 'राम की शक्तिपूजा' को खंडकाव्य भी कहने में संकोच होता है।

'राम की शक्ति–पूजा' की विषयवस्तु, मूर्ति–विधान, शब्दों की ध्वनि और छंद की लय में एक साथ व्याप्त है। इसी कारण 'राम की शक्ति–पूजा' में कुछ आलोचकों ने महाकाव्य के तत्त्व देखे हैं। इस संदर्भ में आचार्य नंददुलारे वाजपेयी का मत है कि 'राम की शक्ति–पूजा' का महाकाव्योचित औदात्य निराला के अंतरंग की उपज नहीं है। एक तरह से वह अपेक्षाकृत अधिक पाण्डित्य और परिश्रम का परिणाम है। उनके मतानुसार उसमें महाकाव्य के लिए उपयोगी है ही नहीं, उन्होंने केवल भाषा के सम्बल पर इस आख्यान या गाथाकाव्य को गाथा की भूमि से उठाकर महाकाव्योचित गाम्भीर्य देना चाहा।

डॉ. दूधनाथ सिंह ने लम्बी कथात्मक कविताएँ कहा है। डॉ. नरेन्द्र मोहन 'राम की शक्ति–पूजा' को लेकर लम्बी कविता के मुद्दे पर अपनी मुहर लगाते हुए कहते हैं कि पुराकथा का सर्जनात्मक विधान इस कविता के रूप में है। भावनाओं और मनोदशाओं के सान्निध्य और टकराव से यह कविता लम्बी हो गई है।

रामविलास जी लिखते हैं–'राम की शक्ति पूजा' महाकाव्य नहीं है खण्डकाव्य भी नहीं वह एक लम्बी कविता है, इसके संक्षिप्त रूपाकार में विवरण अत्यल्प है। आख्यान निरन्तर होने पर भी बहुत अपरिहार्य स्थलों पर ही विवरण दृश्यमान हैं। इस दृष्टि से लम्बी कविता के रचना विधान का यह उत्कृष्ट प्रतिमान बन गई है।

इस संदर्भ में डॉ. बलदेव वंशी का मत भी विचारणीय है – ''ज्यों–ज्यों आधुनिक मानसिकता विकसित होती गई त्यों–त्यों हिन्दी साहित्य में, प्रबंध काव्य के चरित्र में तात्त्विक दृष्टि से ढील आती गई है और अंततः 'राम की शक्ति–पूजा' जिस काव्य ढाँचे को लेकर उपस्थित हुई, वह प्रबंधात्मकता से मुक्त आधुनिक अधिक है, और प्रबंधात्मकता का सही विकल्प भी। इससे हिन्दी काव्य में लम्बी कविता की वर्तमान धारा की शुरूआत मानी जा सकती है विचार–अनुभव की स्थितिपरक नाटकीयता तथा मिथकीय पुनः सृजन उसे लम्बी कविता होने के साथ एक विशिष्ट सांस्कृतिक उपलब्धि भी सिद्ध करते हैं।

10.4 सारांश – लम्बी कविता के उन्नायक के रूप में कवि निराला का योगदान राम की शक्ति पूजा के बहाने इस पाठ में सिद्ध किया गया है।

10.5 कठिन शब्द – अस्ति, नास्ति, पंच अवस्थाएं, वैपरीत्य

10.6 अभ्यासार्थ प्रश्न –

प्र01 'राम की शक्ति पूजा' की मिथकीय योजना पर प्रकाश डालिए।

.....

.....

.....

प्र02 'राम की शक्ति पूजा' की नाटकीयता स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

प्र03 'राम की शक्ति पूजा' में वर्णित तनाव राम के साथ निराला और आम आदमी का भी है, स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

प्र04 लम्बी कविता के तत्वों के आधार पर 'राम की शक्ति पूजा' का विवेचन कीजिए।

.....

.....

.....

10.7 पठनीय पुस्तकें –

1) अनामिका – सूर्यकांत त्रिपाठी निराला

2) निराला – इन्द्रनाथ मदान (सं.)

3) महाप्राण निराला और राम की षक्ति पूजा – बी एल आर्य

4) निराला आत्महंता आस्था – दूधनाथ सिंह

5) राम की शक्ति पूजा – डॉ. नगेन्द्र

6) राम दरश राय – आधुनिक हिन्दी कविता में पौराणिक संदर्भों की पुर्नरचना

7) निराला की दो लम्बी कवितांए – डॉ. हरिचरण शर्मा

8) लम्बी कविता का रचना विधान – डॉ. नरेन्द्र मोहन

9) निराला की साहित्य साधना – रामविलास षर्मा

लम्बी कविता के तत्वों के आधार पर 'अंधेरे में' की समीक्षा

11.0 रूपरेखा

11.1 उद्देश्य

11.2 प्रस्तावना

11.3 लम्बी कविता के तत्वों के आधार पर 'अंधेरे में' की समीक्षा'

11.4 सारांश

11.5 कठिन शब्द

11.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

11.7 पठनीय पुस्तकें

11.1 उद्देश्य

लम्बी कविता के इतिहास में 'अंधेरे में' कविता मील का पत्थर कही जा सकती है। मुक्तिबोध में कवि कर्म और इस लम्बी कविता के सूक्षम पहलुओं की पहचान यहाँ हो सकेगी।

11.2 प्रस्तावना

लम्बी कविता के लिए जिस दीर्घकालिक सर्जनात्मक तनाव की जरूरत होती है उसका सर्वाधिक समर्थ प्रयोग इस कविता में हुआ है। नाटकीयता के साथ विभिन्न मनोदशाओं की अभिव्यक्ति के साथ–साथ विद्यार्थी 'अंधेरे में' की संपूर्ण संरचना से अवगत होंगे।

11.3 लम्बी कविता के तत्वों के आधार पर 'अंधेरे में' की समीक्षा'

'अंधेरे में' एक ऐसी लम्बी कविता है जो अपना प्रतिमान स्वयं है। यह न तो

किसी कथा पर आधारित है, न मात्र अपने जीवन के ऊहापोह से गुज़रती है। यह एक ऐसी कविता है जो स्वयं सामाजिक संदर्भों से कथा गढ़ती है। आत्मसंघर्ष और सामाजिक संघर्ष के सूत्र इस कविता में एक साथ जुड़ बँध गए हैं जो इस कविता को जटिल, गहरी और बहुआयामी बनाते हैं।

कविता का आरम्भ ज़िन्दगी के अंधेरे कमरों से होता है। चित्र शुरू होता है इन अंधेरे कमरों में टहलते हुए किसी प्रकाशमय व्यक्तित्व के अस्तित्व बोध से। यह अंधेरा सामाजिक विसंगति और विरूपता का भी अंधेरा है और कवि के अवचेतन मन का भी। यह प्रकाशमय व्यक्तित्व सामाजिक मूल्य और रचनाधर्मिता का भी प्रतीक है और कवि की चरम अभिव्यक्ति का भी। यहाँ एक मोड़ उपस्थित होता है। कमरे का अंधेरा पूरे विश्व में फैला दिखाई पड़ता है।

दूसरे खण्ड में फिर कमरे के भीतर का चित्र उभरता है। कमरे में सूनापन है और अंधेरा है किन्तु उसमें से स्वर उभर रहे हैं। उधर दरवाजे की साँकल बज रही है। कवि के अवचेतन के अंधकार को तोड़कर उसका प्रकाशमय चेतन उसके व्यक्तित्व में उदित होना चहाता है। वह प्रकाश पुरुष अवसर–अनवसर प्रकट होता रहता है। वह कवि की सुविधाओं का तनिक भी ख्याल नहीं करता। यहाँ कवि कहना चाहता है कि यथास्थिति बड़ी सुखदायक होती है, किन्तु मूल्य का प्रकाश पीड़ा और विवके से पैदा होता है, वह व्यक्ति को निरन्तर कोंचता है, समय असमय जगाता है, पीड़ित करता है। इस निश्चय के पश्चात् कवि लड़खड़ाता हुआ उठ खड़ा होता है, दरवाजा खोलने के लिए, ताकि प्रकाश–पुरुष आ सके। यह उठ खड़ा होना आत्मजागरण है, जड़ संस्कारों को तोड़कर बाहर झांकना है। कवि बाहर झांकता है। इस अंधियारे में चीख कर एक पक्षी कहता है कि वह प्रकाश–पुरुष चला गया, नहीं आयेगा अब तू उसको खोज।

तीसरे खण्ड में अंधेरे और प्रकाश के तनाव की यात्रा और भी संदर्भ बहुला और गहरी हो उठती है। कमरे का अंधेरा, कमरे के बाहर का अंधेरा और इस सघन अंधेरे में व्याप्त संदेह और भय की अनुभूति, इस परिवेश को तोड़–तोड़कर उगता हुआ मूल्य बोध। कवि ने यहाँ बारी–बारी से फैंटेसी में कई महापुरुषों की चर्चा की है। अंधेरे का जुलूस, जुलूस की भयावह गतिविधियाँ, अनेक वस्तुओं क, स्वरों के, रंगों के प्रभावशाली बिम्ब, सार्थक विशेषणों और अप्रस्तुत विधानों द्वारा अंधेरे की संवेदना की अभिव्यक्ति, कुल मिलाकर यह इस कविता का बहुत ही प्रभावशाली खण्ड है। जुलूस के बीच में टालस्टाय, तिलक, गाँधी आदि का आना अंधेरे के साथ प्रकाश के तनाव को तो सर्जित करता ही है, एक अजब त्रासदी की भी सृष्टि करता है, जैसे सारे प्रकाश–पुरुष अपनी मानवीय

पीड़ा और करुणा लिए युगों से अंधेरे में भटक रहे हैं।

जुलूस शहर के अवचेतन से उपजा हुआ उसी का विसंगतिग्रस्त रूप है। इस जुलूस में शामिल जो व्यक्ति हैं वे बहुत प्रतिष्ठित माने जाते हैं किन्तु यहाँ ये अपने भीतर छिपे हुए विकृत रूप में है। इसमें सभी तरह के लोग शामिल हैं– मंत्री उद्योगपति, आलोचक, विचारक, कवि, कर्नल, ब्रिगेडियर, सेनापति, सेनाध्यक्ष और कुख्यात डकैत डोमा जी उस्ताद। सभी अपने असली रूप में एक ही कतार में हैं। इसे नग्न रूप से देखने वालों की हत्या कर दी जाती है।

चौथे खण्ड में फिर एक नयी गति आती है। सुबह होने वाली है फिर भी चारों ओर बिखराव है और चुपचाप सेना सड़कें घेर लेती हैं। जन क्रान्ति के दमन के लिए मार्शल लॉ लगा दिया जाता है, कवि दम छोड़कर भागता है और कई–कई मोड़ घूम जाता है। इस खण्ड में जनसंघर्ष भी है, कवि का पलायन भी है, पागल का अतीत भी है, जाग्रत वर्तमान भी है और कवि के नये आत्मोद्‌बोध के साथ उसकी यह समझदारी भी है कि उसकी निष्क्रियता ही सामाजिक विसंगति की उत्तरदायी है।

पांचवें खण्ड में फिर एक मोड़ आता है। बंदूकें धाँय–धाय छूटने लगती हैं और मकानों के ऊपर गेरुआ प्रकाश फैलने लगा है। कवि कवि भागकर एक प्राकृत गुफा में छिप जाता है। यह तिलस्मी खोह अपना ही अवचेतन रूप है जहाँ आदमी बाहर से डरकर भागकर आ छिपता है। कवि भय से भाग रहा है– ठंडे लंबे चौड़े कालेतारी रास्ते पर। इस स्थिति और मनःस्थिति में तिलक के रूप में फिर प्रकाश–पुरुष का उदय होता है। कवि को तिलक के स्पर्श से अपने भीतर करुणा, बिजली की चिनगियों और खून के तालाब का अनुभव होने लगता है।

इस परिवेश में बोरा ओढ़े जनता के प्रतीक गाँधी दिखाई पड़ते हैं। गाँधी की बाह में एक बच्चा है, उसे वे नयी पीढ़ी के साथ सौंप देते हैं। बच्चा भविष्य है। एकाएक बच्चा न जाने कहाँ चला जाता है और उसके स्थान पर रह जाते हैं मात्र सूरजमुखी फूल के गुच्छे। सूरजमुखी के गुच्छे उस प्रकाशमय सुन्दर और कोमल अनुभव को रूपायित करते हैं जो भविष्य के बालक को वहन करने के कारण उत्पन्न होता है। फिर अचानक सूरजमुखी के गुच्छे गायब हो गये और उसकी जगह कंधे पर एक भारी बंदूक आ गयी। इस बंदूक को कुछ आलोचकों ने जनता की विद्रोह शक्ति का प्रतीक माना है और कुछ ने सत्ता की बंदूक का। आगे चित्रित है कि इस अभावग्रस्त परिवेश के बीच एक कलाकार मरा हुआ है, मरा नहीं है बल्कि मारा गया है, यह कवि का परिचित है मानो कवि स्वयं

है।

फिर परिस्थितियों की एक टकराहट सामने आती है। कवि निकलता है नये सहचरों की तलाश में और आततायियों से घिर जाता है । आततायी कवि को अंधियारे कमरे में ले जाकर यातना दे रहे हैं और उसकी देह को तोड़कर तलाशी ले रहे हैं। इस प्रक्रिया में वे पाते हैं कि कवि के भीतर जो खतरनाक चीज़ है वह है विचार। इन विचारों की सेक्रेटरी है आस्था और सरगना है आत्मा। कवि की आस्था और आत्मा को निकालकर उसे निष्क्रिय और शक्तिशून्य बनाने का प्रयास होने लगता है।

सातवें खण्ड में यातना की तात्कालिकता और स्थूलता एक अनवरत सूक्ष्म में बदल जाती है। कवि को महसूस होता है कि अब अभिव्यक्ति के लिए खतरे उठाने ही पड़ेंगे। तभी दुर्गम पहाड़ों के पार पहुँचा जा सकता है, जहाँ वे बाहें हैं जिनमें प्रतिपल अरुण कमल कांपता रहता है।

आठवें खण्ड में बड़ी त्वरा के साथ सकल क्रियाएँ और विचार घूमते हैं। नगर में भयानक धुआं उठ रहा है, कहीं आग लग गयी है, कहीं गोली चल गयी है। फिर स्वप्न टूट गया। अकेला हो गया किन्तु देखे हुए स्वप्न का प्रभाव शेष है। प्रत्येक वस्तु का अपना–अपना अस्तित्व है जो आलोक में झलक रहा है। फिर वही व्यक्ति (प्रकाश–पुरुष) दिखायी पड़ता है। वह कवि की अपनी अनखोजी समृद्धि का परम उत्कर्ष है, कवि उसका शिष्य है, उससे बार–बार आलोक प्राप्त करता है बल्कि कवि स्वयं ही वह है किन्तु स्थिर भाव से उसके यानी अपने प्रकाश रूप का साक्षात्कार नहीं कर पाता।

आत्म संघर्ष दो स्तरों पर चलता है। इसका एक पक्ष व्यक्ति के मनोजगत् के संघर्ष का है तो दूसरा पक्ष समाज की विभिन्न स्थितियों से संघर्ष का है। 'अंधेरे में' कविता में मध्यमवर्ग के उस व्यक्ति के आत्मसंघर्ष को उभरा गया है जो एक ओर समाज की व्यवस्था, उत्पीड़न के विरुद्ध संघर्ष करना चाहता है पर दूसरी ओर वह अपनी सुविधाओं को छोड़ भी नहीं पाता। एक ओर वह संघर्ष प्रेरित होकर 'रक्तालोक–स्नात पुरुष' बनना चाहता किन्तु दूसरी ओर उसे कमजोरियों से भी अलगाव है। एक ओर वह चाहता कि 'रक्तालोक स्नात पुरुष' को –

बाँहों में कस लूँ,

हृदय में रख लूँ

घुल जाऊँ, मिल जाऊँ लिपटकर उससे

पर इसके साथ ही उसकी दूसरी स्थिति यह है कि –

डरता हूँ उससे

वह बिठा देता है तुंग शिखर के

खतरनाक, खुरदरे कगार–तट पर

शोचनीय स्थिति में ही छोड़ देता मुझको।

कहता है–''पार करो पर्वत–सन्धि के गह्वर,

रस्सी के पुल पर चल कर

टूट उस शिखर–कगार पर स्वयं ही पहुँचो।

अरे भाई, मुझे नहीं चाहिए शिखरों की यात्रा,

मुझे डर लगता है ऊँचाइयों से

बनजे दो सांकल!!'

'अँधेरे में' कविता का मूल प्रतिपाद्य इसी द्वन्द्व का चित्रण है जो हमारे समाज के मध्यमवर्गी व्यक्ति के सुविधाजीवी और आदर्शजीवी मन के बीच हुआ करता है। मन की द्विधा बड़ी स्वाभाविक है। मध्यमवर्गीय मन सदैव सामंजस्य स्थापित करना चाहता है क्योंकि उसकी प्रकृति सब कुछ सहेजने की होती है।

यहीं से द्विधा आरम्भ होती है। वस्तुतः यह 'रक्तालोक–स्नात पुरुष' दो हैं एक ओर यह जिन्दगी के कमरों के अंधेरे में चक्कर लगाता है, दूसरी ओर शहर के बाहर के तालाब की लहरियों में उसका चेहरा फैला है तथा जो वाचक के द्वार पर अन्दर आने के लिए साँकल बजा रहा है। इस तरह स्पष्ट है कि 'रक्तालोक–स्नात पुरुष' दो हैं–एक अन्दर है, दूसरा बाहर।

पर प्रश्न उठता है कि 'यह रक्तालोक–स्नात पुरुष' है कौन ? इसका परिचय क्या है ? वाचक से इसका क्या सम्बन्ध है ? वाचक को आरम्भ में भ्रम होता है कि वह मनु है। बाद में वाचक स्वीकार करता है–

वह रहस्यमय व्यक्ति

अब तक न पाई गई मेरी अभिव्यक्ति है,

पूर्ण अवस्था वह,

निज सम्भावनाओं, निहित प्रभावों, प्रतिमाओं की,

मेरे परिपूर्ण का आविर्भाव,

हृदय में रिस रहे ज्ञान का तनाव वह,

आत्मा की प्रतिमा।'

अर्थात् यह 'रक्तालोक–स्नात पुरुष' 'पूर्ण अभिव्यक्ति' है। पर प्रश्न उठता है कि यह 'पूर्ण अभिव्यक्ति' क्या है व किसकी है ? यह अभिव्यक्ति दो स्तरों पर है। प्रथम तो यह कि समाज में फैला अंधकार दूर हो जाए। दूसरी यह कि कविता बन जाए, रचना प्रक्रिया सम्पूर्ण हो जाए।

मुक्तिबोध ने इस 'रक्तालोक–स्नात पुरुष' के प्रतीक के माध्यम से सामाजिकता और कविता को अभेद्य रूप में संगठित कर दिया है जो सम्पूर्ण कविता में आद्यन्त विद्यमान है। इस कविता से मुक्तिबोध की यह धारणा जानी जा सकती है कि मनुष्य की पूर्ण सम्भावनाएँ तभी प्रकट होंगी जब कविता सामाजिकता को ग्रहण कर लें और समाज, कविता या कला को अंगीकार कर ले।

कविता में आया अंधेरा कई बातों की ओर संकेत करता है। एक तो यह कि समाज में अव्यवस्था का अँधेरा फैला हुआ है। अति अँधेरे का दूर होने का मतलब सामाजिक कुव्यवस्था का दूर होना है। दूसरी ओर यह अँधेरा कवि के मन में छाई उस अमूर्तता व अस्पृश्यता को भी व्यंजित करता है जो कविता लिखने से पहले, सृजन–प्रक्रिया के आरम्भ में होती है।

कविता में आत्म–साक्षात्कार की प्रक्रिया 'वह' और 'मैं' के बीच चल रही है। 'रहस्यमय रक्तलोक–स्नात–पुरुष' पुरुष ही 'वह' है जिसे पाने के लिए 'मै' अँधेरे में भटक रहा है तथा जो अपनी सुविधावादिता के कारण उससे मिलकर भी नहीं मिल पाता है। 'मैं' को अपनी कमजोरियों से लगाव है। 'रक्तालोक–स्नात पुरुष' का 'विवके विक्षोभ' सहने की शक्ति उसमें नहीं है पर इसके साथ ही 'मैं' उसे छोड़ देने में भी असमर्थ है। 'मैं' उसे छोड़ना भी नहीं चाहता है क्योंकि उस 'रक्तालोक–स्नात पुरुष' से साक्षात्कार के बाद 'मैं' में बड़ा परिवर्तन आ गया है –

पैरों से महसूस करता हूँ दुनिया,

हाथों से महसूस करता हूँ दुनिया,

मस्तक अनुभव करता है आकाश

'मैं' की आत्मा में 'सत्–चित्–वेदना' जल उठी है। उसमें वेदना से युक्त सकर्मकता का समावेश हो गया है। उसे एक मूल मन्त्र मिल गया है कि संसार में जो कुछ है उसे ग्रहण करो, पीड़ा–करुणा को स्वीकार और सहानुभूतिपूर्वक अपने कार्यों को पूर्ण करो। लेकिन 'मैं' जब 'रक्तालोक–स्नात पुरुष' से मिलने के लिए अपने द्वार की जंग खाई सिटकनी खोलकर बाहर झांकता है। उसकी पूर्ण अभिव्यक्ति – 'वह' उससे दूर चली गई है जो लौटेगी नहीं। जिसकी निरन्तर खोज करनी होगी।

मुक्तिबोध ने आरम्भ में इस कविता का ठीक शीर्षक दिया था– ''आशंका के द्वीप : अंधेरे में।' कवि को एक रात अंधेरे में आशंका के द्वीप दिखलाई पड़ते हैं। वह आशंका देश में फासिस्ट हुकूमत कायम होने की है। इस तरह यह शीर्षक कविता की मुख्य वस्तु की तरह बहुत स्पष्ट ढंग से संकेत करता था, लेकिन बाद में मुक्तिबोध ने श्रीकान्त वर्मा को शीर्षक से 'आशंका के द्वीप' को हटा देने की बात कहकर आलोचकों के लिए भ्रम की गुंजाइश पैदा कर दी। स्वयं कवि की दृष्टि में इस कविता की मुख्य वस्तु क्या है, यह अग्न्येश्का सोनी को लिखे गए उसके पत्र से मालूम होता है। *''उसमें एक आशंका है, अंधेरी आशंका का वातावरण है – कहीं हमारे भारत में ऐसा–वैसा न हो।''*

यह काव्य–नायक कौन है ? इसे लेकर मुक्तिबोध–सम्बन्धी हिन्दी आलोचना में एक विवाद चलता रहा है। डॉ. रामविलास शर्मा का कहना है कि वह स्वयं मुक्तिबोध है। उनके शब्द हैं : ''मुक्तिबोध को 'अंधेरे में' कविता के नायक से अलग करके देखना असंभव है।'' वे इसके साथ यह भी कहते हैं कि मुक्तिबोध सिजोफ्रेनिया नामक एक मानसिक रोग से ग्रस्त थे, जिसका एक लक्षण विभाजित व्यक्तित्व है। उनके अनुसार 'अंधेरे में' के काव्य–नायक का आत्मसंघर्ष इस विभाजित व्यक्तित्व का ही परिणाम है। वस्तुस्थिति यह है कि न 'अंधेरे में' का काव्य–नायक पूर्णतः मुक्तिबोध से अभिन्न है, न मुक्तिबोध विभाजित व्यक्तित्व के शिकार थे। काव्य–नायक एक बड़ी हद तक उन मध्यवर्गीय बुद्धिजीवियों का प्रतिनिधि है, जिन्हें देश–दशा का पता है और जो अपने दायित्व से परिचित हैं, लेकिन जो अपनी परिस्थितियों और संस्कारों की घेराबन्दी तोड़कर संघर्ष के मार्ग पर कदम बढ़ाने में अपने को असमर्थ पाते हैं। जैसे–जैसे समाज में वर्ग–संघर्ष बढ़ता जाता है, सचेत मध्यवर्गीय बुद्धिजीवी का आत्मसंघर्ष भी बढ़ता है, क्योंकि उसी अनुपात में उसका दायित्व–बोध गहन होता जाता है। 'अंधेरे में' का

काव्य–नायक स्वयं कहता है : ''जितना ही तीव्र है द्वंद्व क्रियाओं घटनाओं का/बाहरी दुनिया में,/चलता है कि द्वंद्व की/फिक्र से फिक्र लगी हंई है।''

'अंधेरे में' की व्याख्या के क्रम जैसे यह प्रश्न उठता है कि उसका काव्य–नायक कौन है, वैसे ही यह प्रश्न भी कि यह रक्तालोकस्नात पुरुष कौन है ? रामविलास शर्मा के अनुसार वह रहस्यात्मक सत्ता है। उनका कथन है : ''अंधेरे में' कविता में जिस रहस्यमय व्यक्ति को मुक्तिबोध खोज रहे हैं, वह उनकी संभावनाओं, निहित प्रभावों, प्रतिमाओं की 'पूर्ण अवस्था' है; 'मेरे परिपूर्ण का आविर्भाव' है। रात का पक्षी उन्हें बताता है, 'वह तेरी पूर्णतम अभिव्यक्ति' है। इसीलिए कविता के अन्त में यह अभिव्यक्ति प्राप्त नहीं होती। यदि केवल सर्वहारा वर्ग से तदाकार होने का प्रश्न होता तो मजदूरों के जलूस और संघर्ष में साथ रहने पर वह प्रक्रिया पूरी हो जाती।'' डॉ. नामवर सिंह का मत इससे भिन्न है। उनके अनुसार 'अंधेरे में' का काव्य–नायक आत्मनिर्वासन का शिकार है रक्तालोकस्नात पुरुष उसकी खोई हुई अस्मिता है, जिसकी खोज में वह लगा है। इस तरह दोनों वस्तुतः अभिन्न है।

वस्तुस्थिति यह है कि रक्तालोकस्नात पुरुष न कोई रहस्यात्मक सत्ता है, न वह काव्य–नायक की अस्मिता है। कविता में इस बात के स्पष्ट संकेत हैं कि वह मजदूर है और मजदूरों की संगठित शक्ति तथा सर्वहारा–चेतना का प्रतीक है। फासिस्ट हुकूमत में उसे गोलियों से जख्मी ही नहीं किया गया है, बल्कि जेल में भी डाल दिया गया है। जिस 'गुहा' में वह बन्द है, वह वस्तुतः जेल है। लेकिन चूँकि फासिस्ट हुकूमत के लिए भी मजदूर–वर्ग को खत्म करना असम्भव है, वह जेल के बाहर भी दिखलाई पड़ता है। यहाँ प्रश्न उठ सकता है कि मुक्तिबोध ने रक्तालोकस्नात पुरुष का दर्जा 'मजदूर' को क्यों दिया और उसी को उतने बुरे हाल में क्यों दिखलाया ? इसका उत्तर यह है कि मजदूर–वर्ग ही पूँजीवाद का सबसे प्रबल शत्रु होता है और इसी कारण वह फासिस्ट हुकूमत का पहला निशाना होता है। उस पुरुष के बारे में कुछ प्रश्न करते हैं, जिनका उत्तर उन प्रश्नों में ही निहित है :

किन्तु वह फटे हुए वस्त्र क्यों पहने हैं ?

उसका स्वर्ण–मुख मैला क्यों ?

वक्ष पर इतना बड़ा घाव कैसे हो गया ?

उसने कारावास–दुःखझेला क्यों ?

उसकी इतनी भयानक स्थिति क्यों है ?

रोटी उसे कौन पहुँचाता है ?

कौन पानी देता है ?

फिर भी उसके मुख पर स्मित क्यों है ?

प्रचंड शक्तिमान क्यों दिखाई देता है ?

'अंधेरे में' कविता के साथ यह दुर्घटना हुई है कि इस पर सारी चर्चा 'चाँद का मुँह टेढ़ा है' में प्रकाशित इस कविता के पाठ को आधार बनाकर की गई है, जिसमें ऊपर उद्धृत नौ पंक्तियाँ गायब है। 'कल्पना' में सम्भवतः 'अंधेरे में' को प्रकाशनार्थ स्वयं मुक्तिबोध ने भेजा था। इस पत्रिका में प्रकाशित पाठ में ऊपर उद्धत नौ पंक्तियाँ बदस्तूर अपनी जगह पर मौजूद हैं।

इस कविता की फैंटेसी इस कारण ही जटिल नहीं है कि इसमें एक स्वप्न टूट जाने के बाद दूसरा स्वप्न शुरू होता है, स्वप्न के भीतर स्वप्न चलता है और इसका जागरण भी भ्रम है, बल्कि इस कारण भी यह जटिल है कि इसकी फैंटेसी इन तीनों बातों–फासिज्म की आशंका, काव्य–नायक का आत्मालोचन और आत्मसंघर्ष तथा रक्तालोकस्नात पुरुष के रूप में मजदूर, मजदूर–वर्ग की संगठित शक्ति और सर्वहारा–चेतना का वर्णन से 'अंधेरे में' निश्चय ही दुःस्वप्न की कविता है, लेकिन इसमें रक्तालोकस्नात पुरुष, काव्य–नायक के व्यक्तित्वांतरण और जनक्रान्ति के सुखद स्वप्न भी हैं, जो पूरी कविता के गहन और डरावने अंधकार को अपने तीव्र आलोक से छिन्न–भिन्न करते रहते हैं यही अंधेरे में की विशेषता है।

11.4 सारांश

'अंधेरे में' को समझे बिना लम्बी कविता की समझ उत्पन्न नहीं हो सकती। यह लम्बी कविता क्यों इतनी महत्वपूर्ण एवं चुनौतीपूर्ण है, इसका अध्ययन यहाँ किया गया है।

11.5 कठिन शब्द

आत्मजागरण, जुलूस, तिलस्मी खोह, मध्यवर्गीय मन, रक्तालोक स्नात पुरूष, फासिज्म, आत्मालोचन, आत्मसंघर्ष

11.6 अभ्यासार्थ प्रश्न–

प्र01 रक्तालोकस्नात पुरूष का वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

प्र02 'अंधेरे में' कविता का अंधेरा पूरे देश का अंधेरा है, सिद्ध कीजिए।

.....

.....

.....

प्र03 कविता के आधार पर मुक्तिबोध द्वारा वर्णित आत्माभिव्यक्ति के संकट पर प्रकाश डालिए।

.....

.....

.....

प्र04 'अंधेरे में' दीर्घकालिक तनाव की कविता है, स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

प्र05 लम्बी कविता के तत्वों के आधार पर 'अंधेरे में' का विवेचन कीजिए।

.....

.....

.....

11.7 पठनीय पुस्तकें

1) चाँद का मुँह टेढ़ा है – गजानन माधव मुक्तिबोध

2) बीसवी शताब्दी का उत्कृष्ट साहित्य : लम्बी कविताएं – डॉ. नरेन्द्र मोहन

3) मुक्तिबोध की कविताई – अशोक चक्रधर

4) लम्बी कविता का रचना विधान – डॉ. नरेन्द्र मोहन

5) मुक्तिबोध की काव्य–सृष्टि – सुरेश ऋतुपर्ण

6) अंतस्तल का पूरा विप्लव : अंधेरे में – निर्मला जैन

लम्बी कविता के तत्वों के आधार पर 'टुण्डे आदमी का बयान' की समीक्षा

12.0 रूपरेखा

12.1 उद्देश्य

12.2 प्रस्तावना

12.3 लम्बी कविता के तत्वों के आधार पर 'टुण्डे आदमी का बयान' की समीक्षा'

12.4 सारांश

12.5 कठिन शब्द

12.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

12.7 पठनीय पुस्तकें

12.1 उद्देश्य

आज़ाद भारत में विसंगत व्यवस्था के कारण उपजे तनाव और उसके बीच जीते आम आदमी की स्थितियों का नाटकीय ब्यौरों में वर्णन इस पाठ में किया गया है।

12.2 प्रस्तावना

प्रस्तुत लम्बी कविता का महत्व इस दृष्टि से है कि कवि ने जनमानस का उद्‌बोधित करने के साथ स्वयं को भी कर्मशील बनाने का संकल्प लिया है। सकारात्मक सोच और आशावादी दृष्टिकोण के साथ तनाव और विश्रन्ति की श्रृंखला से गुजरती हुई कविता रूपायित हुई है ।

12.3 लम्बी कविता के तत्वों के आधार पर 'टुण्डे आदमी का बयान' की समीक्षा'

बसन्त कुमार परिहार ने बारह वर्षीय बालक के रूप में देश के विभाजन को देखा और भोगा है। कवि के हवाले से कहें तो जानेंगे कि धर्म के नाम पर सियासत कितना बड़ा अनर्थ कर सकती है यह हम विभाजन और उसके बाद की राजनीतिक और सामाजिक परिस्थितियों में देखते हैं। आज़ादी के बाद गाँधी जी ने जिस प्रकार के भारत (रामराज) के विकास का सपना देखा था उसे उनके अनुयायियों ने मटियामेट कर दिया। वादाखिलाफ़ियाँ की। टुच्ची राजनीतिक चालें चलकर सत्ता हथियाने और सत्ता पर बने रहने के घृणा आचरणों का खुल्लम–खुल्ला प्रदर्शन किया। प्रजातंत्र को तोड़मरोड़ कर अपना स्वार्थ सिद्ध करना चाहता गुंडा राज जैसी स्थिति पैदा की। अराजकता फैलाई। जनता के सरमाए का दुरुपयोग किया भाई भतीजावाद विकसित हुआ। धर्म, भाषा और प्रान्त के नाम पर वोटों की राजनीति होने लगी है। अमीर और ग़रीब के बीच की दरार बढ़ती गई। जनता और महँगाई के बोझतले घटने लगी। आम जनता ने विभाजन के बाद जिस शान्तिमय समृद्ध भारत में अपने और अपनी संतानों के लिए जिस उज्ज्वल भविष्य का सपना संजोया था उसकी चिन्दियाँ उड़ गई। कहाँ तक देश में फैले बवंडर का वणर्न किया जाए। ऐसे हालात में मोहभंग के विभिन्न चित्र अधिकता से नहीं उभरेंगे तो और क्या होगा ?

'टुण्डे आदमी का बयान' में भी अन्धी कानून व्यवस्था है। जिसके फलस्वरूप न्याय व्यवस्था में जज सोया हुआ है और उसने फरमान अपनी जेब में पहले से ही रख दिया है। इसी बात की पुनरावृत्ति इस लम्बी कविता में हुई है। जब भी किसी व्यक्ति ने विद्रोह किया तो व्यवस्था द्वारा इस प्रकार का व्यवहार होता रहा कि पुनः उसमें उत्साह की सम्भावना ही न रही।

कवि परिहार के रचना–कर्म की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि सकारात्मक सोच और आशावादी दृष्टिकोण के साथ प्रत्येक लम्बी कविता अन्त तक पहुँचती है। यह अलग बात है कि पूरी लम्बी कविता में तनाव और विश्रान्ति की कनियाँ घूमती रहती हैं क्योंकि व्यक्ति कभी दहशतजदा होता है तो कभी स्वयं संभावनाओं में आस्था और विश्वास बनाये रखते हुए तनावमुक्त होता है।

आज़ाद भारत में लोकतन्त्र के नाम पर अधिनायकवाद इस तरह पनपा कि परिचित शब्दों के अर्थ और संदर्भ बदल गये। लोग उन शब्दों को पकड़ने–समझने की कोशिश

करने लगे जो उन्होंने अब तक न पढ़े थे, न सुने थे। देखते ही देखते नेहरू के समाजवाद का अर्थ इंदिरा, संजय, राजीव, सोनिया और प्रियंका–राहुल की वंश परम्परा तक सिमटकर रह गया और इस तरह एक बार फिर राजतन्त्र की स्थापना हुई। अनगिनत मुखौटों में वास्तविकता छुपाने वाला नट नेता हो गया और लोकतन्त्र का अर्थ भोगतन्त्र में तब्दील हो गया।

आज़ादी से पहले विदेशी सत्ता के प्रति विद्रोह था अतः स्थिति उतनी दयनीय नहीं थी लेकिन आज प्रजातान्त्रिक प्रणाली अपनों द्वारा, अपनों का, अपनी सत्ता के स्वार्थ हेतु राजनीतिक प्रयोग कर हमें पहले से कहीं अधिक बेबस और बेचारा बनाये दे रही है। इसी तनाव को लम्बी कविता ने जाना पहचाना है।

'टुण्डे आदमी का बयान' में स्वतन्त्रता के पश्चात् आम आदमी की, हिन्दुस्तान की क्या स्थिति रही उसे परिलक्षित किया गया है। 'टुण्डे आदमी का बयान' में मोहभंग का जंगल कई दिशाओं और विरोधी साहचर्यों में पसरा पड़ा है। इस लम्बी कविता में डोली और अर्थी, पतझड़ और बसन्त, आजादी और गुलामी, ज़िन्दा आदमी और लाश, शारीरिक रूप से हट्टे–कट्टे और टुण्डे आदमी, लोकतन्त्र और तानाशाही, माली और बहेलिया, तस्कर और महन्त, न्यायाधीश और राजनीतिक गुण्डे का अन्तर बेमानी हो गया है। इस सारे परिदृश्य से उत्पन्न बेचैनी, सत्ता द्वारा इस बेचैनी का दमन करने की साजिश के बावजूद कुछ कर गुजरने का जज़्बा 'टुण्डे आदमी' को शक्तिशाली बनाता है। व्यवस्थापिका, कार्यपालिका, न्यायपालिका के अराजक तेवर के चलते स्वतन्त्रता, समानता, न्याय, व्यवस्था, रोटी के एवज में दलबदलू नेता, अकर्मण्य जज, भ्रष्ट पुलिस का रिमाण्ड होम, अण्डरवर्ल्ड सरगना, कठमुल्ला महन्त का शिकंजा आम आदमी पर कसता जाता है जिसकी परिणिति में वह या तो टुण्डा होता है या लाश –

अपनी नियति पर...
बाग़ और बाग़बाँ पर
तथा उन फ़िज़ाओं पर
जिनमें साँस लेते समय
उसके फेफड़े
मुक्त आकाश में
उन्मुक्त उड़ते पखेरू से फुदकते थे...

मोहभंग की स्थिति को परिहार ने एक दूसरे बिम्ब से चिन्तनपरक बना दिया है। समुद्र का सपना संजोने वाली मछली को ड्राईंग रूम में रखे फिश–टैंक से सिर फोड़ना और दूसरों के मनोंरंजन का साधन बनना पड़ता है –

अचानक उसे

मन की स्वतंत्रता का ख्याल आया था

और तभी

ड्रॉइंगरूम में रखे

ग्लास–टेंक में

सिर फोड़ती सुनहरी मछलियाँ

उसके जोहन में कौंध गई थीं

जो समुद्र के सपने संजोए

प्रदर्शन और मनोरंजन का साधन बन

तैर रही थीं

उनके लिए,

जिन्होंने देश को

आर्थिक बुलन्दी बख्शी है –

आम आदमी ने आज़ादी की हवा में साँस लेते हुए दो वक्त की रोटी चैन से मुहैया होने का सपना देखा लेकिन आँख खुली तो तन्त्र के घेरे में फंसकर अपनी सार्थकता सिर्फ वोटर के रूप में जानी। ऐसे वैचारिक बिम्ब के कारण तनाव की तीव्रता गहराई है जिसे और गहराने के लिए शहरी कवि, साहित्यकार, बुद्धिजीवी, पर व्यंग्य करते हुए महानगरीय सभ्यता की विसंगति को मार्क किया गया है –

वातानुकूलित कमरों में

अपने नर्म गुदगुदे सोफ़े पर बैठे

साहित्य संस्कृति और कला पर बतियाते

उन लोगों की साँसों में

उसे सड़े मांस की दुर्गन्ध आई थी –

उसकी आँखों में

तब झूल उठी थी

फुलकन्नी सी वह लाश

जिसे गटर का ढक्कन खुलते ही

शहर की ज़हरीली गैसों ने

ज़मीन पर पटक मार डाला था।

वातानुकूलित कमरों में अपने नर्म गुदगुदे सोफे पर बैठे साहित्य, संस्कृति और कला पर बतियाते तथाकथित बुद्धिजीवीयों और शहर की अप संस्कृति की जहरीली गैस ने ग्रामीण व्यक्ति और उसके संस्कारों को रौंद डाला है। कविता का एक अर्थ महानगरीय/शहरी सभ्यता के दुष्प्रभाव के व्यापक फैलाव को रेखांकित करता है अर्थात् लोकतन्त्र का गढ़ दिल्ली अराजक तन्त्र की केन्द्रीय धुरी बनकर गाँवों को बुनियादी सुविधाओं से दूर रखे हुए हैं –

ज़िन्दा लोगों को

जीने की हरकत में मुस्कराने

और आँखें बिछाने की मजबूरी ओढ़ते देख

कुमकुमों पर दौड़ती उस लाश को गश आ गयी थी

शहर की जहरीली गैस से लैश में तब्दील हुए गाँव, ग्रामीण संस्कृति और व्यवस्था के हाथों मरे अधकुचले लोगों को देख लाश को गश आने में फैण्टेसी का प्रयोग किया है –

ज़िन्दा लोथ को

जीने की हसरत में मुस्कराने

और आँखें बिछाने की मजबूरी ओढ़ते देख

कुमकुमों पर दौड़ती उस लाश को

ग़श आ गई थी

अविश्वसनीयता की सीमा तक पहुँचा हुआ यथार्थ इतना बड़ा और कड़वा होता है कि स्वयं सच भी विस्मित हो जाता है। ऐसे में कवि फैण्टेसी के सहारे भयावह स्थिति और उसके कारणों की पहचान करता है। टुण्डे आदमी के बयान से पहले फैण्टेसी के ज़रिए कई दृश्य बुने गये हैं जबकि बाद में ब्यौरों का बिम्बों के साथ संयोजन वैचारिक बन पड़ा है –

दर्द भरी चीखों और कर्कश गालियों से

समूची झोंपड़ी थरथरा उठी थी

जबकि शंकर का बफ़ादार बैल

झोंपड़ी के द्वार पर

चुपचाप बैठा

जुगाली करता रहा था

तब उसे

शंकर धोबी से भी अधिक

डस बैल पर क्रोध आया था

और लाठी से पीट पीटकर

उसकी चमड़ी उधेड़ने को मन चाहा था...

उस दिन सचमुच

उसे

अपने कटे हाथों के एहसास ने

बहुत सताया था –

परिहार किसी देवी–देवता में अंधश्रद्धा नहीं रखते संभवतः इसीलिए शंकर पार्वती–बैल

की व्याख्या और उनके बीच पनपते गैर ईमानदार रिश्ते की पहचान उन्होंने पुराणों के आधार पर न करके आधुनिक सन्दर्भ मे की है।

पार्वती की रक्तसनी चीखें और शंकर की गालियों के बीच दुष्कर्म से थथराती उस झोंपड़ी के बहार जुगाली करते उस बैल पर टुण्डे आदमी को क्रोध आता है कि लाठी से पीट–पीट कर उसकी चमड़ी उधेड़ दे। यह एक तरह का नपुंसक आक्रोश है क्योंकि यह क्रोध शंकर पर न आकर निष्क्रिय पड़े बैल पर है।

इसके बाद कवि इस साजिश में शामिल अण्डरवर्ल्ड, महन्त, पुलिस, कानून के परस्पर बंधे सूत्रों की पहचान करते हुए फैण्टेसी का ताना–बाना बुनता है। झोंपड़ी के करीब खंदक के पास गुफा, गुफा से फूटते अनेक रास्तों में एक रास्ता भूमितल (अण्डरग्राउण्ड) के सरगनाओं, एक राजनीति की मायानगरी तक जाता है और दोनों मिलकर महन्त के आश्रम तक पहुँचते हैं। शंकर की झोंपड़ी के एक तरफ इन रास्तों के होने से ही पार्वती की दर्दभरी–रक्तसनी चीखें अनसुनी कर दी जाती हैं।

परिहार ने भी भूमितल को मायानगरी और मायानगरी को महन्त के आश्रम में स्थानान्तरित करके राजनीतिक गुण्डों और धर्म के राजनीतिकरण को संकेतित करते हुए महन्त के भेष में उन तस्करों की खोजबीन की है जो दुनिया के हर मुल्क की करेंसी, सोने–चाँदी, हीरे–जवाहरात, शराब और नीले पदार्थों से लेकर मानव जीवन से खेलते हुए मानव अंगों की तस्करी करते हैं। इस बिन्दु पर ''हरे रामा हरे कृष्णा'' भजन की पंक्तियों से तनाव गहराया है। राजनेताओं की बीन पर मुंडे सिर की चोटियों द्वारा आह्लादित पिल्लों की पूंछों की तरह मस्ती में नाचने पर कवि व्यंग्य करता है कि देश को चलाने वाले नेता और मानव मूल्यों एवं धर्म की स्थापना करने वाले सारे परिदृश्य से बेखबर एक–दूसरे की पीठ खुजला रहे हैं।

धार्मिक कठमुल्लाओं, राजनेताओं के साथ पुलिस विभिन्न धर्मों को एक–दूसरे के विरोध में खड़ा करती है और न्याय धर्म का दास बनता है –

उसने देखा कि तब

पुलिस वालों ने हथियार डाल दिए थे

और ऊँचे आसन पर बैठे

और महंत के चरण स्पर्श कर

प्रसाद ग्रहण किया था

और उल्टे पाँव लौट पड़े थे

इस सारे दृश्य को देख टुण्डे आदमी की स्थिति भी उस लाश की तरह हो जाती है जिसे शहर की जहरीली गैस ने मार डाला था और जो रोशनी के कुमकुमों पर भागती चली जा रही है। टुण्डा आदमी खंदक के बाहर इसी लाश (जो शंकर के छप्पर से पार्वती की रक्तसनी चीखों को सुनकर रेत पर गिरी थी, अन्य धरातल पर जो पार्वती के साथ लोकतन्त्र की भी लाश है) पर गिरता है एक ज़िन्दा लाश (टुण्डे आदमी) का इस लाश के ऊपर गिरना संकेत करता है कि उसकी त्रासदी टुण्डे होने पर ही समाप्त नहीं हो जाती। यदि वह चश्मदीद बनकर देखता औार बयान देता रहा तो उसे भी लाश की तरह बना दिया जायेगा।

यहाँ तक कवि प्रवाचक रूप में माली और बहेलिए, तस्कर और महन्त, सरगना और राजनेता, टुण्डे आदमी और लाश का वर्णन करता है। इसके बाद संवाद की तीन और स्थितियाँ इस लम्बी कविता में मिलती हैं। पहला, ज़िन्दा लोगों को दफ़न करने वाले कब्रिस्तान बनाम कोर्ट में मौत का फ़रमान देकर मौत को सौंप दिये गये लोगों और टुण्डे आदमी के बीच संवाद। दूसरा, कोर्ट में टुण्डे आदमी का बयान। तीसरा, कुछ सार्थक करने की चाह में टुण्डे आदमी और उस लाश का संवाद जो किसी एक व्यक्ति या सिद्धान्त का न होकर विद्रोही, लोकतन्त्र, बलात्कार, अपसंस्कृति का शिकार, अपने अधिकारों के लिए जीने वाले का है।

कठघरे में खड़ी लाश का दोषी टुण्डे आदमी को सिद्ध किया जाता है। सवाल यह है कि क्या टुण्डा आदमी, किसी की हत्या स्वयं कर सकता है ? न्यायाधीश के इस प्रश्न, की क्या टुण्डा लाश को पहचानता है से धर्म, न्याय, भारतीय जनमानस को लाश में तब्दील कर दिये जाने की स्मृति टुण्डे के सामने कौंधती है जिसके चलते वह एक के बाद एक सात ब्यौरे देता है जिसका वह भुक्तभोगी और गवाह रहा है। लोकतन्त्र की परिणति मोहभंग और बुद्धिजीवी की टुण्डे के रूप में हुई। यहाँ अराजक न्यायपालिका की वीभत्सता का चित्रण है।

फैण्टेसी के सहारे इन पवित्र ग्रन्थों की सौगंध खा कर झूठ अधिक शक्तिशाली हुआ है और सच दफना दिया है। ज़िन्दा दफन कर दिये गये आम आदमी और झूठे होते जाते धार्मिक ग्रन्थों को मुक्त करने का दायित्व कवि और टुण्डे आदमी का है –

हमें भी इस नरक से निकालो –

हम बेकसूर बड़े पशेमान हैं

ऐसे में कवि का दायित्व बढ़ जाता है और उसे मालूम होता बेआवाज़ नारे उसे बुला रहे हैं लेकिन सभी के चेहरों पर मुर्दनी देख उसका तनाव बढ़ता जाता है।

'मैं उस देश का बाशिन्दा हूँ , हुजूर' पंक्ति की सात बार आवृत्ति हुई है। हर बार एक नया ब्यौरा जो बिम्बात्मक होने के साथ वैचारिक है, कविता में व्याप्त तनाव और व्यक्ति–व्यवस्था के सम्बन्ध को गहराता है। इस वर्णन से वर्तमान स्थिति का एक–एक चित्र खुलासा हुआ है –

और एक दूसरे की पहचान

इतनी खो चुका है

कि शिनाख्त करने का दस्तूर

महज़ एक औपचारिकता रह गयी है।

आज़ादी के साथ विरासत में मिली इस अव्यवस्था, गीता की झूठी कसमों, कर्म और विद्रोह की कटी बाजू, सच की ज़बान खींचने के दौर के चलते एक यह सोच भी विकसित हो गयी है कि नवजात शिशु की जबान काटकर काली ज़बान वाले कौए को खिला दी जाये। कम से कम उसकी काँव–काँव के अपशगुन के डर से तो कोई कांपे ताकि सच कहने वालों को सच कहने की टुण्डे आदमी की तरह कीमत न चुकानी पड़े–

अनुभवी माता

अपने नवजात शिशु की जबान काटकर

मुंडेर पर कौओं को बलि चढ़ाती है

और अपने कुलदेवता को रिझाती है

दरअसल ज़बान काटने वाली अनुभवी माताएं वह बहुत प्रतिशत है जो व्यवस्था के समक्ष किसी भी प्रकार का जोखिम न उठाकर सुरक्षित, आश्वस्त और चापलूस ज़िन्दगी जीने का अभ्यासी है।

तीसरी आवृत्ति में नेताओं की कथनी–करनी में अन्तर पर व्यंग्य किया गया है।

उनके लिए गरीबी हटाओ का नारा गरीब हटाओ और नेता की गरीबी हटाओ तक सीमित हो जाता है –

'शेम, शेम' के नारों से जूझते

बदलते रहते हैं दल

ठीक वैसे

जैसे बहारों का हितैषी गिरगिट

बदलता है तरह तरह के रंग।

इन नेताओं को कितना ही लताड़ो पर ये चिकने घड़े और सत्ता में आये दल के अनुसार रंग बदलने वाले गिरगिट हैं जो सत्ता के गलियारे में घूमते हुए किसी भी तरह कुर्सी को थाम लेना चाहते हैं। चौथी टेक में गरीबी की रेखा और भुखमरी की मार झेलते लोंगों का वर्णन है जो पेट भरने की जुगाड़ में अपने स्वाभिमान, वजूद, अपने होने तक के अहसास को भूल बैठे हैं। भारतीय जनमानस जिस तरह भ्रमों का शिकार होकर बहेलिए को माली समझ लेता है वैसे ही वे –

खुशी–खुशी ओढ़ लेते हैं

ग़लत–फहमियों के खिलाफ़

जिसमें होता है

विषैले साँपों का निवास

और भोगते रहते हैं जीवन भर

भयानक दंगों का अभिशाप।..

यहाँ पर आकर यह लम्बी कविता प्रारम्भिक अंश के साथ जुड़ जाती है। इसी प्रकार छठी टेक उस अंश से अन्वित हो जाती है जहाँ मुखौटाधारी तस्कर (महन्त), राजनेता, पुलिस गोली के जोर पर साम्प्रदायिकता की दीवार खड़ी करते हैं –

जहाँ मज़हब के नाम पर

होते हैं दंगल

और सियासत के नाम पर लोग

खींचते हैं एक दूसरे की लंगोटी

काटते हैं चोटी

जबकि के लिए क़तार

कश्मीर से कन्याकुमारी तक पहुँच चुकी है।..

नेता अपने दामन को देख दूसरों पर लांछन लगाते हैं और पूरे हिन्दुस्तान में कश्मीर से कन्याकुमारी, गुजरात से असम तक भूख ताण्डव करती रहती है। सातवीं टेक में कवि व्यंग्य करता है उन सुविधाभोगी, अवसरवादी,'एलीट' वर्ग पर जो आज के व्यवहार में अक्लमन्द कहे जरते हैं किन्तु जिन्हें अपनी वंश–परम्परा, सांस्कृतिक जड़ों की पहचान नहीं है –

जहाँ के अक़्लमन्द इन्सान

टेढ़ा मुँह करके

बड़े गर्व से बोलते हैं

उन लोगों की ज़बान

जिन्होंने उनके बाप दादाओं के

उज्ज्वल चहरों पर

गरम गरम सलाखों से

दागे़ थे गुलामी के निशान।

जो अंग्रेजी मानसिकता के चलते अमेरिका की आर्थिक गुलामी और यूरोप की 'मॉडर्न कल्चर' को अपनाये जा रहे हैं।

कवि निराश नहीं है। उसे विश्वास है कि ऐसे भुक्तभोगी जो टुण्डे और लाश बना दिये गये हैं वे ही लोगों में विद्रोह को कर्मशील बनाकर उसे भोंथरा होने से बचाये रख सकते हैं। विद्रोह को कर्म के धरातल पर व्यवहारिक रूप देने के लिए ज़रूरी है पहले स्वयं को लाश समझ, फिर सिर पर कफ़न बांध मुराड़ा हाथ में लेकर चला जाये और साथ ही टुण्डे होने अर्थात् हर सुख–सुविधा (जो पहले ही नहीं है जिसका सिर्फ भ्रम है) को भी दाव पर लगा देने की बात सोच ली जाये –

जब तक

इस अंधड़ को बाँधनेवाले

तुम्हारे हाथ नहीं उग निकलते

तब तक

न तुम अभिशाप से मुक्त हो सकते हो, न मैं।

इस लिए ठहरो

मैं भी तुम्हारे साथ चलता हूँ !

ऐसे बेखौफ़, ज़िन्दगी की बिसात पर कर्म की गोटियाँ खेलने वाले ही पुनः टुण्डे आदमी के हाथ उगा सकते हैं। दहशत, अपमान, लाचारी के बोझ तले मौत बनी ज़िन्दगी को आजादी के सही मायने समझाने का वक्त अब आ गया है क्योंकि टंण्डा आदमी और बेज़बान बोलती लाश ''दोनों मिलकर/गूंगे कवि के लिए/ढूँढ़ रहे हैं/एक अदद ज़बान।'' जो कवि सत्ता के गलियारे में दुम फटकारते चहलकदमी करते हुए अपना वास्तविक कवि कर्म (विद्रोही तेवर को जागृत करने) को भूल गये हैं वे यदि जागरुक हो जायें तो मनसा (टुण्डा आदमी), कर्मणा (ज़िन्दा लाश), वाचा (कवि) तीनों का संयोग अराजक व्यवस्था से मुक्ति दिला सकता है क्योंकि किसी भी कार्य की सिद्धि हेतु मनसा, वाचा, कर्मणा धरातल पर एक साथ क्रियाशील होना ज़रूरी है।

कवि और उसके शब्दों में परिहार को विश्वास है जिसमें आम आदमी चाहे टुण्डा, अनपढ़, गरीब, ज़िन्दा लाश ही क्यों न हो; महत्व रखता है। इस बिन्दु पर आकर परिहार को धूमिल की अगली कड़ी के रूप में देखा जा सकता है।

12.4 सारांश – राजनीति के धार्मिकीकरण और धर्म के राजनीतिकरण, अण्डरवर्ल्ड के वर्चस्व और कानून के अंधत्व से आम आदमी के टुण्डेपन की पहचान यहाँ की गई है।

12.5 कठिन शब्द – भाई भतीजावाद, अराजक तेवर, सरगना, बाशिन्दा, बिसात

12.6 अभ्यासार्थ प्रश्न–

प्र01 'टुण्डे आदमी का बयान' लम्बी कविता आज़ाद भारत का यथार्थ है, सिद्ध कीजिए।

.....

.....

.....

प्र02 विवेच्य कविता के आधार पर धर्म, अंडरवर्ड, कानून का सम्बन्ध समझाइए।

.....

.....

.....

प्र03 लम्बी कविता के तत्वों के आधार पर 'टुण्डे आदमी का बयान' का विवेचन कीजिए।

.....

.....

.....

12.7 पठनीय पुस्तकें –

1) कैनवास पर फैलते रंग – बसन्तकुमार परिहार

2) बीसवीं शताब्दी की उत्कृष्ट लम्बी कविताएं – डॉ. नरेन्द्र मोहन

3) लम्बी कविता : नये सन्दर्भ – डॉ. रजनी बाला

लम्बी कविता के तत्वों के आधार पर 'हरिजन–गाथा' की समीक्षा

13.0 रूपरेखा

13.1 उद्देश्य

13.2 प्रस्तावना

13.3 लम्बी कविता के तत्वों के आधार पर 'हरिजन गाथा' की समीक्षा'

13.4 सारांश

13.5 कठिन शब्द

13.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

13.7 पठनीय पुस्तकें

13.1 उद्देश्य

आज़ादी के बावजूद निम्न जाति के लोगों को जिन्दा जला दिए जाने की वास्तविक घटना से इस लम्बी कविता का तनाव कारूणिक और विक्षोभ वाला है। यहीं पर ध्यान देने की बात है कि विद्यार्थी निम्न वर्ग में ही संघर्ष और विद्रोह की आशावान् पहचान भी कर सकेंगे।

13.2 प्रस्तावना

'ऐसा तो कभी नहीं हुआ था' पंक्ति की पुनरावृत्ति से खुलने वाले तनावमय ब्यौरे पाठकीय चेतना को झकझोरते हैं जिनका यथार्थ चित्रण इस लम्बी कविता को अन्वित प्रदान करता है।

13.3 लम्बी कविता के तत्वों के आधार पर 'हरिजन गाथा' की समीक्षा'

बीसवीं और इक्कीसवीं सदी में भी समाज में न्याय, समानता की धज्जियां उड़ते हुए देखी जा सकती हैं। इस असमानता का सर्वाधिक शिकार दलित समाज हुआ है। इतिहास गवाह है कि वैदिक काल की वर्णाश्रम व्यवस्था के युग से ही हरिजन हाशिये पर खदेड़े जाते रहे हैं। रोटी की जुगाड़ में उन्होंने सिर पर मैला ढोया है और पानी की बूँद की एवज में सवर्णों के चाबुकों ने उनका खून बहाया है। बंधुआ मजदूरी से लेकर ज़िन्दा जला दिये जाने का अपमान और दर्द उन्होंने सहा है। दलित विमर्श की बहुआयामी पहचान हिन्दी की लम्बी कविताओं में भी हुई है।

लम्बी कविता में दलित विमर्श का अर्थ यह कतई नहीं है कि वह केवल दलित लेखकों की प्रस्तुति मात्र है अपितु दलितों के प्रति संवेदना और उनकी विभिन्न संकल्पनाओं को रूपायित करने वाली दृष्टि ज़रूरी है। फिर वह दृष्टि चाहे किसी दलित लेखक की हो या अन्य वर्ण की – इस पर बहुत ज़्यादा बल देने या सोचने की ज़रूरत नहीं है।

नागार्जुन जन–जीवन के कवि हैं और उन्होंने अपनी प्रायः कविताओं में जनमत के स्वरों को सशक्त अभिव्यक्ति देते हुए क्रान्तिकारी चेतना को जन्म देने की आकांक्षा व्यक्त की है। यह सच है कि वे भारतीय जनता के दुःख–दर्दों को और उनके जीवन एवं समाज में व्यक्त वैषम्यों को अपनी कविता में वाणी देते हैं लेकिन मूल रूप में यदि देखें तो समाज के उपेक्षित वर्ग के प्रति कवि की दृष्टि प्रायः अधिक सहानुभूतिपूर्ण रही है। यह सहानुभूति सिर्फ सैद्धान्तिक नहीं है बल्कि उनकी यह चाहत रही है कि उसकी शक्ति को उभार कर उन्हें विजय की ओर अग्रसर किया जाए। वे यह भी जानते हैं कि यह अत्यन्त कठिन कार्य है लेकिन संघर्षों, विषमताओं एवं बाधाओं से ही नया व्यक्तित्व जन्म लेगा और वह भावी इतिहास का निर्माण करेगा ऐसी कवि की आस्था है और उसका विश्वास है और उसी आस्था और विश्वास को प्रतिफलित करने के लिए या साकार रूप देने के लिए कवि ने अपनी कविताओं में भावी इतिहास की कुछ सार्थक कल्पनाएं की हैं।

'हरिजन गाथा' एक ऐसी ही लम्बी कविता है जिसमें सामाजिक यथार्थ की सशक्त अभिव्यक्ति हुई है। इसमें जिस निम्नवर्ग के तेजस्वी बालक की कल्पना की गई है। यह कवि की सिर्फ कल्पना नहीं है बल्कि उसकी आस्था और विश्वास का, उसकी सक्रिय चेतन का मूल रूप भी है क्योंकि कवि को आशा है कि यही निम्नवर्ग का बालक आगे चलकर निम्नवर्ग का नायक बनेगा, उसमें क्रान्तिकारिता की भावना का उदय होगा,

और यह बालक जन–मन का उद्धारक भी बनेगा।

यहाँ नागार्जुन का एक सचेत रचनाकार का रूप देखने को मिलता है और जो साहित्य को अभिजात्य वर्ग से बाहर निकाल कर जनसाधारण के बीच खड़ा करता हुआ दिखायी देता है। दलित जीवन की समस्याओं पर केन्द्रित उनके ऊपर होने वाले अत्याचारों से जुड़ी कविता इस बात का द्योतक है कि नागार्जुन सदैव पीड़ित एवं शोषित जन के पक्षधर रहे हैं–रचना में भी और जीवन में भी। उनकी काव्य–यात्रा सचेत अर्थों में निम्नवर्ग से ही होकर चलती है। वे उस वर्ग के साथ सिर्फ सहानुभूति के स्तर पर नहीं जुड़ते बल्कि वे खुद भी उनके साथ भोक्ता रूप में आगे बढ़ते हैं।

यथार्थ पर आधारित यह कविता इस सत्य का पर्दाफाश करती है कि जाति–पाति और वर्ण–व्यवस्था की घृणित कथा आज भी जीवन एवं समाज के बीच किसी–न–किसी रूप में बनी हुई है दलितोद्धार के सभी स्वप्न लगभग दिखावे साबित हुए हैं। यह हमारे समाज का जीता–जागता इतिहास है जो अनेकानेक अमानुषिक स्थितियों–परिस्थितियों को बेनकाब करता है।

अस्सी के दशक में बिहार के कई गाँवों जैसे पन्तनगर, बेलची, बेलागढ़, राजगढ़, विश्रामपुर, मग्गह, गिरिडीह जिनमें भूमिहर ब्राह्मणों या यों कहें कि जमींदार ब्राह्मणों का वर्चस्व था उसके चलते एक के बाद एक कड़ी के रूप में दलितों को ज़िन्दा जलाया गया। भारतीय इतिहास का यह वह समय है, जब देश अनेक प्रकार के सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक अन्तर्विरोध से गुजर रहा था। कुछ समय पहले 1975 में आपातकाल लगाया गया था, उसके बाद से एक विद्रूप यथार्थ परिवेश सारे देश का सच बना।

'हरिजन' गाथा का आरम्भ ही एक अपरिमित तनाव, अकुलाहट, बेचैनी और गहरे व्यंग्य के साथ होता है। आरम्भिक पंक्ति *'ऐसा तो कभी नहीं हुआ था !'* के साथ पाठक पूरी कविता के समानान्तर बहता चलता है, इस तलाश में कि कैसे और क्या हुआ जो आज तक नहीं हुआ। जो न कभी देखा, न कभी सुना। एक जिज्ञासा और कौतुहल से शुरू होने वाली यह पंक्ति एक बेचैनी और सुगबुगाहट का रूप लेती हुई पूरी कविता की धुरी बन जाती है। इस लम्बी कविता के कुल तीन अन्तरालों में से पहले अन्तराल में इस पंक्ति की पाँच बार आवृत्ति होती है। प्रत्येक टेक के साथ एक नया ब्यौरा जो बेहद विचारपरक है, तनावपूर्ण और अराजक माहौल को रूपायित करता है। दो उदाहरण देखिए –

ऐसा तो कभी नहीं हुआ था !

महसूस करने लगीं वे

एक अनोखी बेचैनी

एक अपूर्व आकुलता

उनकी गर्भकुक्षियों के अन्दर

ऐसा तो कभी नहीं हुआ था कि

हरिजन–माताएं अपने भ्रूणों के जनकों को

खो चुकी हों एक पैशाचिक दुष्कांड में

'ऐसा तो कभी नहीं हुआ था' पंक्ति कविता के पहले अन्तराल में ही आती है। इसके बावजूद इसकी ध्वनि कि जो हुआ ऐसा कभी नहीं हुआ या ऐसा होगा कभी सोचा न था का भाव पूरी कविता में विद्यमान रहता है जो अन्विति का काम करता है।

हरिजन–गाथा में मग्गह के जिस बदनाम इलाके और पाँच महीने तक चलने वाले अग्निकाण्ड का ज़िक्र किया गया है, वह अब झारखण्ड में है। नागार्जुन ने मग्गह और उसके आस–पास के गिरिडीह गाँव की ऐसी ही सच घटना से जन्मी दहशत, मानवता को शर्मसार करने वाली वर्ण व्यवस्था से जुड़ी छिछली मानसिकता को उभारा है।

होलिका दहन की तरह दिनों, हफ्तों पहले सरेआम इस अग्निकाण्ड की योजना बनायी जाती है और होली वाले 'सुपर मौज' की मूड में तेरह दलितों को ज़िन्दा आग में झोंक दिया जाता है। क्यों झोंका जाता है इसका कारण कवि ने स्पष्ट नहीं किया। ऐसे पैशाचिक अग्निकाण्ड के कई कारण हो सकते हैं जिन पर पाठक विचार करता है। संभवतः उच्च वर्ग अपना वर्चस्व और आतंक बनाये रखने के लिए ऐसा करता है। यदि निम्न वर्ग के किसी व्यक्ति ने उनके सामने बोलने या खड़े होने का दुस्साहस किया तो उनके लिए चिताकुण्ड तैयार है। हो सकता है इस वर्ग में विद्रोह का धुआं देख कर ही उच्च वर्ग अपने खिलाफ उठने वाली विद्रोहाग्नि की कल्पना कर आदमी को लोथों में तब्दील करने की योजना बनाता हो। नसों में सनसनी और दिल में दहशत भर देने वाले इस अग्निकाण्ड से पाठक स्वयं को पूरी कविता में झुलसा हुआ महसूस करता है।

इस कविता की खास बात यह है कि नागार्जुन ने पलकों रहित अनछिप आँखों को एक सपना दिखाया है और इसकी पूर्ति के लिए वे हिंसा (मार्क्सवाद), अहिंसा (गांधीवाद), सम्पूर्ण क्रान्ति (जयप्रकाश नारायण के जनवादी स्वर) का समवेत प्रयोग ज़रूरी मानते हैं –

'श्याम सलोना यह अछूत शिशु
हम सब का उधार करेगा
अजी, यही सम्पूर्ण क्रान्ति का
बेड़ा सचमुच पार करेगा
हिंसा और अहिंसा दोनों
बहनें इस को प्यार करेंगी
इसके आगे आपस में वे
कभी नहीं तकरार करेंगी...

सवर्णों द्वारा दलितों को ज़िन्दा जला दिये जाने की समस्या से शुरू हुई कविता समाधान की भरसक संभावना के साथ समाप्त होती है। इस कविता की खासियत यह है कि नागार्जुन ने दलित समाज को उच्च वर्ग के सामने निरीह प्राणी की तरह कहीं भी गिड़गिड़ाते, रिरियाते नहीं दिखाया। वे जानते हैं कि उन गीदड़ों, भेड़ियों के सामने हाथ–पैर जोड़ने और अपनी रीढ़ को उनकी टेबल बना देने के बावजूद कोई फायदा नहीं है। एक अन्य कारण यह भी हो सकता है कि हरिजन भी अन्ततः इंसान हैं इसी कारण उनमें इतना स्वाभिमान बचा हुआ है कि वे बेशक ज़िन्दा जला दिये गये पर झुके नहीं।

कविता के मूल में कवि ऐसे घटना प्रसंग का उल्लेख करता है जिसमें तेरह हरिजनों को जिन्दा जला दिया गया था। कवि की दृष्टि में क्रूरता की यह पराकाष्ठा थी। मानवीय अत्याचार की ऐसी घटना इस रूप में पहले शायद घटित हुई हो। हरिजन माताएं जिनके पति अमानवीय दुश्चक्र के शिकार हुए, बेचैन हो उठी उनकी कोख में पलने वाला भ्रूण अचानक उत्तेजित हो उठा। पुलिस स्टेशन घटनास्थल से मात्र 10 मील दूर था। संभावित दुर्घटना के विषय में कई बार आशंकायें इलाके के दरोगा तक पहुँचा दी गयी थीं। अग्निकांड की तैयारी खुलेआम लगातार चलती रही –

और एक विराट चिताकुण्ड के लिए

खोदा गया हो गड्ढा हंस–हंसकर

और ऊंची जातियों वाली वो समूची आबादी

आ गई हो होली वाले 'सुपर मौज' के मूड़ में

और, इस तरह जिंदा झोंक दिए गये हों

तेरह के तेरह अभागे मनुपुत्र

उत्साह में भरकर साधन सम्पन्न ऊँची जाति वालों ने मिट्टी के तेल, मोटे–मोटे लक्कड़, उपले,घास–फूस जुटाये। अपने दुष्कृत्य को सम्पन्न करने के लिये गहरा गड्ढा खोदा गया तथा सब की उपस्थिति के बीच तेरह हरिजनों को जिन्दा जला दिया गया। ऐसे भयानक वातावरण के बीच हरिजन टोले में एक बालक जन्म लेता है, टोले के दो बुजुर्ग उसे देख आश्चर्यचकित थे –

चकित हुए दोनों बुजुर्ग

ऐसा नवजातक

न तो देखा था, न सुना ही था आज तक !

पैदा हुआ दस रोज पहले अपनी बिरादरी में

क्या करेगा भला आग्र चलकर ?

राम जी के आसरे जी गया अगर

कौन–सी माटी गोड़ेगा ?

कौन–सा ढेला फोड़ेगा ?

ऐसे विलक्षण शिशु को उन्होंने पहले न देखा और न सुना था। उनकी स्वाभाविक चिन्ता का विषय यह है कि इस बालक का भविष्य क्या है। ईश्वर कृपा से यह नौनिहाल जीवित भी रह गया तो जमीन के किस टुकड़े की गुड़ाई करेगा, ढेला फोड़ेगा ? मग्गह का यह संवेदनहीन क्षेत्र इस बालक से जाने कैसा व्यवहार करेगा ? जन्म से असहाय, अभावग्रस्त यह नवजात शिशु भूमिहीन बंधुआ मजदूर के घर उत्पन्न होकर हैवानों जैसा जीवन गुजारेगा। इसके जीवन की न कोई दशा होगी न दिशा। यह वनमानुष की तरह इधर से उधर भटकेगा, इसे भरपेट भोजन तथा पूरा वस्त्र भी नसीब नहीं होगा। चिन्ता

तो यहाँ तक है कि यह तुतलाकर बोलेगा या स्पष्टतापूर्वक सब कुछ अस्पष्ट है। ईश्वर ही इसकी रक्षा कर सकता है।

निर्मम हत्याकांड के सभी लोगों को भयाक्रान्त कर दिया है। बड़े बुजुर्गों की आँखों से नींद ही गायब है। दोनों बुजुर्ग परस्पर वार्तालाप करते हुये निर्णय लेते हैं कि इस शिशु का हाथ ज्योतिषी को दिखायेंगे। वही इसकी किस्मत बता सकते हैं। ज्योतिषी के रूप में संत गरीबदास का आगमन हरिजन टोली में होता है, फिर तो भविष्य की दुनिया खुलती जाती है। वह बालक जो क्रांतिकारी होगा। पृथ्वी पर अन्याय मिटाने का काम करेगा, इसे व्यापक जन समर्थन प्राप्त होगा, और यह पूरे वर्ग का नेतृत्व करेगा। इस बालक को तुम लोग झरिया भेज दो। वहीं खान की खुदाई करने वाले मजदूरों के बीच पल–बढ़कर बड़ा होगा। तुम इसे यहाँ से हटा दो। यदि इसकी उपस्थिति के विषय में भूपतियों को पता चल गया तो एक नया दुर्भाग्य समझो।

इसके यहाँ जनशक्ति व धनशक्ति दोनों रहेगी। मानवीय सहानुभूति इसका सच्चा स्वर होगा। सामाजिक समत्व की स्थापना इसके जीवन का वास्तविक मुद्दा होगा। इससे चोर, उचक्के, डाकू भयभीत रहेंगे। इसकी अपनी पार्टी होगी। यह अछूत पुत्र पूरे वर्ग का उद्धार करेगा। इसके ही प्रयासों से सम्पूर्ण क्रान्ति घटित होगी। हिंसा व अहिंसा दोनों वृत्तियों से इसका स्वाभाविक तादात्म्य होगा। समस्त भविष्यवाणी व्यक्त करने के पश्चात् संत गरीबदास नवजात शिशु का प्रखर मस्तिष्क सूंघने लगे। भाव–विह्वल होकर गहरी सांसें खींच रहे थे। वे अग्निकांड की स्मषतियों में खो गये थे। निम्न वर्ग पर उच्च वर्ग का ऐसा अमानवीय दुष्कृत्य पहले नहीं घटित हुआ था। शिशु के दाएं हाथ की हथेली में गरीबदास को खुखरी, बम, गंडासा, भाला जैसे हथियार दिखाई दिये। गरीबदास की अंतरात्मा कह रही थी – भविष्य में दलित माताओं के पुत्र क्रान्तिकारी बनेंगे वे अग्निपुत्र इतिहास के निर्णायक युद्ध में साथ–साथ भाग लेंगे। यह शिशु तो वराह का अवतार है –

दिल ने कहा–दलित माँओं के

सब बच्चे अब बागी होंगे

अग्निपुत्र होंगे वे, अन्तिम

विप्लव में सहभागी होंगे

दिल ने कहा – अरे, यह बच्चा

सचमुच अवतारी वराह है

इसकी भावी लीलाओं का

सारी धरती चारागाह है

दलित तो अन्याय व शोषण को सहते आ रहे हैं पर बालक दलित वर्ग का नेतृत्व करेगा। यह नवीन ऋचाओं का निर्माता, नये वेद का गायक होगा, इसकी कथनी–करनी में एकता होगी, घर–घर में लोग उसके चित्रों को लगायेंगे। यह शोषण के विरुद्ध उठ खड़ा होगा।

खदेरन व बुद्धू नामक बुजुर्गों में संवाद पुनः प्रारम्भ होता है। दोनों निर्णय लेते हैं कि नवजात शिशु को अन्यत्र कहीं ले जाया जाये। बुद्धू पूछता है, ''झरिया, गिरिडीह, बोकारो कहाँ रखा जाय इस बालक को ? जहाँ अपनी बिरादरी के कुली–मजदूर होंगे वहीं कुछ समय बाद सुखिया कोई न कोई काम पर जायेंगी। इसका लालन–पालन होता रहेगा।'' बुद्धू अपने छप्पर की ओर बढ़ रहा था लेकिन नवजात शिशु की हथेलियों को देखते हुए संत गरीबदास द्वारा कहे गये विविध हथियारों क नाम उसके मस्तिष्क में गूंजते रहे हथियारों के नाम –

बढ़ आया बुद्धू अपने छप्पर की तरफ

नाचते रहे लेकिन माथे के अन्दर

गुरु महाराज के मुँह से निकले हुए

हथियारों के नाम और आकार–प्रकार

खुखरी, भाला, गंडासा, बम, तलवार..

तलवार, बम, गंडासा, भाला, खुखरी..

इसी बिन्दु पर आकर यह लम्बी कविता पाठक को विचार हेतु खुला छोड़ देती है। वह स्वयं सोचे की खदेरन के सुझाव पर बालक और उसकी माँ को जन्मभूमि से दूर ले जाया गया होगा अथवा उसी बस्ती में रहकर अब तक झेले गये अग्निकाण्डों का जवाब देने की भूमिका तैयार की गयी होगी।

नागार्जुन ने चमर बस्ती में पैदा होने वाले इस 'कलुए' में अप्रत्यक्ष रूप से कंस के संहार हेतु जन्म लेने वाले कृष्ण की झलक देखी है –

होंगे इसके सौ–सौ योद्धा

लाख–लाख जन अनुचर होंगे

होगा कर्म–वचन का पक्का

फोटो इसके घर–घर होंगे

दिल ने कहा – अरे इस शिशु को

दुनिया भर में कीर्ति मिलेगी

इस कलुए की तदबीरों से

शोषण की बुनियाद हिलेगी

सामूहिक मनस और जन संस्कृति में बसे कृष्ण अवतार के मिथकीय आधार पर भविष्यवाणी के सहारे यहाँ आशावादी स्वर गूँजा है। भविष्य बांचने वाले सन्त गरीबदास दरअसल कवि का ही प्रतिरूप हैं। यह सन्त जन्मपत्री बनाकर रकम ऐंठने वाले ब्राह्मण नहीं बल्कि चमार जाति के गुरु महाराज हैं, जो बच्चे के संरक्षण हेतु साठ रूपये देते हैं और आगे भी देते रहेंगे कविता के अन्त में इसका संकेत है। इस प्रकार स्वयं संघर्ष करने में बेशक सक्षम न हो किन्तु तन, मन, धन से जो सहायता संभव हो उसके अवसर तो जुटाए ही जा सकते हैं।

नागार्जुन ने विप्लव की सफलता के लिए विद्रोही जनवादी स्वर के साथ गाँधीवाद और मार्क्सवाद को ज़रूरी माना जिससे एक विचारधारा की अतिवादिता या अभाव को दूसरे के विचार से भरा जा सके।

क्रान्ति के लिए कौन से साधन, कैसी सोच अवसर चाहिए इसे दूसरे अन्तराल में स्पष्ट किया गया है। यहाँ बार–बार 'दिल ने कहा' पदबंध के बाद वे भविष्यवाणियाँ की गयी हैं जिन्हें कवि व्यावहारिक रूप में गतिशील होते देखना चाहता है।

तनाव की शृंखला तीसरे अन्तराल में भी चलती है। शिशु को कहाँ किसके पास रखे, सुरक्षित कैसे पहुँचाने के बाद उस की माँ सुखिया और उसका भरण–पोषण कैसे होगा जैसी चिन्ताएं उन्हें आकुल किये रहती हैं –

कहाँ रखोगे छोकरे को

वहीं न ? जहाँ अपनी बिरादरी के

कूली–मजूर होंगे सौ–पचास ?

चार–छह महीने बाद ही

कोई काम पकड़ लेगी सुखिया भी

इस लम्बी कविता की समाप्ति तलवार, बम, गड़ास, भाला, खुखरी जैसे हथियारों से हुई है। ज़ाहिर है कविता की अन्तिम पंक्तियाँ पाठक की चेतना में सशस्त्र क्रान्ति का बिगुल बजाती हैं।

पहले अन्तराल में कवि द्वारा प्रवाचक रूप में एक टेक का निबाहना, दूसरे अन्तराल में सन्त गरीबदास का अपने दिल की गवाही देते हुए आत्मालाप, तीसरे अन्तराल में बुद्धू–खदेरन के संवाद में बुनी नाटकीयता के साथ क्रान्ति के व्यावहारिक रूप की सार्थकता को लेकर उधेड़बुन तनाव की उपस्थिति को तीनों अन्तरालों में अन्वित करती है।

पहले अन्तराल में तनाव के साथ दहशत है। खून को जमा देने वाला खौफ़नाक मंजर, दिल दहला देने वाला पैशाचिक नरमेध अग्निकाण्ड, नसों में सनसनाहट पैदा करने वाले अजन्मे शिशु तनाव को चरम सीमा तक ले जाते हैं।

दूसरे अन्तराल में तनाव के साथ स्वप्न हैं भविष्यवाणी के कारण यहाँ तनाव चरम नहीं है किन्तु क्रान्ति के अग्रदूत के साथ क्या–क्या हो सकता है इस कल्पना से तनाव बराबर स्वप्न के बावजूद बना रहता है।

तीसरे अन्तराल की प्रारम्भिक पंक्तियों में भाग्यवान् मनु पुत्रों द्वारा किये गये नरसंहार और इस शिशु के सिर पर आने वाली आपदाओं के कारण तनाव है किन्तु इसका संचरण उस तनाव में हो गया है जो शिशु के संरक्षण और भरण–पोषण से जुड़ा है। इस प्रकार तीनों अन्तरालों में तनाव क्रमशः कमतर होता गया है और अन्ततः एक आश्वासन , विश्वास और संभावना के साथ कविता समाप्त होती है।

'हरिजन–गाथा' सरल और सीधी बेशक हो लेकिन सपाट नहीं है। इसकी गद्यात्मकता में छिपी काव्यगत एवं अर्थगत लय पाठक को अन्त तक अपने साथ बहाये और बनाये रखती है। पूरी कविता में वक्तव्य शैली है जो कथन का ज़रिया मात्र है क्योंकि नागार्जुन ने पात्र और घटना के दोनों धरातलों पर नाटकीयता बनाये रखी है। 'हरिजन–गाथा' में ज़िन्दा जला दिये गये हरिजनों और उनके उद्धारक की कल्पना के बीच तनाव की कनियां घूमती रहती हैं लेकिन इतना ज़रूर है कि यह तनाव कविता के शब्द से छनता

हुआ पाठक की चेतना को पूरी तरह अपनी गिरफ्त में ले लेता है। इतनी सीधी, सरल और एक प्रकार की गद्यमयी भाषा, विधायक टेक *'ऐसा तो कभी नहीं हुआ था,'* टेक की ब्यौरेवार आवृत्ति *'दिल ने कहा–'* और बुद्धू खदेरन के संवाद के बीच से दलित समाज से जुड़ी घटना और तनाव का हमारे अपने युग, परिवेश और अपने वजूद के बीचों बीच खड़ा हो जाना बड़ी बात है।

13.4 सारांश – आम आदमी के तनाव और त्रास को उसी के दृश्यों और रूपों में खोलने की तकनीक 'हरिजन गाथा' को विशिष्ट लम्बी कविता बनाती है।

13.5 कठिन शब्द – निरीह, रिरियाते, वराह अवतार, सामूहिक मनस, विप्लव, विधायक टेक

13.6 अभ्यासार्थ प्रश्न –

प्र01 'हरिजन–गाथा' में वर्णित तनाव के कारणों को समझाइए।

.....

.....

.....

प्र02 'हरिजन–गाथा' के संवादों में अभिव्यक्त नाटकीयता पर प्रकाश डालिए।

.....

.....

.....

प्र03 लम्बी कविता के तत्वों के आधार पर 'हरिजन–गाथा' का वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

13.7 पठनीय पुस्तकें –

1) खिचड़ी विप्लव देखा हमने – नागार्जुन

2) प्रतिनिधि कविताएं नागार्जुन – नामवर सिंह (सं.)

3) बीसवीं शताब्दी का उत्कृष्ट साहित्य : लम्बी कविताएं– डॉ. नरेन्द्र मोहन

4) नयी कविता की लम्बी कविताएं – रामसुधार सिंह

5) समकालीन कविता की पहचान – युद्धवीर धवन

6) नागार्जुन का काव्य एक नव मुल्यांकन – जे.बी.ओझा

7) लम्बी कविता : नये संदर्भ – डॉ. रजनी बाला

लम्बी कविता के तत्वों के आधार पर 'ब्रूनो की बेटियाँ' की समीक्षा

14.0 रूपरेखा

14.1 उद्देश्य

14.2 प्रस्तावना

14.3 लम्बी कविता के तत्वों के आधार पर 'ब्रूनो की बेटियाँ' की समीक्षा'

14.4 सारांश

14.5 कठिन शब्द

14.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

14.7 पठनीय पुस्तकें

14.1 उद्देश्य

शोषक वर्ग के दमन के बावजूद विद्रोह को कभी दबाया नहीं जा सकता। संघर्षरत व्यक्ति का कर्म सदा नए विद्रोहियों को जन्म देता है। इस प्रक्रिया की पहचान लम्बी कविता के तत्वों के आधार पर इस पाठ में की गई है।

14.2 प्रस्तावना

'ब्रूनो की बेटियाँ' में ब्रूनों, स्त्री, ग्रामीण, सच बोलने वाला इन्सान जैसे विभिन्न संदर्भों को मौत की दहशत अन्वित करती है। विभिन्न परिदृश्य ब्रूनो की हत्या के यथार्थ प्रसंग से जुड़कर इस कविता को विशिष्ट लम्बी कविता बनाते हैं।

14.3 लम्बी कविता के तत्वों के आधार पर 'ब्रूनो की बेटियाँ' की समीक्षा

आख्यान और कथा–सूत्रों को लेकर बहुत सी लम्बी कविताएं लिखी गयीं किन्तु

आलोकधन्वा की **ब्रूनो की बेटियाँ** का वैशिष्ट्य यह है कि कविता में कहीं भी ब्रूनो का नाम नहीं है फिर भी वह पूरी कविता में ताने–बाने की तरह बुना हुआ है। पाद टिप्पणी के रूप में ब्रूनो की हत्या का कारण पूरी कविता के माहौल को मौत की दहशत से भर देता है, जो वैचारिक अन्विति का काम करता है। बिम्बात्मक अन्विति में इस मनोभाव से जुड़े संदर्भ हैं। प्रतीकों की भरमार है जिनके अर्थों को खोले बिना कविता के मर्म तक नहीं पहुँचा जा सकता। आलोकधन्वा ने सीधे–सीधे प्रश्न करके नाटकीयता उत्पन्न की है। अन्य किसी पात्र की संवाद योजना से इस शैली को व्यंजित नहीं किया है।

आलोकधन्वा का विचार है कि सत्य और संघर्ष शाश्वत होते हैं और इन्हें नष्ट नहीं किया जा सकता। शोषक वर्ग सदा से संघर्ष करने वालों के दमन का प्रयास करता रहा है, परन्तु दमन के बाद भी आम आदमी के संघर्ष को वह कभी मिटा नहीं पाया क्योंकि संघर्ष करने वाले व्यक्ति का संघर्ष सदा से नये विद्रोहियों का मार्ग दर्शन करता रहा है और नए विद्रोही पैदा होते रहे हैं। संघर्ष करने वाला वर्ग कभी समाप्त नहीं हो सकता। संघर्षशील व्यक्ति के विचारों और विद्रोह का महत्त्व होता है। वे अनर्गल नहीं होते। आम आदमी शांतिप्रिय होता है परन्तु उसके शोषण का प्रयास करने वालों के विरुद्ध संघर्ष का सामर्थ्य एवं अपनी सुरक्षा के हथियार भी उसके पास मौजूद होते हैं।

ब्रूनो जिसने धार्मिक जड़ता को ललकारा और ब्रूनो की बेटियाँ अर्थात् परिवर्तन की इच्छा रखने वाले, दमनकारी शक्तियों का नाश करने वाले, दुनिया से अलग देखने एवं सोचने वाले वे चाहे लड़कियाँ हों, मज़दूर हों, उपेक्षित पीड़ित मानव हो जो धर्म, समाज, परिवार, राजनीति सभी धरातलों पर समायी रूढ़ियों के सामने चुनौती प्रस्तुत करने वाले हैं। परिवर्तन की इच्छा, नवीन शोध और खोज की जिज्ञासु प्रवृत्ति आदमी में सृष्टि के साथ पली–बढ़ी है। इसकी कीमत वह आदम और हौवा के जमाने से चुकाता आया है। उन्हें ईश्वर द्वारा निषेधित फल को चखने की सजा मिलती है। वे दण्डस्वरूप धरती पर आकर अभिशप्त मानव की पीड़ा को अब तक झेलते आ रहे हैं लेकिन इसका सकारात्मक परिणाम यह भी हुआ कि मानव संस्कृति का विकास हुआ, अन्यथा ईश्वर द्वारा रची सृष्टि का गवाह कौन बनता है ? आदम और हौवा भौतिक रूप में नहीं रहे लेकिन उनकी उपस्थिति सम्पूर्ण विश्व में उनकी संततियों के रूप में है।

यह जो जज़्बा है कि मृत्यु के बाद भी लोगों की स्मृति में बने रहेंगे परिवर्तन की इच्छा जगाता है। जाने हुए को पहचानने की प्रेरणा देता है। यह अलग बात है कि इस पहचान में कई बार ऐसे सत्य सामने आते हैं जो किसी खास वर्ग या व्यवस्था के नंगे

सच को सामने लाते हैं और तब शुरू होता है पाये हुए सत्य और स्थापित मान्यता का संघर्ष जिसमें कभी–कभी सत्य की पहचान कराने वाले को मिटाने का षड्यन्त्र रचा जाता है। इस लम्बी कविता के केन्द्र में यही मनोभाव है जिसका केन्द्रीय प्रतीक और चरित्र ब्रूनो बना है।

ब्रूनो ने कहा कि हमारी पृथ्वी की भी और पृथ्वियाँ हैं। इस नवीन संकल्पना से रूढ़िवादी धार्मिक मान्यता बौखला क्यों उठी ? अन्ततः पूरी पृथ्वी तो वैसी की वैसी ही है। उसे ब्रह्माण्ड की कोई पृथ्वी नहीं छीन सकती, फिर इस नयी सोच को प्रश्रय देने वाले (मातृत्व) को ईसाई धर्म न्यायालय के आदेश पर जिन्दा क्यों जला दिया ? वे नहीं चाहते थे कि उनकी जड़ मान्यता कि पृथ्वी स्थिर है (गाँव) को चुनौती देने के लिए नवीन दृष्टि (पूरी दुनिया) आये क्योंकि उससे उनके आतंक और वर्चस्व को क्षति पहुँचती थी। इसी तरह गंगा के मैदानों (भारत) में काम करने वाली मजदूर औरतों को जब बीज, पानी और ज़मीन के सही रिश्तों की पहचान होने लगी तो उन्हें ज़िन्दा जला दिया गया। यहाँ से कविता में विचार का आग्रह बढ़ता जाता है। कवि सीधे पाठक को इस सारे घटनाक्रम में शामिल करता हुआ उस पर प्रश्न दागता है :

किस देश की नागरिक होती हैं वे

जब उनके अस्तित्व के सारे सबूत मिटाये जाते हैं ?

इन प्रश्नों के ज़रिए कवि पाठक की नाटकीय उपस्थिति ज़रूरी कर देता है और उसे यह सोचने के लिए विवश करता है कि क्या मृत्यु–प्रमाण पत्र के सहारे स्त्री का आबादी में न होने का मतलब यह भी मान लिया जाये कि वे लोगों की स्मृति में नहीं हैं :

क्या सिर्फ जीवित आदमियों पर टिकी है

जीवित आदमियों की दुनिया

अथवा अपने वर्तमान से इतिहास रच देने वाले, सांस्कृतिक जड़ों और जातीय विरासत से पहचान कराने वालों पर टिकी है :

वे अचानक कहीं से नहीं

बल्कि नील के किनारे–किनारे चलकर

पहुँची थीं यहाँ तक।

इस तरह मार दिए जाने वाले भी आततायियों की स्मृति से नहीं निकलते। ज़िन्दा जला दी गयी औरतों के वजूद और स्मृति की गवाही कुएँ, की जगत पर घड़े के निशान, शीशम के सफेद तने पर कुल्हाड़ी के दाग, बाँध की ढ़लान पर टिकाये पत्थर, दरवाजे, केश बांधने के रंगीन फीते, पपीते के पेड़, ताजा कटी घास, साँप मारने की बर्छी, चिराग, जानवर, घर, चने की सीझती दाल, गूँथा आटा, मिट्टी के बर्तन में रिसता नमक, दीवारें, आंगन जब सबूत बनकर देते हैं। तब इन घरों में रहने वालियों को ज़िन्दा जला दिये जाने की दहशत से तनाव और सघन हो जाता है और पाठक कसमसाहट महसूस करने लगता है। कुछ वैसे ही जैसे शहीदी कुँए में झाँकते हुए जलियांवाला में मारे गये लोगों की चीखें सुनाई देने लगती हैं।

जिस जमीन पर जिन्दा जलाकर हत्या कर दी गयी उसी जली जमीन से आने वाली संततियों को अपने सही दुश्मन की पहचान होती है। ऐसे लोग समय के हाशिए पर अपने संघर्ष, विद्रोह, मृत्यु और जीवन की सार्थकता की पहचान छोड़ जाते हैं। पूरी कविता में ज़िन्दा जला दिए जाने की दहशत पसरी पड़ी है जो कविता के विभिन्न संदर्भों के बीच अन्विति का काम करती है। अखबारों में लूट, बलात्कार, हत्या की घटनाएं हमें बेशक एक किस्सा, एक समाचार लगे लेकिन कवि के लिए वह एक पूरी जाति, उसके संस्कारों की हत्या है।

'ब्रूनो की बेटियाँ' कविता के केन्द्र में वर्तमान कानून व्यवस्था की मौजूदगी में समाज में शोषण के विरुद्ध संघर्ष करने वाली मज़दूर स्त्रियों की हत्या का प्रसंग है। इस केन्द्रीय स्थिति को गहराने के लिए कवि ने अनेक ब्यौरे दिए हैं, जिनके माध्यम से विभिन्न विचारों को उभारा गया है, जैसे समाज में उन स्त्रियों का अस्तित्व, उनके संघर्ष की क्षमता, संघर्ष का महत्व, समाज की प्रगति में उनके श्रम की हिस्सेदारी आदि। ये ब्यौरे उन मज़दूर स्त्रियों की हत्या से जुड़ कर कविता को एक इकाई में बाँधते हैं। इस प्रकार कविता में अन्विति का स्वरूप विचारात्मक है।

ब्रूनो की बेटियाँ कविता का कवि इस बात को लेकर तनावग्रस्त है कि कानून व्यवस्था के होते हुए भी शोषक वर्ग अपने विरुद्ध संघर्ष करने वालों को जिन्दा जला देने के लिए स्वतन्त्र है। कविता में आए मज़दूर स्त्रियों की हत्या के प्रसंग में तनाव कविता में इस रूप में उभरा है कि वे स्त्रियाँ अस्तित्वविहीन नहीं थीं। कवि ब्यौरों और संदर्भों के माध्यम से उन स्त्रियों के अस्तित्व के प्रमाण प्रस्तुत करता है :

वे राख और झूठ नहीं थीं

माताएँ थीं

और

वे माताएँ थीं

उनके भी नौ महीने थे

उन्होंने जिन बच्चों को जन्म दिया वे फालतू नहीं थे, आम लोगों की तरह ही वे भी सामान्य जीवन जी रही थीं, पूरे समाज की प्रगति में उनके श्रम की हिस्सेदारी थी। इसके बावजूद उनकी हत्या पर व्यवस्था का मौन रहना कविता में तनाव की सृष्टि करता है।

संघर्षरत स्त्रियों की यथार्थ स्थिति को अभिव्यक्त करने के लिए कवि ने स्थितियों के प्रति विचारात्मक व्यवहार को अपनाया है। वे मानते हैं कि सत्य को दफनाया या झुठलाया नहीं जा सकता, वह शाश्वत होता है। ब्रूनो की हत्या से उसके द्वारा प्रतिपादित सत्य मरा नहीं, ठीक उसी प्रकार उन मज़दूर स्त्रियों के दमन के बाद भी उनका संघर्ष समाप्त नहीं होगा। उनके विचार और उससे उपजा उनका विद्रोह अनंर्गल नहीं था। जिस प्रकार विभिन्न प्रक्रियाओं से गुजरकर शिशु का जन्म होता है उसी प्रकार उन स्त्रियों के विचार भी एक सहज प्रक्रिया से गुजर कर उभरे थे। उनके विचारों का यह प्रसव नाजायज नहीं था :

उदासीनता नहीं थी उनका गर्भ

ग़लती नहीं थी उनका गर्भ

आदत नहीं थी उनका गर्भ

कोई नशा कोई हमला नहीं था उनका गर्भ

'गर्भ' शब्द की आवृति स्त्री तक सीमित न होकर अनेक अर्थों और संदर्भों को खोलती है। अपने परिवेश से उदासीन होकर किसी ग्रन्थि के कारण उन्होंने परम्परावादियों के विरोध में प्रगतिशील विचार (गर्भ) को धारण नहीं किया। प्रत्येक व्यक्ति ऐसा नहीं कर सकता। विद्रोह हर आदमी की आदत है ऐसा नहीं माना जा सकता, इसे करने वाले कुछ खास ही होते हैं। कीर्ति पाने या चर्चित होने (नशा) के लिए ऐसा नहीं करते। स्वयं को स्थापित करने, सत्य कहने की कीमत चुकानी पड़ेगी, यह जानकर ये सत्ता और रूढ़ि–विरोधी विचार (गर्भ) को पालते हैं। जिस प्रकार आनुवांशिकी नियम से माता–पिता

के कुछ गुण संतान में स्वतः ही आ जाते हैं, उसी प्रकार इन लोगों की अगली विद्रोही पीढ़ी (गर्भ) भी उनका अनुसरण करती है। इसी अर्थ में ब्रूनो की बेटियाँ हैं इसीलिए उनकी माएँ थीं और वे स्वयं भी माताएँ हैं।

उनके प्रसव का कारण उदासीनता, व्यभिचार या भावुकता है, पूँजीपति वर्ग के इन आरोपों का खण्डन करते हुए कवि ने माना है कि उनका प्रसव उनकी जागरुकता की उपज था। उसका बच्चों को जन्म देना केवल जनसंख्या में वृद्धि करना मात्र नहीं था बल्कि अपने बच्चों के रूप में अपने संघर्ष को अपने बाद भी जीवित रखने का दृढ़ निश्चय था। जिस तरह ब्रूनो ने राजधर्म सत्ता के विरोध में मृत्यु दंड से भयभीत न होते हुए सत्य का प्रतिपादन किया उसी प्रकार उन मज़दूर स्त्रियों ने भी अपने को तपाकर, गला कर अपने संघर्ष को जन्म दिया। कवि इस बात पर बल देता है कि उनके विचारों को जन्म देने के लिए अनिवार्य परिस्थितियाँ समाज में मौजूद थीं। विद्रोही कैसे जन्म लेते हैं ? ब्रूनो मरकर भी कैसे पैदा होते रहते हैं ? इसकी पूरी स्क्रीनिंग आलोकधन्वा ने की है :

वे माताएँ थीं

उनके भी नौ महीने थे

किसी ह्वेल के भीतर नहीं – पूरी दुनिया में

पूरी दुनिया के नौ महीने

धार्मिक जड़ताओं के प्रतिपक्ष में वैज्ञानिक तथ्य, व्यवस्था की छद्मताओं के विरोध में तन्त्र की वास्तविकता, सामाजिक वर्जनाओं के मुकाबले निज की पहचान के लिए मुकम्मल समय की जरूरत होती है। तभी क्षणिक आवेग की भावुकता का त्याग कर वैचारिक आवेग के सहारे संघर्ष को सार्थक किया जा सकता है। कविता के अन्त तक आते–आते कवि का उग्र वामपंथी विचार शिखर पर पहुँच गया :

रानियाँ मिट गयीं

ज़ंग लगे टिन जितनी क़ीमत भी नहीं

रह गयी उनकी याद की

रानियाँ मिट गयीं

लेकिन क्षितिज तक फ़सल काट रही

औरतें

फसल काट रही हैं।

कवि की दृष्टि में संघर्षकामी, श्रमजीवी, सच के लिए मरने और जीने वाला आदमी देश–काल की सीमाओं से परे कालातीत हो जाता है। जब तक यह पृथ्वी है, मानव है श्रमशीलों के निशान और वे खुद ज़िन्दा रहेंगे। मौत के पसरे सन्नाटे और दहशत के बावजूद कवि का मुख्य सरोकार विद्रोही के हौंसलों, उसके न होने पर दूसरे विद्रोहियों के जन्म लेने की आस्था और उनकी शाश्वतता में विश्वास से जुड़ा रहा है। यह अलग बात है कि ब्रूनो, लड़कियों, स्त्रियों, ग्रामीणों के विविध संदर्भों को अन्वित मौत की दहशत ही करती है। सारे संदर्भ ब्रूनो को ज़िन्दा जला दिए जाने की केन्द्रीय घटना से ही अन्वित होते हैं। विभिन्न परिदृश्य, फलक, मनोभाव और संदर्भ इस केन्द्रीय घटना और केन्द्रीय प्रतीक ब्रूनो से जुड़ जाते है जिससे यह कविता एक संश्लिष्ट और मॉडल लम्बी कविता बन गयी है।

14.4 सारांश – इक्कीसवीं सदी की महत्वपूर्ण लम्बी कविता 'ब्रूनों की बेटियाँ' अतीत, वर्तमान और भविष्य में घटमान सच बोलने और उसकी कीमत चुकाने वालों के तनाव को रूपायित करने के साथ विद्रोहियों के प्रति आस्था और विश्वास के साथ समाप्त होने के बावजूद पाठकीय चेतना में चलती रहती है।

14.5 कठिन शब्द – छद्म व्यवस्था, वर्जना, कालातीत, संश्लिष्ट

14.6 अभ्यासार्थ प्रश्न –

प्र01 'ब्रूनों की बेटियाँ' के आधार पर दीर्घकारिक तनाव का विवेचना कीजिए।

.....

.....

.....

प्र02 स्त्री विमर्श की दृष्टि से 'ब्रूनों की बेटियाँ' पर अपने विचार रखिए।

.....

.....

.....

प्र03 लम्बी कविता के तत्वों के आधार पर 'ब्रूनों की बेटियाँ' की समीक्षा कीजिए।

.....

.....

.....

14.7 पठनीय पुस्तकें –

1) दुनिया रोज़ बनती है – आलोक धन्वा

2) लम्बी कविता : नये सन्दर्भ – डॉ. रजनी बाला